अध्याय १

श्री चैतन्य महाप्रभु की परवर्ती लीलाएँ

इस अध्याय में श्री चैतन्य महाप्रभु की मध्यकाल तथा अन्तिम छह वर्षों में सम्पन्न की गई समस्त लीलाओं का संक्षिप्त विवरण दिया गया है। इन सबका वर्णन संक्षेप में किया गया है। इस अध्याय में श्री चैतन्य महाप्रभु के उस भावावेश का भी वर्णन है, जो उन्होंने *यः कौमार-हरः* से प्रारम्भ होने वाले श्लोक को सुनाने पर प्रकट किया था। इस भावावेश की व्याख्या श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित श्लोक *प्रियः सोऽयं कृष्णः* में हुई है। श्री चैतन्य महाप्रभु ने इस श्लोक की रचना करने के लिए श्रील रूप गोस्वामी को विशेष आशीर्वाद दिया। इसके अतिरिक्त इस अध्याय में श्रील रूप गोस्वामी, श्रील सनातन गोस्वामी तथा श्रील जीव गोस्वामी द्वारा रचित अनेक ग्रन्थों का वर्णन भी मिलता है। इसी के साथ रामकेलि नामक गाँव में श्रील रूप गोस्वामी तथा श्रील सनातन गोस्वामी के साथ श्री चैतन्य महाप्रभु की भेंट का वर्णन हुआ है।

यस्य प्रसादादज्ञोऽपि सद्यः सर्व-ज्ञतां व्रजेत् ।
स श्री-चैतन्य-देवो मे भगवान्सम्प्रसीदतु ॥१॥

यस्य प्रसादादज्ञोऽपि सद्यः सर्व-ज्ञतां व्रजेत् ।
स श्री-चैतन्य-देवो मे भगवान्सम्प्रसीदतु ॥ १ ॥

यस्य—जिसकी; **प्रसादात्**—कृपा से; **अज्ञः अपि**—एक अज्ञानी भी; **सद्यः**—तत्क्षण; **सर्व-ज्ञताम्**—समस्त ज्ञान; **व्रजेत्**—प्राप्त कर सकता है; **सः**—वे; **श्री-चैतन्य-देवः**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **मे**—मुझ पर; **भगवान्**—भगवान्; **सम्प्रसीदतु**—वे अपनी अहैतुकी कृपा करें।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के आशीर्वाद मात्र से एक अज्ञानी व्यक्ति भी तुरन्त समस्त ज्ञान प्राप्त कर सकता है। अतएव मैं महाप्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि वे मुझ पर अपनी अहैतुकी कृपा करें।

वन्दे श्री-कृष्ण-चैतन्य-नित्यानन्दौ सहोदितौ ।
गौड़ोदये पुष्पवन्तौ चित्रौ शन्दौ तमो-नुदौ ॥ २॥

वन्दे श्री-कृष्ण-चैतन्य-नित्यानन्दौ सहोदितौ ।
गौड़ोदये पुष्पवन्तौ चित्रौ शन्दौ तमो-नुदौ ॥ २॥

वन्दे—मैं सादर नमस्कार करता हूँ; **श्रीकृष्ण-चैतन्य**—श्रीकृष्ण चैतन्य को; **नित्यानन्दौ**—और नित्यानन्द प्रभु को; **सह-उदितौ**—एक साथ उदित हुए; **गौड़-उदये**—गौड़ के पूर्व क्षितिज पर; **पुष्पवन्तौ**—सूर्य और चन्द्र इकट्ठे; **चित्रौ**—अद्‌भुत; **शम्-दौ**—आशीर्वाद देते हुए; **तमः-नुदौ**—अन्धकार मिटाते हुए।

अनुवाद

मैं श्रीकृष्ण चैतन्य और नित्यानन्द प्रभु को सादर प्रणाम करता हूँ, जो सूर्य और चन्द्रमा के समान हैं। वे गौड़ देश के क्षितिज पर अज्ञान के अन्धकार को दूर करने के लिए और इस प्रकार सबको अद्‌भुत आशीर्वाद देने के लिए एक साथ उदित हुए हैं।

जयतां सुरतौ पङ्गोर्मम मन्द-मतेर्गती ।
मत्सर्वस्व-पदाम्भोजौ राधा-मदन-मोहनौ ॥ ३॥

जयतां सुरतौ पङ्गोर्मम मन्द-मतेर्गती ।
मत्सर्वस्व-पदाम्भोजौ राधा-मदन-मोहनौ ॥ ३॥

जयताम्—जय हो; **सु-रतौ**—परम दयालु अथवा माधुर्य प्रेम में रत; **पङ्गोः**—उसका जो लंगड़ा हो; **मम**—मेरा; **मन्द-मतेः**—मन्दमति, मूर्ख; **गती**—आश्रय; **मत्**—मेरा; **सर्व-स्व**—सर्वस्व; **पद-अम्भोजौ**—जिनके चरणकमल; **राधा-मदन-मोहनौ**—राधारानी और मदन-मोहन।

अनुवाद

परम कृपालु राधा तथा मदनमोहन की जय हो! यद्यपि मैं लंगड़ा और

मूर्ख हूँ, फिर भी वे मेरे मार्गदर्शक हैं और उनके चरणकमल मेरे लिए सर्वस्व हैं।

दीव्यद्वृन्दारण्य-कल्प-द्रुमाधः-
श्रीमद्रत्नागार-सिंहासन-स्थौ ।
श्रीमद्राधा-श्रील-गोविन्द-देवौ
प्रेष्ठालीभिः सेव्यमानौ स्मरामि ॥ ४ ॥

दीव्यद्वृन्दारण्य-कल्प-द्रुमाधः-
श्रीमद्रत्नागार-सिंहासन-स्थौ ।
श्रीमद्राधा-श्रील-गोविन्द-देवौ
प्रेष्ठालीभिः सेव्यमानौ स्मरामि ॥ ४ ॥

दीव्यत्—चमकते हुए; **वृन्दा-अरण्य**—वृन्दावन के वन में; **कल्प-द्रुम**—कल्पवृक्ष; **अधः**—नीचे; **श्रीमत्**—अत्यन्त सुन्दर; **रत्न-आगार**—रत्न-जड़ित मन्दिर में; **सिंह-आसन-स्थौ**—सिहांसन पर विराजमान; **श्रीमत्**—अत्यन्त सुन्दर; **राधा**—श्रीमती राधारानी; **श्रील-गोविन्द-देवौ**—और श्री गोविन्द देव; **प्रेष्ठ-आलीभिः**—सर्वाधिक अन्तरंग पाषर्दों द्वारा; **सेव्यमानौ**—सेवित; **स्मरामि**—मैं स्मरण करता हूँ।

अनुवाद

वृन्दावन में कल्पवृक्ष के नीचे, रत्नों के मन्दिर के भीतर श्री श्री राधा-गोविन्द एक देदीप्यमान सिंहासन पर विराजमान हैं और उनके सर्वाधिक अन्तरंग पार्षद उनकी सेवा में लगे हुए हैं। मैं उन्हें मेरे विनम्र प्रणाम करता हूँ।

श्रीमान्रास-रसारम्भी वंशी-वट-तट-स्थितः ।
कर्षन्वेणु-स्वनैर्गोपीर्गोपीनाथः श्रियेऽस्तु नः ॥ ५ ॥

श्रीमान्रास-रसारम्भी वंशी-वट-तट-स्थितः ।
कर्षन्वेणु-स्वनैर्गोपीर्गोपीनाथः श्रियेऽस्तु नः ॥ ५ ॥

श्रीमान्—सर्वोच्च सुन्दर रूप; **रास**—रास नृत्य का; **रस-आरम्भी**—रस के आरम्भ करने वाले; **वंशी-वट**—वंशीवट, अत्यन्त विख्यात स्थान; **तट**—यमुना के तट पर; **स्थितः**—स्थित; **कर्षन्**—आकर्षक; **वेणु-स्वनैः**—बांसुरी की ध्वनि से; **गोपीः**—सारी गोपियाँ; **गोपी-नाथः**—सारी गोपियों के स्वामी; **श्रिये**—प्रेम का ऐश्वर्य; **अस्तु**—हो; **नः**—हम पर।

अनुवाद

अपने वंशी-वादन से समस्त गोपियों को आकृष्ट करने वाले एवं वंशीवट में यमुना नदी के तट पर अत्यन्त मधुर रासनृत्य को आरम्भ करने वाले गोपीनाथजी हम सब पर दयालु हों।

जय जय गौरचन्द्र जय कृपा-सिन्धु ।
जय जय शची-सुत जय दीन-बन्धु ॥ ६ ॥

जय जय गौरचन्द्र जय कृपा-सिन्धु ।
जय जय शची-सुत जय दीन-बन्धु ॥ ६ ॥

जय जय—जय हो; **गौरचन्द्र**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **जय**—जय हो; **कृपा-सिन्धु**—कृपा सिंधु की; **जय जय**—आप की जय हो; **शची-सुत**—शची माता के पुत्र; **जय**—आप की जय हो; **दीन-बन्धु**—पतितों के मित्र, दीनबन्धु।

अनुवाद

दया के सिन्धु श्री गौरहरि की जय हो! हे शचीदेवी के पुत्र! आपकी जय हो, क्योंकि आप समस्त पतितात्माओं के एकमात्र मित्र हैं।

जय जय नित्यानन्द जयाद्वैत-चन्द्र ।
जय श्रीवासादि जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ ७ ॥

जय जय नित्यानन्द जयाद्वैत-चन्द्र ।
जय श्रीवासादि जय गौर-भक्त-वृन्द ॥ ७ ॥

जय जय—जय हो; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु की; **जय अद्वैत-चन्द्र**—अद्वैत प्रभु की जय हो; **जय**—जय हो; **श्रीवास-आदि**—श्रीवास ठाकुर आदि भक्तों की; **जय गौर-भक्त-वृन्द**—भगवान् गौरसुन्दर के भक्तों की जय हो।

अनुवाद

श्री नित्यानन्द प्रभु तथा अद्वैत प्रभु की जय हो! श्रीवास ठाकुर आदि श्री चैतन्य महाप्रभु के सभी भक्तों की जय हो!

पूर्वे कहिलुँ आदि-लीलार सूत्र-गण ।
याहा विस्तारियाछेन दास-वृन्दावन ॥ ८ ॥

पूर्वे कहिलुँ आदि-लीलार सूत्र-गण ।
ग्राहा विस्तारियाछेन दास-वृन्दावन ॥ ८ ॥

पूर्वे—पहले; **कहिलुँ**—मैंने वर्णन किया है; **आदि-लीलार**—आदि लीला की; **सूत्र-गण**—रूपरेखा; **ग्राहा**—जो; **विस्तारियाछेन**—विस्तार से व्याख्यायित की गई है; **दास-वृन्दावन**—वृन्दावन दास ठाकुर।

अनुवाद

इसके पहले मैंने आदिलीला (प्रारम्भिक लीलाएँ) का संक्षेप में वर्णन किया है, जिसका विस्तृत वर्णन वृन्दावन दास ठाकुर पहले ही कर चुके हैं।

অতএব তার আমি সূত্র-মাত্র কৈলুঁ ।
যে কিছু বিশেষ, সূত্র-মধ্যেই কহিলুঁ ॥ ৯ ॥
अतएव तार आमि सूत्र-मात्र कैलुँ ।
ग्रे किछु विशेष, सूत्र-मध्येइ कहिलुँ ॥ ९ ॥

अतएव—इसलिये; **तार**—उसकी; **आमि**—मैंने; **सूत्र-मात्र**—रूपरेखा मात्र; **कैलुँ**—दी है; **ग्रे किछु**—जो कुछ भी; **विशेष**—विशेष; **सूत्र-मध्येइ कहिलुँ**—रूपरेखा में पहले वर्णन किया है।

अनुवाद

इसीलिए मैंने उन घटनाओं को केवल संक्षेप में दिया है और जो कुछ विशेष कहने योग्य था, वह भी उसी के साथ वर्णित है।

এবে কহি শেষ-লীলার মুখ্য সূত্র-গণ ।
প্রভুর অশেষ লীলা না যায় বর্ণন ॥ ১০ ॥
एबे कहि शेष-लीलार मुख्य सूत्र-गण ।
प्रभुर अशेष लीला ना ग्राय वर्णन ॥ १० ॥

एबे—अब; **कहि**—मैं वर्णन करता हूँ; **शेष-लीलार**—अन्तिम के लीलाओं का; **मुख्य**—मुख्य; **सूत्र-गण**—रूपरेखाएं; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु की; **अशेष**—असीम; **लीला**—लीलाएँ; **ना ग्राय वर्णन**—उनका वर्णन करना सम्भव नहीं है।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु की अनन्त लीलाओं का वर्णन कर पाना सम्भव नहीं है, किन्तु अब मैं मुख्य घटनाएँ बताना चाहता हूँ और अन्त में घटित होने वाली लीलाओं का सार प्रस्तुत करना चाहता हूँ।

তার মধ্যে যেই ভাগ দাস-বৃন্দাবন ।
'চৈতন্য-মঙ্গলে' বিস্তারি' করিলা বর্ণন ॥১১॥
সেই ভাগের ইহাঁ সূত্র-মাত্র লিখিব ।
তাহাঁ যে বিশেষ কিছু, ইহাঁ বিস্তারিব ॥১২॥

তার মধ্যে য়েই ভাগ দাস-বৃন্দাবন ।
'চৈতন্য-মঙ্গলে' বিস্তারি' করিলা বর্ণন ॥ ১১ ॥
সেই ভাগের ইহাঁ সূত্র-মাত্র লিখিব ।
তাহাঁ য়ে বিশেষ কিছু, ইহাঁ বিস্তারিব ॥ ১২ ॥

তার মধ্যে—उनमें; **য়েই**—कौन सा; **ভাগ**—भाग; **দাস-বৃন্দাবন**—श्रील वृन्दावन दास ठाकुर; **চৈতন্য-মঙ্গলে**—*चैतन्य मंगल* नामक उनके पुस्तक में; **বিস্তারি'**—विस्तार से; **করিলা বর্ণন**—वर्णन किया है; **সেই ভাগের**—उस भाग की; **ইহাঁ**—यहाँ इस पुस्तक में; **সূত্র-মাত্র**—रूपरेखा मात्र; **লিখিব**—मैं लिखूंगा; **তাহাঁ**—वहाँ; **য়ে**—जो कुछ; **বিশেষ**—विशेष विवरण; **কিছু**—कुछ; **ইহাঁ বিস্তারিব**—मैं विस्तार से वर्णन करूँगा।

अनुवाद

श्रील वृन्दावन दास ठाकुर ने अपनी पुस्तक *चैतन्य मंगल* में जिन लीलाओं का विस्तार से वर्णन किया है, उसे मैं केवल संक्षेप में कहूँगा। किन्तु जो घटनाएँ विशिष्ट हैं, उनका मैं बाद में विस्तार करूँगा।

চৈতন্য-লীলার ব্যাস—দাস বৃন্দাবন ।
তাঁর আজ্ঞায় করোঁ তাঁর উচ্ছিষ্ট চর্বণ ॥১৩॥

চৈতন্য-লীলার ব্যাস—দাস বৃন্দাবন ।
তাঁর আজ্ঞায় করোঁ তাঁর উচ্ছিষ্ট চর্বণ ॥ ১৩ ॥

চৈতন্য-লীলার ব্যাস—भगवान् चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं के संकलनकर्ता, श्री

व्यासदेव; **दास वृन्दावन**—वृन्दावन दास ठाकुर; **ताँर**—उनकी; **आज्ञाय**—आज्ञा से; **करों**—मैं करता हूँ; **ताँर**—उनके; **उच्छिष्ट**—उच्छिष्ट भोजन का; **चर्वण**—चबाना।

अनुवाद

वास्तव में श्री चैतन्य महाप्रभु की लीलाओं के प्रामाणिक संकलनकर्ता तो श्रील वृन्दावन दास हैं, जो व्यासदेव के अवतार हैं। उनकी आज्ञा से ही मैं उनके द्वारा छोड़े गये उच्छिष्ट को पुनः चबाने का प्रयास कर रहा हूँ।

ভক্তি করি' শিরে ধরি তাঁহার চরণ ।
শেষ-লীলার সূত্র-গণ করিয়ে বর্ণন ॥ ১৪॥

ভক্তি করি' শিরে ধরি তাঁহার চরণ ।
শেষ-লীলার সূত্র-গণ করিয়ে বর্ণন ॥ ১৪॥

ভক্তি করি'—अत्यन्त भक्ति सहित; **শিরে**—मेरे सिर पर; **ধরি**—मैं रखता हूँ; **তাঁহার**—उनके; **চরণ**—चरणकमल; **শেষ-লীলার**—अन्तिम लीलाओं की; **সূত্র-গণ**—रूपरेखा का; **করিয়ে**—मैं करता हूँ; **বর্ণন**—वर्णन।

अनुवाद

अब मैं अत्यन्त भक्तिपूर्वक उनके चरणकमलों को अपने मस्तक पर धारण करके महाप्रभु की अन्तिम लीलाओं (शेषलीला) का संक्षिप्त वर्णन करूँगा।

চব্বিশ বত্সর প্রভুর গৃহে অবস্থান ।
তাহাঁ যে করিলা লীলা—'আদি-লীলা' নাম ॥ ১৫॥

চব্বিশ বত্সর প্রভুর গৃহে অবস্থান ।
তাহাঁ যে করিলা লীলা—'আদি-লীলা' নাম ॥ ১৫॥

চব্বিশ বত্সর—चौबीस वर्षों तक; **প্রভুর**—प्रभु के; **গৃহে**—घर पर; **অবস্থান**—निवास करके; **তাহাঁ**—वहाँ; **যে**—जो कुछ भी; **করিলা**—उन्होंने कीं; **লীলা**—लीलाएँ; **আদি-লীলা নাম**—आदिलीला कहलाती हैं।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु चौबीस वर्षों तक घर पर रहे और इस काल में उन्होंने जो भी लीलाएँ कीं, वे आदिलीला के नाम से जानी जाती हैं।

চব্বিশ বত্সর শেষে যেই মাঘ-মাস ।
তার শুক্ল-পক্ষে প্রভু করিলা সন্ন্যাস ॥ ১৬॥

চব্বিশ বত্সর শেষে যেই মাঘ-মাস ।
তার শুক্ল-পক্ষে প্রভু করিলা সন্ন্যাস ॥ ১৬॥

चब्बिश वत्सर—उन चौबीस वर्षों के; **शेषे**—अन्त में; **येइ**—जो; **माघ-मास**—माघ मास (जनवरी-फरवरी); **तार**—उस मास के; **शुक्ल-पक्षे**—शुक्ल पक्ष में; **प्रभु**—महाप्रभु; **करिला**—स्वीकार किया; **सन्यास**—संन्यास आश्रम।

अनुवाद

चौबीस वर्ष पूरे होने पर माघ मास के शुक्लपक्ष में महाप्रभु ने संन्यास ग्रहण किया।

সন্ন্যাস করিয়া চব্বিশ বত্সর অবস্থান ।
তাহাঁ যেই লীলা, তার 'শেষ-লীলা' নাম ॥ ১৭॥

সন্ন্যাস করিয়া চব্বিশ বত্সর অবস্থান ।
তাহাঁ যেই লীলা, তার 'শেষ-লীলা' নাম ॥ ১৭॥

सन्यास करिया—संन्यास लेने के पश्चात्; **चब्बिश वत्सर**—चौबीस वर्ष; **अवस्थान**—इस भौतिक संसार में रहकर; **ताहाँ**—उस भाग में; **येइ लीला**—जो भी लीलाएँ (की गई); **तार**—उन लीलाओं का; **शेष-लीला**—अन्तिम लीलाएँ; **नाम**—कहलाती हैं।

अनुवाद

संन्यास ग्रहण करने के बाद चैतन्य महाप्रभु अगले चौबीस वर्षों तक इस भौतिक जगत् में रहे। इस काल में उन्होंने जो भी लीलाएँ कीं, वे *शेषलीला* कहलाती हैं अर्थात् ऐसी लीलाएँ जो अन्त में घटित हुईं।

শেষ-লীলার 'মধ্য' 'অন্ত্য',—দুই নাম হয় ।
লীলা-ভেদে বৈষ্ণব সব নাম-ভেদ কয় ॥ ১৮॥

शेष-लीलार 'मध्य' 'अन्त्य',—दुइ नाम हय ।
लीला-भेदे वैष्णव सब नाम-भेद कय ॥ १८ ॥

शेष-लीलार—शेष लीला का अथवा अन्तिम लीलाओं का; **मध्य**—मध्य; **अन्त्य**—अन्त्य; **दुइ**—दोनों; **नाम**—नाम; **हय**—हैं; **लीला-भेदे**—लीलाओं के भेद से; **वैष्णव**—भगवान् के भक्त; **सब**—सब; **नाम-भेद**—नाम भेद; **कय**—कहते हैं।

अनुवाद

अन्तिम चौबीस वर्षों में सम्पन्न होने वाली लीलाएँ मध्य तथा अन्त्य—इन दो नामों से जानी जाती हैं। इन्हीं विभागों के अनुसार सारे भक्त महाप्रभु की लीलाओं का उल्लेख करते हैं।

तार मध्ये छय वत्सर—गमनागमन ।
नीलाचल-गौड़-सेतुबन्ध-वृन्दावन ॥ १९ ॥

तार मध्ये छय वत्सर—गमनागमन ।
नीलाचल-गौड़-सेतुबन्ध-वृन्दावन ॥ १९ ॥

तार मध्ये—उस अवधि में; **छय वत्सर**—छः वर्ष के लिए; **गमन-आगमन**—आना जाना; **नीलाचल**—जगन्नाथ पुरी से; **गौड़**—बंगाल को; **सेतुबन्ध**—और कुमारी अन्तरीप से; **वृन्दावन**—वृन्दावन धाम को।

अनुवाद

अन्तिम चौबीस वर्षों में से छह वर्षों तक श्री चैतन्य महाप्रभु ने जगन्नाथ पुरी से लेकर बंगाल और कुमारी अन्तरीप से लेकर वृन्दावन तक सारे भारतवर्ष में भ्रमण किया।

ताहाँ येई लीला, तार 'मध्य-लीला' नाम ।
तार पाछे लीला—'अन्त्य-लीला' अभिधान ॥ २० ॥

ताहाँ येइ लीला, तार 'मध्य-लीला' नाम ।
तार पाछे लीला—'अन्त्य-लीला' अभिधान ॥ २० ॥

ताहाँ—उन स्थानों में; **येइ लीला**—सारी लीलाएँ; **तार**—उनकी; **मध्य-लीला**—मध्य लीला; **नाम**—नामक; **तार पाछे लीला**—उस अवधि के बाद की लीलाएँ; **अन्त्य-लीला**—अन्त्य लीला; **अभिधान**—कहलाती हैं।

अनुवाद

इन स्थानों में महाप्रभु ने जितनी लीलाएँ कीं, वे *मध्य-लीला* कहलाती हैं और उसके बाद की जितनी लीलाएँ हैं, वे *अन्त्य-लीला* कहलाती हैं।

'আদি-লীলা', 'মধ্য-লীলা', 'অন্ত্য-লীলা' আর ।
এবে 'মধ্য-লীলার' কিছু করিয়ে বিস্তার ॥২১॥

'आदि-लीला', 'मध्य-लीला', 'अन्त्य-लीला' आर ।
एबे 'मध्य-लीलार' किछु करिये विस्तार ॥ २१ ॥

आदि-लीला मध्य-लीला अन्त्य-लीला आर—अत: तीन लीलाएँ है : आदि लीला, मध्य लीला और अन्त्य लीला; **एबे**—अब; **मध्य-लीलार**—मध्य लीला का; **किछु**—कुछ; **करिये**—मैं करूँगा; **विस्तार**—विस्तार।

अनुवाद

इसीलिए महाप्रभु की लीलाओं को तीन कालों में विभाजित किया जाता है—आदि-लीला, मध्य-लीला तथा अन्त्य-लीला। अब मैं मध्य-लीला का विस्तारपूर्वक वर्णन करूँगा।

অষ্টাদশ-বর্ষ কেবল নীলাচলে স্থিতি ।
আপনি আচরি' জীবে শিখাইলা ভক্তি ॥২২॥

अष्टादश-वर्ष केवल नीलाचले स्थिति ।
आपनि आचरि' जीवे शिखाइला भक्ति ॥ २२ ॥

अष्टादश-वर्ष—अठारह वर्ष तक; **केवल**—केवल; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी में; **स्थिति**—रहकर; **आपनि**—स्वयं; **आचरि'**—व्यवहार करके; **जीवे**—जीवों को; **शिखाइला**—सिखाई; **भक्ति**—भक्ति।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु अठारह वर्षों तक लगातार जगन्नाथ पुरी में रहे और उन्होंने अपने खुद के आचरण से सारे जीवों को भक्तियोग का उपदेश दिया।

তার মধ্যে ছয় বৎসর ভক্ত-গণ-সঙ্গে ।
প্রেম-ভক্তি প্রবর্তাইলা নৃত্য-গীত-রঙ্গে ॥২৩॥

তার মধ্যে ছয় বৎসর ভক্ত-গণ-সঙ্গে ।
প্রেম-ভক্তি প্রবর্তাইলা নৃত্য-গীত-রঙ্গে ॥ ২৩॥

তার মধ্যে—উস অবধি में; **ছয় বৎসর**—छः वर्ष तक; **ভক্ত-গণ-সঙ্গে**—भक्तों के संग; **প্রেম-ভক্তি**—प्रेमभक्ति; **প্রবর্তাইলা**—शुरू की; **নৃত্য-গীত-রঙ্গে**—कीर्तन और नृत्य सम्बन्धी।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने जगन्नाथ पुरी में इन अठारह वर्षों में से छह वर्ष अपने अनेक भक्तों के साथ बिताये। उन्होंने कीर्तन तथा नृत्य द्वारा भगवान् की प्रेमाभक्ति का प्रवर्तन किया।

নিত্যানন্দ-গোসাঞিরে পাঠাইল গৌড়-দেশে ।
তেঁহো গৌড়-দেশ ভাসাইল প্রেম-রসে ॥২৪॥

নিত্যানন্দ-গোসাঞিরে পাঠাইল গৌড়-দেশে ।
তেঁহো গৌড়-দেশ ভাসাইল প্রেম-রসে ॥ ২৪॥

নিত্যানন্দ-গোসাঞিরে—नित्यानन्द गोस्वामी; **পাঠাইল**—भेजे; **গৌড়-দেশে**—बंगाल को; **তেঁহো**—उन्होंने; **গৌড়-দেশ**—गौड़ देश अथवा बंगाल नामक क्षेत्र में; **ভাসাইল**—आप्लावित किया; **প্রেম-রসে**—कृष्ण-प्रेम के रस से।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने नित्यानन्द प्रभु को जगन्नाथ पुरी से बंगाल भेजे, जो गौड़ देश के नाम से प्रसिद्ध है। श्री नित्यानन्द प्रभु ने भगवान् की दिव्य प्रेमाभक्ति से इस देश को आप्लावित कर दिया।

সহজেই নিত্যানন্দ—কৃষ্ণ-প্রেমোদ্দাম ।
প্রভু-আজ্ঞায় কৈল যাহাঁ তাহাঁ প্রেম-দান ॥২৫॥

সহজেই নিত্যানন্দ—কৃষ্ণ-প্রেমোদ্দাম ।
প্রভু-আজ্ঞায় কৈল যাহাঁ তাহাঁ প্রেম-দান ॥ ২৫॥

সহজেই—स्वभाव से; **নিত্যানন্দ**—नित्यानन्द प्रभु; **কৃষ্ণ-প্রেম-উদ্দাম**—भगवान् कृष्ण

की दिव्य प्रेममयी सेवा के लिये अत्यन्त उत्साहित; **प्रभु-आज्ञाय**—प्रभु की आज्ञा से; **कैल**—किया; **याहाँ ताहाँ**—जहाँ-तहाँ; **प्रेम-दान**—उस प्रेम का वितरण।

अनुवाद

श्री नित्यानन्द प्रभु स्वभाव से भगवान् कृष्ण की दिव्य प्रेमाभक्ति करने के लिए अत्यधिक उत्साहित रहते हैं। अतएव जब श्री चैतन्य महाप्रभु का आदेश हुआ, तो उन्होंने इस प्रेमाभक्ति का सर्वत्र वितरण किया।

তাঁহার চরণে মোর কোটি নমস্কার ।
চৈতন্যের ভক্তি যেঁহো লওয়াইল সংসার ॥২৬॥

তাঁহার চরণে মোর কোটি নমস্কার ।
চৈতন্যের ভক্তি যেঁহো লওয়াইল সংসার ॥ ২৬ ॥

তাঁহার চরণে—उनके चरणकमलों को; **मोर**—मेरा; **कोटि**—कोटि; **नमस्कार**—प्रणाम; **चैतन्येर**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु की; **भक्ति**—भक्ति; **येंहो**—जिन्होंने; **लओयाइल**—करवाया; **संसार**—सारा जगत्।

अनुवाद

मैं उन श्री नित्यानन्द प्रभु के चरणकमलों में असंख्य प्रणाम करता हूँ, जो इतने दयालु हैं कि उन्होंने श्री चैतन्य महाप्रभु की भक्ति को सारे विश्व में प्रचारित किया।

চৈতন্য-গোসাঞি যাঁরে বলে 'বড় ভাই' ।
তেঁহো কহে, মোর প্রভু—চৈতন্য-গোসাঞি ॥২৭॥

চৈতন্য-গোসাঞি যাঁরে বলে 'বড় ভাই' ।
তেঁহো কহে, মোর প্রভু—চৈতন্য-গোসাঞি ॥ ২৭ ॥

চৈতন্য-গোসাঞি—चैतन्य महाप्रभु; **याँरे**—जिनको; **बले**—कहते हैं; **बड़ भाइ**—बड़ा भाई; **तेंहो**—वे; **कहे**—कहते हैं; **मोर प्रभु**—मेरे प्रभु; **चैतन्य-गोसाञि**—परम स्वामी, चैतन्य महाप्रभु।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु श्री नित्यानन्द प्रभु को अपना बड़ा भाई कहकर

पुकारते थे, जबकि नित्यानन्द प्रभु चैतन्य महाप्रभु को अपने स्वामी कहा करते थे।

यद्यपि आपनि हय़े प्रभु बलराम ।
तथापि चैतन्येर करे दास-अभिमान ॥२८॥

य़द्यपि आपनि हये प्रभु बलराम ।
तथापि चैतन्येर करे दास-अभिमान ॥ २८ ॥

य़द्यपि—यद्यपि; **आपनि**—स्वयं; **हये**—हैं; **प्रभु**—प्रभु; **बलराम**—बलराम; **तथापि**—तथापि; **चैतन्येर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **करे**—स्वीकार करते हैं; **दास-अभिमान**—नित्य दास का भाव।

अनुवाद

यद्यपि नित्यानन्द प्रभु स्वयं बलराम हैं, तथापि वे अपने आपको सदैव श्री चैतन्य महाप्रभु के नित्य दास मानते हैं।

'चैतन्य' सेव, 'चैतन्य' गाओ, लओ 'चैतन्य'-नाम ।
'चैतन्ये' य़े भक्ति करे, सेइ मोर प्राण ॥२९॥

'चैतन्य' सेव, 'चैतन्य' गाओ, लओ 'चैतन्य'-नाम ।
'चैतन्ये' य़े भक्ति करे, सेइ मोर प्राण ॥ २९ ॥

चैतन्य सेव—चैतन्य महाप्रभु की सेवा करो; **चैतन्य गाओ**—चैतन्य महाप्रभु का कीर्तन करो; **लओ**—सदा लो; **चैतन्य-नाम**—चैतन्य महाप्रभु का नाम; **चैतन्ये**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **य़े**—जो कोई; **भक्ति**—भक्ति; **करे**—करता है; **सेइ**—वही व्यक्ति; **मोर**—मेरा; **प्राण**—प्राण और आत्मा।

अनुवाद

नित्यानन्द प्रभु हर एक से श्री चैतन्य महाप्रभु की सेवा करने, उनकी महिमा का कीर्तन करने तथा उनका नाम उच्चारण करने का आग्रह करते थे। वे उस व्यक्ति को अपने प्राणों के तुल्य समझते थे, जो श्री चैतन्य महाप्रभु की भक्तिमय सेवा करता था।

এই মত লোকে চৈতন্য-ভক্তি লওয়াইল ।
দীন-হীন, নিন্দক, সবারে নিস্তারিল ॥৩০॥

এइ মত লোকে চৈতন্য-ভক্তি লওয়াইল ।
দীন-হীন, নিন্দক, সবারে নিস্তারিল ॥ ৩০ ॥

এइ মত—इस प्रकार; **লোকে**—सामान्य जन; **চৈতন্য**—चैतन्य महाप्रभु की; **ভক্তি**—भक्ति; **লওয়াইল**—उन्होंने स्वीकार करवाई; **দীন-হীন**—दीन पतित आत्मा; **নিন্দক**—निन्दक; **সবারে**—सब का ; **নিস্তারিল**—उन्होंने उद्धार किया।

अनुवाद

इस प्रकार श्रील नित्यानन्द प्रभु ने बिना भेदभाव के हर एक को श्री चैतन्य-सम्प्रदाय में सम्मिलित किया। ऐसा करने से पतितात्माओं तथा निन्दकों का भी उद्धार हो गया।

তবে প্রভু ব্রজে পাঠাইল রূপ-সনাতন ।
প্রভু-আজ্ঞায় দুই ভাই আইলা বৃন্দাবন ॥৩১॥

তবে প্রভু ব্রজে পাঠাইল রূপ-সনাতন ।
প্রভু-আজ্ঞায় দুই ভাই আইলা বৃন্দাবন ॥ ৩১ ॥

তবে—तत्पश्चात्; **প্রভু**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **ব্রজে**—वृन्दावन धाम को; **পাঠাইল**—भेजे; **রূপ-সনাতন**—दोनों भाई रूप गोस्वामी तथा सनातन गोस्वामी को; **প্রভু-আজ্ঞায়**—श्री चैतन्य महाप्रभु की आज्ञा से; **দুই ভাই**—दोनों भाई; **আইলা**—आये; **বৃন্দাবন**—वृन्दावन धाम।

अनुवाद

तत्पश्चात् श्री चैतन्य महाप्रभु ने श्रील रूप गोस्वामी तथा श्रील सनातन गोस्वामी दोनों भाईयों को व्रज भेजे। उनके आदेश से वे श्री वृन्दावन धाम गये।

ভক্তি প্রচারিয়া সর্ব-তীর্থ প্রকাশিল ।
মদন-গোপাল-গোবিন্দের সেবা প্রচারিল ॥৩২॥

ভক্তি প্রচারিয়া সর্ব-তীর্থ প্রকাশিল ।
মদন-গোপাল-গোবিন্দের সেবা প্রচারিল ॥ ৩২ ॥

भक्ति प्रचारिया—भक्ति का प्रचार करते हुए; **सर्व-तीर्थ**—सभी तीर्थ-स्थान; **प्रकाशिल**—खोजे; **मदन-गोपाल**—श्री राधा-मदनमोहन की; **गोविन्देर**—श्री राधा-गोविन्दजी की; **सेवा**—सेवा का; **प्रचारिल**-आरम्भ की ।

अनुवाद

वृन्दावन जाकर इन दोनों भाइयों ने भक्ति का प्रचार किया और अनेक तीर्थस्थानों की खोज की। उन्होंने विशेष रूप से मदनमोहन तथा गोविन्दजी की सेवा का शुभारम्भ किया।

नाना शास्त्र आनि' कैला भक्ति-ग्रन्थ सार ।
मूढ़ अधम-जनेरे तेंहो करिला निस्तार ॥३३॥

नाना शास्त्र आनि' कैला भक्ति-ग्रन्थ सार ।
मूढ़ अधम-जनेरे तेंहो करिला निस्तार ॥ ३३ ॥

नाना शास्त्र—विभिन्न शास्त्र; **आनि'**—इकट्ठा करके; **कैला**—संकलित किए; **भक्ति-ग्रन्थ**—भक्ति पर ग्रन्थों का; **सार**—सार; **मूढ़**—मूढ़; **अधम-जनेरे**—पतित आत्माओं का; **तेंहो**—उन्होंने; **करिला निस्तार**—उद्धार किया।

अनुवाद

रूप गोस्वामी तथा सनातन गोस्वामी दोनों ने वृन्दावन में अनेक शास्त्र एकत्र किये और भक्ति विषयक अनेक शास्त्रों का संकलन करके इनका सार प्रस्तुत किया। इस प्रकार उन्होंने सारे धूर्तों तथा पतितों का उद्धार किया।

तात्पर्य

श्रील श्रीनिवास आचार्य का एक भजन है :

नानाशास्त्रविचारणैकनिपुणौ सद्धर्मसंस्थापकौ
लोकानां हितकारिणौ त्रिभुवने मान्यौ शरण्याकरौ।
राधाकृष्णपदारविन्दभजनानन्देन मत्तालिकौ
वन्दे रूपसनातनौ रघुयुगौ श्रीजीव गोपालकौ॥

श्रील रूप और श्रील सनातन गोस्वामी के निर्देशन में छः गोस्वामियों ने विभिन्न वैदिक ग्रंथों का अध्ययन किया और उनका सार, भगवद्-भक्ति,

एकत्रित की। इसका अर्थ यह है कि सभी गोस्वामियों ने वैदिक ग्रंथों की सहायता से भक्ति विषयक अनेक शास्त्रों की रचना की। भक्ति कोई भावुकतापूर्ण कार्य नहीं है। वैदिक ज्ञान का सार भक्ति है, जिसकी पुष्टि *भगवद्गीता* (१५.१५) में की गई है—*वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्यः।* समस्त वैदिक साहित्य का लक्ष्य कृष्ण को समझना है और भक्ति के माध्यम से कृष्ण को किस प्रकार समझे जाय, इसकी व्याख्या श्रील रूप तथा सनातन गोस्वामी ने समस्त वैदिक साहित्य के साक्ष्य के आधार पर की है। उन्होंने इसे इतनी सरलता से प्रस्तुत किया है कि गोस्वामियों के मार्गदर्शन में भक्ति के माध्यम से धूर्त या निपट मूर्ख भी तर सकता है।

प्रभु आज्ञाय कैल सब शास्त्रेर विचार ।
व्रजेर निगूढ़ भक्ति करिल प्रचार ॥ ३४॥

प्रभु आज्ञाय कैल सब शास्त्रेर विचार ।
व्रजेर निगूढ़ भक्ति करिल प्रचार ॥ ३४॥

प्रभु आज्ञाय—श्री चैतन्य महाप्रभु की आज्ञा से; **कैल**—उन्होंने किया; **सब शास्त्रेर**—सभी शास्त्रों का; **विचार**—विश्लेषणात्मक अध्ययन; **व्रजेर**—श्री वृन्दावन धाम का; **निगूढ़**—अत्यन्त गूढ, रहस्यपूर्ण; **भक्ति**—भक्ति; **करिल**—किया; **प्रचार**—प्रचार।

अनुवाद

इन गोस्वामियों ने समस्त गुह्य वैदिक साहित्य के विश्लेषणात्मक अध्ययन के आधार पर भक्ति का प्रचार किया। यह सब श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेश की पूर्ति के निमित्त था। इस तरह कोई भी वृन्दावन की सर्वाधिक गुह्य भक्ति को समझ सकता है।

तात्पर्य

इससे यह सिद्ध होता है कि प्रामाणिक भक्ति वैदिक साहित्य के निष्कर्षों पर आधारित होती है। यह *प्राकृत-सहजिया* लोगों द्वारा प्रदर्शित भावुकता पर आधारित नहीं होती। प्राकृत-सहजिया लोग वैदिक साहित्य का सहारा नहीं लेते। ये लम्पट, स्त्रियों की खोज में रहने वाले तथा गांजा पीने वाले होते हैं। कभी-कभी ये नाटक करके, आँखों में आँसू भरकर भगवान् के लिए विलाप

करते हैं। अवश्य ही, इन आँसुओं से शास्त्रों के सारे निष्कर्ष धुल जाते हैं। ये प्राकृत-सहजिए इतना भी अनुभव नहीं करते कि वे श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेशों की अवहेलना कर रहें हैं, जिन्होंने स्पष्ट रूप से कहा था कि वृन्दावन तथा वृन्दावन-लीलाओं को समझने के लिए मनुष्य को शास्त्रों (वैदिक साहित्य) का पर्याप्त ज्ञान होना चाहिए। *श्रीमद्भागवत* (१.२.१२) का कथन है— *भक्त्या श्रुत-गृहीतया*—अर्थात् भक्ति वैदिक ज्ञान से अर्जित की जा सकती है। *तच्छ्रद्दधानाः मुनयः।* जो भक्त वास्तव में गम्भीर हैं, वे वैदिक साहित्य के श्रवण द्वारा भक्ति प्राप्त करते हैं (*भक्त्या श्रुत-गृहीतया*)। ऐसा नहीं है कि भावुकता से कोई नई चीज बनाकर, सहजिया बन लिया जाये और मनगढ़ंत भक्ति का प्रचार किया जाये। किन्तु श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ऐसे सहजियों को नितान्त नास्तिक मायावादियों से बेहतर मानते थे। मायावादियों को पूर्ण पुरुषोत्तम परमेश्वर का तनिक भी ज्ञान नहीं होता। इसलिए सहजियों की स्थिति मायावादी संन्यासियों से काफी बेहतर होती है। यद्यपि इन सहजियों को अधिक वैदिक ज्ञान नहीं होता, फिर भी वे भगवान् कृष्ण को परमेश्वर के रूप में स्वीकार करते हैं। दुर्भाग्यवश वे दूसरों को प्रामाणिक भक्ति से पथभ्रष्ट करते हैं।

हरि-भक्ति-विलास, आर भागवतामृत ।
दशम-टिप्पनी, आर दशम-चरित ॥३५॥

हरि-भक्ति-विलास, आर भागवतामृत ।
दशम-टिप्पनी, आर दशम-चरित ॥ ३५ ॥

हरि-भक्ति-विलास—*हरिभक्ति-विलास* नामक शास्त्र; **आर**—और; **भागवतामृत**—*बृहद् भागवतामृत* नामक ग्रंथ; **दशम-टिप्पनी**—श्रीमद्भागवत के दसवें स्कन्द पर टीका; **आर**—और; **दशम-चरित**—श्रीमद्भागवत के दसवें स्कन्ध पर कविता (काव्य)।

अनुवाद

श्रील सनातन गोस्वामी द्वारा रचित कुछ पुस्तकें इस प्रकार हैं—हरिभक्ति-विलास, बृहद् भागवतामृत, दशम-टिप्पणी तथा दशम-चरित।

तात्पर्य

भक्तिरत्नाकर नामक पुस्तक की प्रथम लहर में कहा गया है कि सनातन

गोस्वामी ने गहन अध्ययन द्वारा *श्रीमद्भागवत* को हृदयंगम किया और इसकी व्याख्या अपनी टीका *वैष्णव-तोषणी* में की। श्री सनातन गोस्वामी तथा रूप गोस्वामी ने प्रत्यक्ष श्री चैतन्य महाप्रभु से जितना भी ज्ञान प्राप्त किया था, उसे अपनी दक्ष सेवा द्वारा उन्होंने सारे विश्व में प्रसारित कर दिया। सनातन गोस्वामी ने अपनी इस *वैष्णव-तोषणी* टीका को श्रील जीव गोस्वामी को सौंप दिया कि वे इसका सम्पादन कर दें, फलतः श्रील जीव गोस्वामी ने *लघुतोषणी* नाम से उसे सम्पादित कर दिया। सनातन गोस्वामी ने १४७६ शक (१५५४ ई.) में लेखन-कार्य समाप्त किया और श्रील जीव गोस्वामी ने *लघुतोषणी* को शकाब्द १५०४ (१५८२ ई.) में पूरा किया।

श्री सनातन गोस्वामी द्वारा रचित *हरिभक्ति-विलास* की सामग्री श्रील गोपाल भट्ट गोस्वामी द्वारा संकलित की गई और यह *वैष्णव-स्मृति* के नाम से विख्यात है। इसमें बीस अध्याय हैं, जिन्हें विलास कहा गया है। प्रथम विलास में इसका वर्णन है कि किस तरह गुरु तथा शिष्य के बीच सम्बन्ध स्थापित होता है और मन्त्रों की व्याख्या की गई है। द्वितीय विलास में दीक्षा की प्रक्रिया का और तृतीय विलास में वैष्णव आचरण के नियमों का वर्णन किया गया है, जिसमें स्वच्छता, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का निरन्तर स्मरण तथा दीक्षा-गुरु द्वारा दिये गये मन्त्रों के जाप पर विशेष बल दिया गया है। चतुर्थ विलास में संस्कार (शुद्धिकरण के हेतु), तिलक (शरीर के बारह अंगो पर बारह तिलक लगाना), मुद्रा (देह पर चिह्न), माला (मनकों पर जप) तथा गुरु-पूजा का उल्लेख है। पंचम विलास में ध्यान के लिए स्थान का चुनाव, प्राणायाम-विधियों, ध्यान तथा शालग्राम-शिला के ध्यान और पूजन का वर्णन हुआ है, जो कि विष्णु की प्रतिनिधि है। छठे विलास में भगवान् के दिव्य रूप का आवाहन करने और उनका अभिषेक करने की प्रामाणिक विधि दी गई है। सप्तम विलास में भगवान् विष्णु की पूजा के लिए फूल एकत्र करने के विषय में उपदेश हैं। अष्टम विलास में अर्चाविग्रह का वर्णन तथा अगरबत्ती, दीप दिखाना, भोग लगाना, नृत्य, गायन, ढोल बजाने, अर्चाविग्रह को माल्यार्पण, स्तुति और प्रणाम करने तथा अपराधों को दूर करने का वर्णन हुआ है। नवें विलास में तुलसी-दल चुनने, वैष्णव अनुष्ठानों के अनुसार पितरों का तर्पण

करने और भोजन अर्पित करने का वर्णन है। दसवें विलास में भगवद्भक्तों (वैष्णवों या सन्त पुरुषों) का वर्णन है। ग्यारहवें विलास में अर्चाविग्रह-पूजन एवं भगवान् के पवित्र नाम की महिमा का विस्तृत वर्णन है। इसमें अर्चाविग्रह के नाम का जप किस तरह किया जाय और नाम-जप में होने वाले अपराधों तथा उनसे बचने के उपायों का वर्णन हुआ है। भक्ति की महिमा तथा शरणागति का भी वर्णन हुआ है। बारहवें विलास में एकादशी का वर्णन है। तेरहवें विलास में उसवास तथा महाद्वादशी उत्सव मनाने का वर्णन मिलता है। चौदहवें विलास में प्रत्येक मास में करने के कर्तव्य दिये हुए हैं। पन्द्रहवें विलास में निर्जला एकादशी व्रत रखने की विधि वर्णित है। साथ ही शरीर में विष्णु-चिह्न अंकित करने, वर्षा ऋतु में चातुर्मास्य व्रत रखने तथा जन्माष्टमी, पार्श्वैकादशी, श्रवणाद्वादशी, रामनवमी तथा विजयादशमी विषयक विवेचनाएँ हैं। सोलहवें विलास में कार्तिक मास (अक्टूबर-नवम्बर) या दामोदर मास या ऊर्ज मास, जब अर्चा-कक्ष में या मन्दिर के ऊपर दीपक जलाये जाते हैं, में किये जाने वाले कार्यों का वर्णन हुआ है। गोवर्धन-पूजा तथा रथयात्रा के भी विवरण मिलते हैं। सत्रहवें विलास में अर्चाविग्रह पूजन की तैयारियाँ, महामंत्र का कीर्तन तथा जप-विधि का उल्लेख है। अठारहवें विलास में श्री विष्णु के विविध रूपों का वर्णन है। उन्नीसवें विलास में अर्चाविग्रह की प्रतिष्ठा तथा स्थापना के पूर्व अर्चाविग्रह को स्नान कराने के अनुष्ठानों का वर्णन मिलता है। बीसवें विलास में मन्दिरों के निर्माण का वर्णन है, जिसमें महान् भक्तों द्वारा बनवाये गये मन्दिरों का उल्लेख है। *हरिभक्ति-विलास* ग्रंथ का विस्तृत वर्णन श्री कविराज गोस्वामी द्वारा *मध्यलीला* (२४.३२९-३४५) में हुआ है। इन श्लोकों में दिये गये विवरण वस्तुत: गोपाल भट्ट गोस्वामी द्वारा संकलित अंशों के विवरणों पर आधारित हैं। श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर के अनुसार गोपाल भट्ट गोस्वामी ने भक्ति के जो विधि-विधान संकलित किये हैं, वे पूर्णत: हमारे वैष्णव सिद्धान्तों के अनुसार नहीं हैं। वास्तव में गोपाल भट्ट गोस्वामी ने वैष्णव-विधानों के विस्तृत वर्णनों को *हरिभक्ति-विलास* से संक्षिप्त रूप में संकलित किया था। किन्तु श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी का मत है कि *हरिभक्ति-विलास* का कठोरता से अनुसरण करने का अर्थ यह है कि

वैष्णव-विधियों का पूरी तरह से पालन किया जाये। उनका दावा है कि गोपाल भट्ट गोस्वामी ने मूल *हरिभक्ति-विलास* से जो अंश संकलित किये थे, वे *स्मार्त समाज* द्वारा प्रभावित है, जिसका जात ब्राह्मण अनुसरण करते हैं। अतएव गोपाल भट्ट गोस्वामी की पुस्तक से वैष्णव निर्देशों को ढूँढ पाना अत्यन्त कठिन है। इसलिए अच्छा यही होगा कि हरिभक्ति विलास पर स्वयं सनातन गोस्वामी द्वारा की गई *दिग्दर्शिनी टीका* को ही पढ़ा जाये। कुछ लोगों का कहना है कि इसी टीका का संकलन गोपीनाथ पूजा अधिकारी द्वारा किया गया, जो श्री राधा-रमणजी की सेवा कर रहे थे और जो गोपाल भट्ट गोस्वामी के शिष्यों में से एक थे।

बृहद्-भागवतामृत दो भागों में मिलता है और इसमें भक्ति सम्पन्न करने का वर्णन हुआ है। प्रथम भाग में भक्ति का विश्लेषणात्मक अध्ययन हुआ है, जिसमें पृथ्वी समेत विभिन्न ग्रहों, स्वर्गीय ग्रहों, ब्रह्मलोक तथा वैकुण्ठ लोक का भी वर्णन मिलता है। इसमें भक्तों का भी वर्णन हुआ है, जिसमें अंतरंग, अति अंतरंग तथा पूर्ण भक्त सम्मिलित हैं। *गोलोक-माहात्म्य-निरूपण* नाम से जाने वाले द्वितीय भाग में आध्यात्मिक लोक की महिमाओं के साथ साथ भौतिक जगत् से वैराग्य प्राप्त करने की विधि का भी वर्णन मिलता है। इसमें वास्तविक ज्ञान, भक्ति, आध्यात्मिक जगत्, भगवत्-प्रेम, जीवन-लक्ष्य की प्राप्ति तथा जगत् के आनन्द का भी वर्णन हुआ है। इस तरह प्रत्येक भाग में सात अध्याय हैं और कुल मिलाकर चौदह अध्याय हैं।

दशम टिप्पणी श्रीमद्भागवत के दशम स्कंध की टीका है। इसका दूसरा नाम *बृहद् वैष्णव-तोषणी-टीका* भी है। *भक्तिरत्नाकर* में बतलाया गया है कि *दशम टिप्पणी* १४७६ शकाब्द (१५५४ ई.) में पूरी हुई थी।

এই সব গ্রন্থ কৈল গোসাঞি সনাতন ।
রূপ-গোসাঞি কৈল যত, কে করু গণন ॥৩৬॥

एइ सब ग्रन्थ कैल गोसाञि सनातन ।
रूप-गोसाञि कैल यत, के करु गणन ॥ ३६ ॥

एइ सब—ये सब; **ग्रन्थ**—शास्त्र (ग्रन्थ); **कैल**—रचे; **गोसाञि सनातन**—सनातन

गोस्वामी; **रूप-गोसाञि**—रूप गोस्वामी; **कैल**—लिखे; **यत**—सब; **के**—कौन; **करु गणन**—गिन सकता है।

अनुवाद

मैंने सनातन गोस्वामी द्वारा रचित चार ग्रंथों के नाम पहले ही दे दिये हैं। इसी तरह श्रील रूप गोस्वामी ने भी अनेक ग्रंथों की रचना की है, जिनकी गिनती नहीं की जा सकती।

प्रधान प्रधान किछु करिये गणन ।
लक्ष ग्रन्थे कैल व्रज-विलास वर्णन ॥ ३७॥

प्रधान प्रधान किछु करिये गणन ।
लक्ष ग्रन्थे कैल व्रज-विलास वर्णन ॥ ३७॥

प्रधान प्रधान—अत्यन्त महत्त्वपूर्ण; **किछु**—कुछ; **करिये**—मैं करता हूँ; **गणन**—गणना; **लक्ष**—लाख; **ग्रन्थे**—श्लोकों में; **कैल**—किया; **व्रज-विलास**—वृन्दावन में भगवान् की लीलाओं का; **वर्णन**—वर्णन।

अनुवाद

अतएव मैं श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित मुख्य-मुख्य ग्रंथों के ही नाम गिनाऊँगा। उन्होंने एक लाख श्लोकों में वृन्दावन की लीलाओं का वर्णन किया है।

रसामृत-सिन्धु, आर विदग्ध-माधव ।
उज्ज्वल-नीलमणि, आर ललित-माधव ॥ ३८॥

रसामृत-सिन्धु, आर विदग्ध-माधव ।
उज्ज्वल-नीलमणि, आर ललित-माधव ॥ ३८॥

रसामृत-सिन्धु—भक्तिरसामृतसिन्धु; **आर**—और; **विदग्ध-माधव**—विदग्ध-माधव; **उज्ज्वल-नीलमणि**—उज्जवल नीलमणि; **आर**—और; **ललित-माधव**—ललित माधव।

अनुवाद

श्री रूप गोस्वामी द्वारा रचित ग्रंथों में भक्तिरसामृतसिन्धु, विदग्ध माधव, उज्ज्वल-नीलमणि तथा ललित-माधव सम्मिलित हैं।

দান-কেলি-কৌমুদী, আর বহু স্তবাবলী ।
অষ্টাদশ লীলা-চ্ছন্দ, আর পদ্যাবলী ॥৩৯॥
গোবিন্দ-বিরুদাবলী, তাহার লক্ষণ ।
মথুরা-মাহাত্ম্য, আর নাটক-বর্ণন ॥৪০॥

दान-केलि-कौमुदी, आर बहु स्तवावली ।
अष्टादश लीला-च्छन्द, आर पद्यावली ॥ ३९ ॥
गोविन्द-विरुदावली, ताहार लक्षण ।
मथुरा-माहात्म्य, आर नाटक-वर्णन ॥ ४० ॥

दान-केलि-कौमुदी—दान केलि कौमुदी; **आर**—और; **बहु स्तवावली**—बहु-स्तवावली (बहुत स्तुतियाँ); **अष्टादश**—अठारह; **लीला-च्छन्द**—क्रमबद्ध लीलाएँ; **आर**—और; **पद्यावली**—पद्यावली; **गोविन्द-विरुदावली**—गोविन्द विरुदावली; **ताहार लक्षण**—पुस्तक के लक्षण; **मथुरा-माहात्म्य**—मथुरा की महिमाएँ; **आर नाटक-वर्णन**—और नाटक वर्णन (नाटक चन्द्रिका)।

अनुवाद

श्रील रूप गोस्वामी ने दानकेलि-कौमुदी, स्तवावली, लीलाच्छन्द, पद्यावली, गोविन्द-विरुदावली, मथुरा-माहात्म्य तथा नाटक-वर्णन नामक पुस्तकों की भी रचना की।

লঘু-ভাগবতামৃতাদি কে করু গণন ।
সর্বত্র করিল ব্রজ-বিলাস বর্ণন ॥৪১॥

लघु-भागवतामृतादि के करु गणन ।
सर्वत्र करिल व्रज-विलास वर्णन ॥ ४१ ॥

लघु-भागवतामृत-आदि—दूसरी सूची जिसमें लघु भागवतामृत सम्मिलित है; **के**—कौन; **करु गणन**—गिन सकता है; **सर्वत्र**—सर्वत्र; **करिल**—किया; **व्रज-विलास**—वृन्दावन की लीलाएँ; **वर्णन**—वर्णन।

अनुवाद

भला श्रील रूप गोस्वामी द्वारा रचित शेष पुस्तकों (जिनमें लघु भागवतामृत मुख्य है) की गिनती कौन कर सकता है? उन्होंने उन सब ग्रंथों में वृन्दावन की लीलाओं का वर्णन किया है।

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ने इन पुस्तकों का विवरण दिया है। *भक्तिरसामृत-सिन्धु* कृष्ण-भक्ति विकसित करने और उस दिव्य विधि का पालन करने से सम्बन्धित महान् ग्रंथ है। इसकी रचना १४६३ शकाब्द (१५४१ ई.) में पूर्ण हुई। इस ग्रंथ में चार खण्ड हैं—पूर्व विभाग, दक्षिण विभाग, पश्चिम विभाग तथा उत्तर विभाग। पूर्व विभाग में भक्ति के स्थायी विकास का वर्णन है। इसमें भक्ति के सामान्य नियम, भक्ति सम्पन्न करने, भक्ति में आह्लाद तथा अन्ततः भगवत्प्रेम की प्राप्ति का वर्णन हुआ है। इस प्रकार भक्ति के अमृत-सिन्धु के इस विभाग में चार लहरें हैं।

दक्षिण विभाग में भक्ति से प्राप्त भक्ति-रस का सामान्य वर्णन हुआ है। इसमें विभिन्न स्थितियों जैसे विभाव, अनुभाव, सात्त्विक, व्यभिचारी तथा स्थायी भाव का वर्णन मिलता है, जो सब भक्ति के उच्च स्तर पर स्थित हैं। इस तरह दक्षिण विभाग में ५ लहरें हैं। पश्चिम विभाग में भक्ति से प्राप्त होने वाले मुख्य दिव्य रसों का विवरण प्राप्त होता है। इनको *मुख्य भक्ति-रस निरूपण* अर्थात् भक्ति द्वारा प्राप्त होने वाले मुख्य रस अथवा भाव कहते हैं। इस विभाग में शान्त रस, दास्य रस में विकास, सख्य रस में उत्तरोतर विकास, वात्सल्य रस में अधिक विकास एवं अन्त में कृष्ण और उनके भक्तों के मध्य माधुर्य रस का वर्णन मिलता है। इस प्रकार इस विभाग में भी ५ लहरें हैं।

उत्तर विभाग में भक्ति के गौण रसों—हास्य, अद्‌भुत, वीर, करुण, रौद्र, भयानक तथा बीभत्स रस—का वर्णन है। इसमें विभिन्न रसों का मिश्रण और अतिक्रमण भी है। इस प्रकार इस विभाग में कुल ९ लहरें हैं। यह भक्तिरसामृत सिन्धु की संक्षिप्त रूपरेखा है।

विदग्ध माधव वृन्दावन में कृष्ण की लीलाओं से सम्बन्धित एक नाटक है। श्रील रूप गोस्वामी ने इसको १४५४ शकाब्द (१५३२ ई.) में पूर्ण किया। इस नाटक का प्रथम खण्ड *वेणुनाद-विलास,* दूसरा खण्ड *मन्मथ-लेख,* तीसरा खण्ड *राधा-सङ्ग,* चौथा खण्ड *वेणु हरण,* पाँचवा खण्ड *राधा-प्रसादन,* छठा खंड *शरद् विहार* और सातवाँ तथा अन्तिम खण्ड *गौरी-विहार* कहलाता है।

उज्ज्वल नीलमणि नामक पुस्तक में प्रेमालाप का दिव्य विवरण मिलता है,

जिसमें रूपक, समानताएँ तथा उच्च भक्ति-भाव सम्मिलित हैं। *भक्तिरसामृत-सिन्धु* में जिस माधुर्य रस का संक्षिप्त वर्णन मिलता है, *उज्ज्वल नीलमणि* में उसीका विस्तार रूप में वर्णन मिलता है। इस पुस्तक में प्रेमियों, उनके सहायकों तथा कृष्ण के प्रियजनों के विभिन्न प्रकारों का वर्णन हुआ है। इसमें श्रीमती राधारानी, अन्य प्रेमिकाओं अन्य यूथेश्वरियों, सन्देश वाहकों, नित्य सखियों तथा कृष्ण के अन्य अत्यन्त प्रियजनों का भी वर्णन हुआ है। इस पुस्तक में इसका भी वर्णन मिलता है कि कृष्ण-प्रेम किस प्रकार जागृत होता (उद्दीपन) है। इसमें भाव-दशा, भक्ति-दशा, स्थायी भाव, व्यभिचारी भाव, स्थिर भाव, तरह तरह के वस्त्र, विरह भाव, पूर्वराग, आकर्षण में क्रोध, प्रेमालाप के प्रकार, प्रियतम से विछोह, प्रियतम से मिलन (संभोग), प्रेमी-प्रेमिका के मध्य प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष भोग का वर्णन मिलता है। इन सबका विस्तार से वर्णन हुआ है।

इसी प्रकार *ललित माधव* में कृष्ण की द्वारका की लीलाओं का वर्णन मिलता है। इन लीलाओं को नाटक का रूप दिया गया है और इस ग्रंथ की रचना १४५९ शकाब्द में पूर्ण हुई। इसके प्रथम भाग में संध्याकालीन लीलाओं का वर्णन है, द्वितीय भाग में शंखचूड़ का वध, तृतीय में उन्मत्त श्रीमती राधारानी का वर्णन, चतुर्थ में राधारानी का कृष्ण की ओर जाने, पाँचवे में चन्द्रावली की उपलब्धि, छठें में ललिता की प्राप्ति, सातवें में नववृन्दावन में भेंट, आठवें में नववृन्दावन में भोग, नवें में चित्र-दर्शन तथा दसवें अंक में पूर्ण मन:तुष्टि का वर्णन है। इस तरह पूरा नाटक दस भागों में विभाजित है।

लघु-भागवतामृत दो भागों में विभक्त है। पहला—कृष्णामृत तथा दूसरा—भक्तिरसामृत कहलाता है। प्रथम भाग में वैदिक प्रमाण की महत्ता पर बल दिया गया है। इसके बाद श्रीकृष्ण रूप में पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के मूल रूप का वर्णन तथा उनकी लीलाओं एवं स्वांश और विभिन्नांश में उनके विस्तारों का वर्णन है। अवतारों को विभिन्न भावों के अनुसार उन्हें *आवेश* तथा *तद्-एकात्म* कहा जाता है। प्रथम अवतार को तीन पुरुषावतारों में—महाविष्णु, गर्भोदकशायी विष्णु तथा क्षीरोदकशायी विष्णु में विभाजित किया जाता है। तत्पश्चात् प्रकृति के गुणों के अनुसार तीन अवतार (गुणावतार) होते हैं—ब्रह्मा,

विष्णु तथा महेश्वर (शिव)। भगवान् की सेवा में जितनी साज-सामग्री काम आती है, वह दिव्य अर्थात् इस भौतिक जगत् के तीनों गुणों से परे होती है। इसमें पच्चीस *लीलावतारों* के वर्णन भी दिये गये हैं, जो इस प्रकार हैं—चतुःसन (कुमारगण), नारद, वराह, मत्स्य, यज्ञ, नर-नारायण ऋषि, कपिल, दत्तात्रेय, हयग्रीव, हंस, पृश्निगर्भ, ऋषभ, पृथु, नृसिंह, कूर्म, धन्वन्तरि, मोहिनी, वामन, परशुराम, दाशरथि, कृष्णद्वैपायन, बलराम, वासुदेव, बुद्ध तथा कल्कि। मनु के भी चौदह अवतार हैं—यज्ञ, विभु, सत्यसेन, हरि, वैकुण्ठ, अजित, वामन, सार्वभौम, ऋषभ, विष्वक्सेन, धर्मसेतु, सुधामा, योगेश्वर तथा बृहद्भानु। चारों युगों के भी चार अवतार (युगावतार) हैं और उनके रंगों—श्वेत, लाल, श्याम तथा काला (कभी-कभी पीला—जैसे चैतन्य महाप्रभु का) का भी वर्णन हुआ है। विभिन्न प्रकार के कल्पों एवं कल्पों में अवतारों का भी वर्णन हुआ है। विभिन्न अवतारों की विभिन्न परिस्थितियों से आवेश, प्राभव, वैभव तथा पर नामक श्रेणियाँ बनती हैं। विशिष्ट लीलाओं के अनुसार नामों को आध्यात्मिक शक्ति प्रदान की जाती है। शक्तिमान तथा शक्ति का अन्तर और परमेश्वर के अचिन्त्य कार्यकलापों का भी वर्णन हुआ है।

श्रीकृष्ण आदि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं और उनसे बड़ा कोई नहीं है। वे सारे अवतारों के स्रोत हैं। *लघु भागवतामृत* में भगवान् के अंशावतारों, निर्विशेष ब्रह्मज्योति (जो वास्तव में श्रीकृष्ण का शारीरिक तेज है), दो हाथ वाले सामान्य मनुष्य के रूप में श्रीकृष्ण की लीलाओं की अद्वितीयता आदि के वर्णन मिलते हैं। भगवान् के द्विभुज रूप की बराबरी नहीं की जा सकती। वैकुण्ठ जगत् में शरीर के स्वामी (देही) तथा देह में कोई अन्तर नहीं होता। भौतिक जगत् में देह के मालिक देही को आत्मा कहते हैं और शरीर भौतिक प्राकट्य कहलाता है। किन्तु वैकुण्ठ लोक में ऐसा कोई अन्तर नहीं होता। भगवान् श्रीकृष्ण अजन्मा हैं और अवतार के रूप में उनका आविर्भाव अनादि है। कृष्ण की लीलाएँ दो तरह की हैं—प्रकट तथा अप्रकट। उदाहरणार्थ, जब कृष्ण भौतिक जगत् में जन्म लेते हैं, तो उनकी लीलाएँ प्रकट कहलाती हैं, किन्तु जब वे अन्तर्धान हो जाते हैं, तो यह नहीं समझना चाहिए कि उनका अन्त हो गया, क्योंकि अप्रकट रूप में उनकी लीलाएँ चलती रहती हैं। भगवान्

की प्रकट लीलाओं में भक्तों तथा कृष्ण के द्वारा तरह-तरह के रसों का आस्वादन किया जाता है। वस्तुत: मथुरा, वृन्दावन तथा द्वारका में उनकी लीलाएँ शाश्वत हैं और किसी ब्रह्माण्ड के कोई न कोई भाग में निरन्तर चलती रहती हैं।

ताँर भ्रातुष्पुत्र नाम——श्री-जीव-गोसाञि ।
यत भक्ति-ग्रन्थ कैल, तार अन्त नाइ ॥ ४२॥

ताँर भ्रातुष्पुत्र नाम——श्री-जीव-गोसाञि ।
यत भक्ति-ग्रन्थ कैल, तार अन्त नाइ ॥ ४२॥

ताँर—उनका; **भ्रातु:-पुत्र**—भतीजा; **नाम**—नामक; **श्री-जीव-गोसाञि**—श्री जीव गोस्वामी प्रभुपाद; **यत**—सब; **भक्ति-ग्रन्थ**—भक्ति ग्रन्थ; **कैल**—संकलित किये; **तार**—उनका; **अन्त**—अन्त; **नाइ**—नहीं है।

अनुवाद

श्री रूप गोस्वामी के भतीजे श्रील जीव गोस्वामी ने भक्ति सम्बन्धी इतनी पुस्तकें लिखी हैं कि उनकी गणना नहीं की जा सकती।

श्री-भागवत-सन्दर्भ-नाम ग्रन्थ-विस्तार ।
भक्ति-सिद्धान्तेर ताते देखाइयाछेन पार ॥ ४३॥

श्री-भागवत-सन्दर्भ-नाम ग्रन्थ-विस्तार ।
भक्ति-सिद्धान्तेर ताते देखाइयाछेन पार ॥ ४३॥

श्री-भागवत-सन्दर्भ-नाम—श्री भागवत सन्दर्भ नामक; **ग्रन्थ**—ग्रन्थ; **विस्तार**—विस्तार से; **भक्ति-सिद्धान्तेर**—भक्ति के सिद्धान्तों का; **ताते**—उस ग्रन्थ में; **देखाइयाछेन**—उन्होंने दिखाइ है; **पार**—सीमा।

अनुवाद

श्रील जीव गोस्वामी ने *श्री भागवत-सन्दर्भ* में भक्ति की चरम पराकाष्ठा का विस्तार से वर्णन किया है।

तात्पर्य

भागवत-सन्दर्भ का दूसरा नाम *षट् सन्दर्भ* भी है। इसके प्रथम खंड को *तत्त्व-सन्दर्भ* कहते हैं, जिसमें यह सिद्ध किया गया है कि *श्रीमद्भागवत*

सर्वाधिक प्रामाणिक साक्ष्य है, जो परम सत्य का सीधा निर्देश करता है। इसका द्वितीय सन्दर्भ *भगवत्-सन्दर्भ* कहलाता है, जो निर्विशेष ब्रह्म तथा अन्तर्यामी परमात्मा के भेद को बतलाता है। इसमें आध्यात्मिक जगत् तथा अन्य दोनों भौतिक गुणों से रहित सत्त्वगुण की प्रधानता का वर्णन है अर्थात् इसमें *शुद्ध सत्त्व* नामक दिव्य अवस्था का सजीव वर्णन मिलता है। भौतिक जगत् में सत्त्वगुण, अन्य दोनों गुणों अर्थात् रजो तथा तमो गुणों द्वारा कलुषित हो सकता है, किन्तु शुद्ध सत्त्व में स्थित होने पर इस प्रकार से कलुषित होने की सम्भावना नहीं रहती। यह शुद्ध सत्त्व का आध्यात्मिक स्तर है। इसमें भगवान् की शक्ति तथा जीव का भी वर्णन हुआ है और भगवान् की अचिन्त्य शक्तियों एवं उनकी विविधता का भी वर्णन हुआ है। ये शक्तियाँ अन्तरंगा, बहिरंगा, निजी, तटस्था आदि कोटियों में बँटी हुई होती हैं। इसमें अर्चाविग्रह पूजा की नित्यता, अर्चाविग्रह की सर्वशक्तिमत्ता, उनकी सर्वव्यापकता, उनकी सर्वाश्रयता (सब को आश्रय देना), उनकी सूक्ष्म तथा स्थूल शक्तियाँ, उनका साकार स्वरूप, उनके रूप, गुण तथा लीलाओं की अभिव्यक्ति, उनकी दिव्य स्थिति तथा उनका पूर्ण रूप—इन सबकी व्याख्याएँ भी हैं। यह भी बतलाया गया है कि परम पूर्ण से सम्बन्धित प्रत्येक वस्तु में समान शक्ति होती है और वैकुण्ठ लोक, वैकुण्ठ लोक के पार्षद तथा वैकुण्ठ लोक में भगवान् की तीनों शक्तियाँ—ये सभी दिव्य हैं। इसके अतिरिक्त निर्विशेष ब्रह्म तथा भगवान् में अन्तर, भगवान् की पूर्णता, समस्त वैदिक ज्ञान का लक्ष्य, भगवान् की व्यक्तिगत शक्तियाँ तथा वैदिक ज्ञान के आदि प्रणेता के रूप में भगवान् के विषय में भी विचार-विमर्श हुआ है।

तीसरा सन्दर्भ *परमात्म-सन्दर्भ* कहलाता है। इसमें परमात्मा का वर्णन हुआ है तथा इसकी विवेचना मिलती है कि परमात्मा किस प्रकार करोड़ों जीवों में विद्यमान रहते हैं। इसमें गुणावतारों में अन्तर, जीव, माया, भौतिक जगत्, देहान्तरण का सिद्धान्त, मायाशक्ति, इस जगत् तथा परमात्मा की साम्यता तथा इस भौतिक जगत् के विषय में सच्चाई की व्याख्याएँ भी हैं। इस सम्बन्ध में श्रीधर स्वामी की टीकाएँ दी गई हैं। यहाँ बतलाया गया है कि यद्यपि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् भौतिक गुणों से रहित हैं, फिर भी वे सारे भौतिक

कार्यकलापों का निरीक्षण करते हैं। इसकी भी व्याख्या है कि किस प्रकार लीलावतार भक्तों की इच्छाओं का प्रत्युत्तर देते हैं और किस तरह पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् में छह ऐश्वर्य पाये जाते हैं।

चौथा सन्दर्भ *कृष्ण-सन्दर्भ* कहलाता है। इसमें कृष्ण को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् सिद्ध किये गये हैं। इसमें कृष्ण की लीलाओं एवं गुणों, पुरुषावतारों पर उनकी अध्यक्षता इत्यादि की व्याख्या की गई है। श्रीधर स्वामी के अभिमतों की भी पुष्टि की गई है। समस्त शास्त्रों में कृष्ण की श्रेष्ठता पर बल दिया गया है। बलदेव, संकर्षण तथा कृष्ण के अन्य विस्तार महासंकर्षण से उद्भूत हैं। सारे अवतार तथा अंश एकसाथ द्विभुज कृष्ण के शरीर में विद्यमान रहते हैं। गोलोक, वृन्दावन (भगवान् का सनातन धाम) तथा इनके स्वरूप, यादवगण तथा ग्वाले (दोनों कृष्ण के शाश्वत संगी हैं), प्रकट तथा अप्रकट लीलाओं में समता, गोकुल में श्रीकृष्ण का प्राकट्य, अन्तरंगा शक्ति के विस्तार रूप द्वारका की रानियाँ तथा उनसे उत्तम अद्वितीय गोपियों के भी विवरण मिलते हैं। गोपियों के नामों की सूची भी दी गई है और इनमें श्रीमती राधारानी की सर्वोच्च स्थिति की व्याख्या भी हुई है।

पाँचवा सन्दर्भ *भक्ति-सन्दर्भ* कहलाता है, जिसमें भक्ति के प्रत्यक्ष सम्पन्न करने एवं प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रीति से उनके समन्वयन की विधि का वर्णन हुआ है। इसमें सभी शास्त्रों के ज्ञान, वैदिक वर्णाश्रम धर्म की स्थापना, सकाम कर्म से भक्ति की श्रेष्ठता, इत्यादि की व्याख्या दी गई है। भक्ति के बिना ब्राह्मण को भी निन्दनीय बतलाया गया है। कर्म-त्याग की प्रक्रिया (कर्मफल को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् को अर्पण करना), ध्यानयोग तथा ज्ञानयोग के विषय में व्याख्याएँ हैं और इन्हें कठिन श्रम मात्र बतलाया गया है। इसमें देवताओं की पूजा को निरुत्साहित किया गया है और वैष्णव की पूजा को श्रेष्ठ बताया गया है। अभक्तों को कोई सम्मान नहीं दिया गया है। इसमें इसकी भी चर्चा की गई है कि मनुष्य इस जीवन में भी किस तरह मुक्त (जीवन्मुक्त) हो सकता है, किस तरह शिवजी भक्त हैं और कैसे भक्त तथा उसकी भक्तिमय सेवा का अस्तित्व सनातन रूप से रहता है। यह भी कहा गया है कि भक्ति के माध्यम से समस्त प्रकार की सफलता प्राप्त की जा सकती है, क्योंकि भक्ति भौतिक

गुणों से परे है। इसकी भी व्याख्या हुई है कि किस प्रकार भक्ति के माध्यम से आत्मा प्रकट (अनुभूत) होता है। आत्मा के आनन्द के साथ ही इसका भी वर्णन है कि भक्ति चाहे त्रुटिपूर्ण ही क्यों न सम्पन्न की जाये, पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के चरणकमलों को प्रदान करने वाली है। निष्काम भक्ति की बहुत प्रशंसा की गई है और यह बतलाया गया है कि किस प्रकार प्रत्येक भक्त अन्य भक्तों की संगति से निष्काम भक्ति के पद को प्राप्त कर सकता है। इसमें इन विषयों की भी चर्चा है : महाभागवत तथा सामान्य भक्त में अन्तर, दार्शनिक चिन्तन के लक्षण, *अहंग्रहोपासना* (आत्म-पूजा) के लक्षण, भक्ति के लक्षण, काल्पनिक सिद्धि के लक्षण, विधि-विधानों का स्वीकार, गुरु की सेवा, महाभागवत तथा उनकी सेवा, वैष्णवों की सेवा, श्रवण, कीर्तन, स्मरण तथा पाद-सेवन के नियम, सेवा-अपराध, अपराध के फल, प्रार्थना, भगवान् के नित्य दास बनना, भगवान् से मैत्री स्थापित करना और उनके सुख के लिए सर्वस्व अर्पित करना, इत्यादि। रागानुगा भक्ति (भगवान् के प्रति स्वयंस्फूर्त प्रेम), कृष्ण-भक्त होने का विशेष प्रयोजन तथा पूर्णता की अन्य अवस्थाओं का तुलनात्मक विवरण भी दिया गया है।

छठा सन्दर्भ *प्रीति-सन्दर्भ* कहलाता है, जिसमें भगवत्प्रेम का वर्णन है। यहाँ बतलाया गया है कि भगवत्प्रेम के माध्यम से मनुष्य पूर्ण रूप से मुक्त हो जाता है और जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य प्राप्त करता है। इसमें सगुणवादी तथा निर्विशेषवादी मुक्त अवस्थाओं में अन्तर बतलाया गया है और भव-बन्धन से मुक्ति एवं जीवन्मुक्ति की व्याख्या की गई है। सभी प्रकार की मुक्तियों में से भगवान् की प्रेमाभक्ति में मुक्ति को सर्वोच्च बतलाया गया है और पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के साक्षात्कार को जीवन की सर्वोच्च सिद्धि पूर्णता के रूप में स्थापित किया गया है। क्रमिक विधि से मिलने वाली मुक्ति एवं तत्क्षण मुक्ति में अन्तर बतलाया गया है। जीवनकाल में ब्रह्म का साक्षात्कार तथा पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् से मिलन दोनों ही को मुक्ति कहा गया है, किन्तु परम पुरुष भगवान् से आन्तरिक तथा बाह्य रूप से मिलन को सर्वोत्कृष्ट बतलाया गया है, जो ब्रह्मतेज के दिव्य साक्षात्कार से बढ़कर है। इसमें सालोक्य, सामीप्य तथा सारूप्य मुक्तियों की तुलना की गई है। सामीप्य मुक्ति सालोक्य से बेहतर है। भक्ति को

अधिक सुविधाओं से युक्त मुक्ति माना गया है और इसे प्राप्त करने की विधि की व्याख्या की गई है। भक्ति स्तर को प्राप्त करने पर होने वाली दिव्य स्थिति, जो भगवत् प्रेम के समान है, उसकी भी व्याख्या की गई है। दिव्य प्रेम के तटस्थ लक्षण तथा इसे जागृत करने की विधि, तथाकथित प्रेम एवं भगवत्-प्रेम के स्तर पर होने वाले दिव्य प्रेम में अन्तर, गोपियों के साथ प्रेमालाप के समय आस्वाद्य विभिन्न रस जो संसारी प्रेमालाप से भिन्न हैं और शुद्ध कृष्ण-प्रेम का प्रतिनिधित्व करते हैं, इन सबकी व्याख्या दी गई है। ज्ञानमिश्रित भक्ति, गोपियों के प्रेम की सर्वोत्कृष्टता, ऐश्वर्य भाव से युक्त भक्ति तथा प्रेमाभक्ति में अन्तर, गोकुल के निवासियों की उच्च स्थिति, कृष्ण के सखाओं की क्रमशः उच्च स्थिति, कृष्ण के साथ गोप-गोपियों का वात्सल्य-प्रेम तथा अन्ततः गोपियों एवं श्रीमती राधारानी के प्रेम की सर्वोत्कृष्टता के विषय में भी व्याख्याएँ हुई हैं। इसकी भी व्याख्या की गई है कि जब कोई अनुकरण करता है, तो आध्यात्मिक भाव किस प्रकार उपस्थित रहते हैं और ऐसे रस संसारी प्रेम के साधारण रसों से कितने अधिक श्रेष्ठ होते हैं। विभिन्न भावों, भावोद्दीपन (भावों का जागृत होना), दिव्य गुण, धीरोदात्त आदि भेद, माधुर्य प्रेम का परम आकर्षण, अनुभाव, स्थायी संचारी भाव, पाँच प्रत्यक्ष तथा सात अप्रत्यक्ष प्रेमाभक्ति के रसों के भी वर्णन दिये गये हैं। अन्त में विभिन्न रसों के एक दूसरे से अतिक्रमण की भी व्याख्या दी गई है। एवं शान्त, दास्य, शरणागति, वात्सल्य-प्रेम, प्रत्यक्ष माधुर्य-प्रेम, दिव्य भोग तथा विरह में आनन्द, पूर्वराग तथा श्रीमती राधारानी की महिमा के विषय में वर्णन मिलते हैं।

गोपाल-चम्पू-नामे ग्रन्थ-महाशूर ।
नित्य-लीला स्थापन याहे व्रज-रस-पूर ॥ ४४॥

गोपाल-चम्पू-नामे ग्रन्थ-महाशूर ।
नित्य-लीला स्थापन याहे व्रज-रस-पूर ॥ ४४॥

गोपाल-चम्पू—*गोपाल चम्पू;* **नामे**—नामक; **ग्रन्थ**—ग्रन्थ; **महा-शूर**—अत्यन्त प्रभावशाली; **नित्य-लीला**—नित्य लीलाएँ; **स्थापन**—स्थापन; **याहे**—जिसमें; **व्रज-रस**—वृन्दावन का दिव्य रस; **पूर**—पूर्ण।

अनुवाद

गोपाल-चम्पू सर्वाधिक प्रसिद्ध एवं प्रभावशाली दिव्य ग्रंथ है। इस ग्रंथ में भगवान् की सनातन लीलाओं की स्थापना की गई है और वृन्दावन में भोगे जाने वाले दिव्य रसों का वर्णन विस्तारपूर्वक हुआ है।

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने अपने *अनुभाष्य* में *गोपाल-चम्पू* के विषय में निम्नलिखित जानकारी दी है। *गोपाल-चम्पू* दो भागों में विभक्त है। पहला भाग पूर्वी लहरी कहलाता है और दूसरा भाग उत्तरी लहरी कहलाता है। पहले भाग में ३३ और दूसरे भाग में ३७ पूरण या परिच्छेद हैं। पहले भाग की रचना १५१० शकाब्द (१५८८ ई.) में हुई। इसमें निम्नलिखित विषयों की विवेचना की गई है—(१) वृन्दावन तथा गोलोक; (२) पूतना राक्षसी का वध, माता यशोदा के निर्देशानुसार गोपियों का घर लौटना, कृष्ण तथा बलराम को स्नान कराना, स्निग्ध-कण्ठ तथा मधु कण्ठ; (३) यशोदा मैया का स्वप्न; (४) जन्माष्टमी उत्सव; (५) नंद महाराज की वसुदेव से भेंट तथा पूतना-वध; (६) प्रातःकाल बिस्तर से उठने की लीलाएँ, शकट असुर का उद्धार तथा नामकरण संस्कार; (७) तृणावर्त असुर का वध, कृष्ण द्वारा मिट्टी खाना, कृष्ण की बालसुलभ नटखट लीलाएँ तथा चोर के रूप में कृष्ण; (८) दधिमन्थन, कृष्ण द्वारा माता यशोदा का स्तनपान, दही की मटकी तोड़ना, रस्सी से कृष्ण का बाँधा जाना, दो भाइयों (यमलार्जुन) का उद्धार और माता यशोदा का शोक करना; (९) वृन्दावन प्रवेश; (१०) वत्सासुर, बकासुर तथा व्योमासुर का वध; (११) अघासुर का वध तथा ब्रह्मा का विमोहन; (१२) जंगल में गौवों का चारण; (१३) गायों की रखवाली तथा कालिय नाग को दण्ड; (१४) गर्दभासुर का वध तथा कृष्ण की प्रशंसा; (१५) गोपियों का पूर्वाकर्षण; (१६) प्रलम्बासुर का वध तथा दावाग्नि पान; (१७) गोपियों का कृष्ण के पास जाने का प्रयास; (१८) गोवर्धन पर्वत धारण करना; (१९) कृष्ण का दुग्ध-अभिषेक; (२०) वरुण लोक से नन्द महाराज का लौट आना और गोपियों द्वारा गोलोक वृन्दावन का दर्शन; (२१) कात्यायनी व्रत का अनुष्ठान तथा दुर्गादेवी की उपासना; (२२) याज्ञिक ब्राह्मणों की पत्नियों से भोजन माँगना;

(२३) कृष्ण तथा गोपियों की भेंट; (२४) गोपियों के साथ कृष्ण द्वारा आनन्द-भोग, राधा तथा कृष्ण का घटनास्थल से अंतर्धान होना और गोपियों द्वारा उनकी खोज; (२५) कृष्ण का फिर से प्रकट होना; (२६) गोपियों का संकल्प; (२७) यमुना-जल में क्रीड़ाएँ; (२८) सर्प के चंगुल से नन्द महाराज को बचाना; (२९) एकान्त स्थलों में विविध लीलाएँ; (३०) शंखचूड़ का वध तथा होरी, (३१) अरिष्टासुर का वध; (३२) केशी असुर का वध; (३३) श्री नारद मुनि का प्रकट होना और जिस वर्ष पुस्तक समाप्त हुई उसका वर्णन।

द्वितीय भाग *उत्तर चम्पू* कहलाता है और उसमें निम्नलिखित विषयों की विवेचना की गई है—(१) व्रजभूमि के प्रति अनुराग; (२) अक्रूर के क्रूर कर्म; (३) कृष्ण का मथुरा-गमन; (४) मथुरा नगरी का वर्णन; (५) कंस का वध; (६) कृष्ण तथा बलराम से नन्द महाराज का विछोह; (७) कृष्ण तथा बलराम के बिना नन्द महाराज का वृन्दावन में प्रवेश; (८) कृष्ण तथा बलराम द्वारा विद्याध्ययन; (९) कृष्ण तथा बलराम के गुरु-पुत्र का लौट जाना; (१०) उद्धव की वृन्दावन यात्रा; (११) भ्रमर दूत से राधारानी का वार्तालाप; (१२) वृन्दावन से उद्धव का लौट आना; (१३) जरासन्ध का बाँधा जाना; (१४) यवन जरासन्ध का वध; (१५) बलराम का विवाह; (१६) रुक्मिणी का विवाह; (१७) सात विवाह; (१८) नरकासुर का वध, स्वर्ग से पारिजात पुष्प लाना और १६,००० रानियों के साथ कृष्ण का विवाह; (१९) बाणासुर पर विजय; (२०) बलराम का व्रज लौटना; (२१) पौण्ड्रक (नकली विष्णु) का वध; (२२) द्विविद का वध तथा हस्तिनापुर की चिन्ता; (२३) कुरुक्षेत्र के लिए प्रस्थान; (२४) कुरुक्षेत्र में वृन्दावनवासियों तथा द्वारका-वासियों में भेंट; (२५) कृष्ण का उद्धव से परामर्श; (२६) राजा का उद्धार; (२७) राजसूय यज्ञ की सम्पन्नता; (२८) शाल्व का वध; (२९) कृष्ण का वृन्दावन लौटने पर विचार; (३०) कृष्ण का फिर से वृन्दावन जाना; (३१) श्रीमती राधारानी तथा अन्यों के रोके जाने का समाधान; (३२) सब कुछ पूर्ण; (३३) राधा तथा माधव का निवासस्थान; (३४) श्रीमती राधारानी तथा कृष्ण का शृंगार; (३५) श्रीमती राधारानी तथा कृष्ण का विवाह; (३६) श्रीमती राधारानी तथा कृष्ण का मिलन तथा (३७) गोलोक प्रवेश।

এই মত নানা গ্রন্থ করিয়া প্রকাশ ।
গোষ্ঠী সহিতে কৈলা বৃন্দাবনে বাস ॥ ৪৫ ॥

এइ মত নানা গ্রন্থ করিয়া প্রকাশ ।
গোষ্ঠী সহিতে কৈলা বৃন্দাবনে বাস ॥ ৪৫ ॥

एइ मत—इस प्रकार; **नाना**—नाना प्रकार के; **ग्रन्थ**—ग्रन्थ; **करिया**—बनाकर; **प्रकाश**—छपाकर; **गोष्ठी**—परिवार के सदस्य; **सहिते**—के साथ; **कैला**—किया; **वृन्दावने**—वृन्दावन में; **वास**—निवास।

अनुवाद

इस प्रकार श्रील रूप गोस्वामी, सनातन गोस्वामी तथा उनके भतीजे श्रील जीव गोस्वामी तथा लगभग उनका सारा परिवार वृन्दावन में रहा और उन्होंने भक्ति पर महत्त्वपूर्ण पुस्तकें प्रकाशित कीं।

প্রথম বৎসরে অদ্বৈতাদি ভক্ত-গণ ।
প্রভুরে দেখিতে কৈল, নীলাদ্রি গমন ॥ ৪৬ ॥

প্রথম বৎসরে অদ্বৈতাদি ভক্ত-গণ ।
প্রভুরে দেখিতে কৈল, নীলাদ্রি গমন ॥ ৪৬ ॥

प्रथम—प्रथम; **वत्सरे**—वर्ष में; **अद्वैत-आदि**—अद्वैत आचार्य आदि; **भक्त-गण**—सारे भक्त; **प्रभुरे**—महाप्रभु; **देखिते**—देखने के लिए; **कैल**—किया; **नीलाद्रि**—जगन्नाथ पुरी को; **गमन**—गये।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा संन्यास ग्रहण कर लेने के एक वर्ष बाद, श्री अद्वैत प्रभु के नेतृत्व में सारे भक्त उनका दर्शन करने के लिए जगन्नाथ पुरी गये।

রথ-যাত্রা দেখি' তাহাঁ রহিলা চারি-মাস ।
প্রভু-সঙ্গে নৃত্য-গীত পরম উল্লাস ॥ ৪৭ ॥

রথ-যাত্রা দেখি' তাহাঁ রহিলা চারি-মাস ।
প্রভু-সঙ্গে নৃত্য-গীত পরম উল্লাস ॥ ৪৭ ॥

रथ-यात्रा—रथयात्रा; **देखि'**—देखकर; **ताहाँ**—वहाँ; **रहिला**—रहे; **चारि-मास**—चार मास; **प्रभु-सङ्गे**—महाप्रभु के संग; **नृत्य-गीत**—नाचते और कीर्तन करते हुए; **परम**—परम; **उल्लास**—हर्ष।

अनुवाद

जगन्नाथ पुरी में रथयात्रा महोत्सव में सम्मिलित होने के बाद सारे भक्त चार मास तक वहीं रहे और चैतन्य महाप्रभु के साथ कीर्तन (कीर्तन तथा नृत्य) का परम आनन्द लूटते रहे।

श्लोक १.४८

বিদায় সময় প্রভু কহিলা সবারে ।
প্রত্যব্দ আসিবে সবে গুণ্ডিচা দেখিবারে ॥৪৮॥

বিদায় সময় প্রভু কহিলা সবারে ।
প্রত্যব্দ আসিবে সবে গুণ্ডিচা দেখিবারে ॥ ৪৮ ॥

বিদায়—বিদাই; **সময়**—সময় पर; **প্রভু**—महाप्रभु ने; **কহিলা**—कहा; **সবারে**—प्रत्येक को; **প্রত্যব্দ**—प्रति वर्ष; **আসিবে**—आपको आना चाहिए; **সবে**—सब; **গুণ্ডিচা**—गुण्डिचा; **দেখিবারে**—देखने के लिए।

अनुवाद

विदाई के समय महाप्रभु ने सभी भक्तों से निवेदन किया, "कृपा करके प्रतिवर्ष भगवान् जगन्नाथ की गुण्डिचा मन्दिर तक की यात्रा (जो रथयात्रा महोत्सव के नाम से विख्यात है) देखने के लिए अवश्य आयें।"

तात्पर्य

सुन्दराचल में गुण्डिचा नामक एक मन्दिर है। भगवान् जगन्नाथ, बलदेव तथा सुभद्रा को तीन रथों में पुरी स्थित मन्दिर से सुन्दराचल स्थित गुण्डिचा मन्दिर तक खींचकर ले जाये जाते हैं। उड़ीसा में इस रथयात्रा उत्सव को जगन्नाथ की गुण्डिचा यात्रा के नाम से जाना जाता है। जहाँ अन्य लोग इसे रथयात्रा उत्सव कहकर पुकारते हैं, वहीं उड़ीसावासी इसे गुण्डिचा यात्रा कहते हैं।

প্রভু-আজ্ঞায় ভক্ত-গণ প্রত্যব্দ আসিয়া ।
গুণ্ডিচা দেখিয়া যা'ন প্রভুরে মিলিয়া ॥৪৯॥

प्रभु-आज्ञाय भक्त-गण प्रत्यब्द आसिया ।
गुण्डिचा देखिया ग्या 'न प्रभुरे मिलिया ॥ ४९ ॥

प्रभु-आज्ञाय—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु की आज्ञा के कारण; **भक्त-गण**—सभी भक्त; **प्रत्यब्द**—प्रति वर्ष; **आसिया**—वहाँ आकर; **गुण्डिचा**—गुण्डिचा-यात्रा का उत्सव; **देखिया**—देखकर; **ग्या 'न**—लौटना; **प्रभुरे**—महाप्रभु; **मिलिया**—मिलकर।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेश का पालन करते हुए सारे भक्त प्रतिवर्ष उन्हें मिलने आते थे। वे जगन्नाथ पुरी में गुण्डिचा-उत्सव देखते और चार मास के बाद अपने घर लौट जाया करते थे।

বিংশতি বত্সর ঐছে কৈলা গতাগতি ।
অন্যোন্যে দুঁহার দুঁহা বিনা নাহি স্থিতি ॥৫০॥
विंशति वत्सर ऐछे कैला गतागति ।
अन्योन्ये दुँहार दुँहा विना नाहि स्थिति ॥ ५० ॥

विंशति—बीस; **वत्सर**—वर्ष; **ऐछे**—इस प्रकार; **कैला**—किया; **गत-आगति**—जाना-आना; **अन्योन्ये**—आपस में; **दुँहार**—चैतन्य महाप्रभु और भक्तों का; **दुँहा**—दोनों; **विना**—बिना; **नाहि**—नहीं; **स्थिति**—शान्ति।

अनुवाद

लगातार बीस वर्षों तक इस प्रकार भेंट होती रही और स्थिति इतनी तीव्र हो गई कि महाप्रभु तथा भक्तगण एक-दूसरे से मिले बिना सुख से नहीं रह पाते थे।

শেষ আর যেই রহে দ্বাদশ বত্সর ।
কৃষ্ণের বিরহ-লীলা প্রভুর অন্তর ॥৫১॥
शेष आर येइ रहे द्वादश वत्सर ।
कृष्णेर विरह-लीला प्रभुर अन्तर ॥ ५१ ॥

शेष—अन्त में; **आर**—शेष; **येइ**—जो कुछ; **रहे**—रहता है; **द्वादश वत्सर**—बारह वर्ष; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **विरह-लीला**—विरह लीलाएँ; **प्रभुर**—महाप्रभु के; **अन्तर**—भीतर।

अनुवाद

महाप्रभु ने अन्तिम बारह वर्ष अपने हृदय के भीतर केवल कृष्ण की विरह-लीला का आस्वादन करने में बिताये।

तात्पर्य

श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु ने कृष्ण के विरह में गोपियों की दशा का आनन्द लिया। जब कृष्ण गोपियों को छोड़कर मथुरा चले गये, तो गोपियाँ अपना शेष जीवन उनके विरह की तीव्र अनुभूति में रोती रहीं। श्री चैतन्य महाप्रभु ने इस विरहानुभूति के रस का स्वयं प्रदर्शन करके इसका अनुमोदन किया।

निरन्तर रात्रि-दिन विरह उन्मादे ।
हासे, कान्दे, नाचे, गाय परम विषादे ॥५२॥

निरन्तर रात्रि-दिन विरह उन्मादे ।
हासे, कान्दे, नाचे, गाय परम विषादे ॥५२॥

निरन्तर—निरन्तर; **रात्रि-दिन**—दिन-रात; **विरह**—विरह के; **उन्मादे**—पागलपन में; **हासे**—हँसते; **कान्दे**—रोते; **नाचे**—नाचते; **गाय**—गाते; **परम**—परम; **विषादे**—शोक में।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु इस विरह-भाव में रात-दिन उन्मत्त प्रतीत होते थे। कभी वे हँसते और कभी विलाप करते; कभी नाचते और कभी अत्यन्त शोक में कीर्तन करते थे।

যে কালে করেন জগন্নাথ দরশন ।
মনে ভাবে, কুরুক্ষেত্রে পাঞাছি মিলন ॥৫৩॥

য়ে কালে করেন জগন্নাথ দরশন ।
মনে ভাবে, কুরুক্ষেত্রে পাঞাছি মিলন ॥৫৩॥

য়ে কালে—उस समय; **करेन**—करते; **जगन्नाथ**—भगवान् जगन्नाथ; **दरशन**—दर्शन; **मने**—मन में; **भावे**—सोचते; **कुरु-क्षेत्रे**—कुरुक्षेत्र के मैदान में; **पाञाछि**—मैंने पा लिया है; **मिलन**—मिलन।

अनुवाद

ऐसे अवसरों पर श्री चैतन्य महाप्रभु जगन्नाथजी के मन्दिर जाया

करते। उस समय उनकी मनोदशा ठीक ठीक उन गोपियों जैसी होती, जिन्होंने दीर्घ विछोह के बाद कुरुक्षेत्र में कृष्ण के दर्शन किये थे। कृष्ण अपने भाई तथा बहन के साथ कुरुक्षेत्र आये हुए थे।

तात्पर्य

जब कृष्ण कुरुक्षेत्र में यज्ञ सम्पन्न कर रहे थे, तो उन्होंने वृन्दावन के समस्त निवासियों को उन्हें मिलने के लिए बुलाया था। चैतन्य महाप्रभु का हृदय कृष्ण के विरह से सदैव पूरित रहता था, किन्तु ज्योंही उन्हें जगन्नाथ मन्दिर जाने का अवसर प्राप्त होता, त्योंही वे उन गोपियों के भाव में पूर्णरूपेण निमग्न हो जाते, जो कुरुक्षेत्र में कृष्ण का दर्शन करने आई थीं।

रथ-यात्राय आगे यबे करेन नर्तन ।
ताहाँ एइ पद मात्र करये गायन ॥५४॥

रथ-यात्राय आगे यबे करेन नर्तन ।
ताहाँ एइ पद मात्र करये गायन ॥५४॥

रथ-यात्राय—रथयात्रा उत्सव में; **आगे**—आगे; **यबे**—जब; **करेन**—करते; **नर्तन**—नृत्य; **ताहाँ**—वहाँ; **एइ**—यह; **पद**—पद; **मात्र**—मात्र; **करये**—करता है; **गायन**—गायन।

अनुवाद

रथयात्रा के समय जब चैतन्य महाप्रभु रथ के आगे नृत्य करते थे, तो वे सदैव निम्नलिखित दो पंक्तियाँ गाते थे।

सेइत पराण-नाथ पाइनु ।
याहा लागी' मदन-दहने झुरि गेनु ॥५५॥

सेइत पराण-नाथ पाइनु ।
याहा लागी' मदन-दहने झुरि गेनु ॥५५॥

सेइत—वही; **पराण-नाथ**—मेरे प्राणनाथ; **पाइनु**—मैंने पा लिये हैं; **याहा**—जिन; **लागि'**—के लिए; **मदन-दहने**—कामाग्नि में; **झुरि**—जलता हुआ; **गेनु**—मैं हो गया हूँ।

अनुवाद

"मैंने अपने प्राणों के उन स्वामी को पा लिया है, जिनके लिए मैं कामाग्नि में जल रहा था।"

तात्पर्य

श्रीमद्भागवत (१०.२९.१५) में कहा गया है :

कामं क्रोधं भयं स्नेहमैक्यं सौहृदमेव च।
नित्यं हरौ विदधतो यान्ति तन्मयतां हि ते॥

काम का अर्थ है काम-वासना, *भय* का अर्थ है डर तथा *क्रोध* का अर्थ है गुस्सा। यदि कोई किसी तरह भी कृष्ण के निकट पहुँच जाता है, तो उसका जीवन सफल हो जाता है। गोपियाँ कृष्ण के पास काम के वशीभूत होकर पहुँची थीं। कृष्ण अत्यन्त सुन्दर किशोर थे और वे उनसे मिलना तथा उनके सामीप्य का सुख प्राप्त करना चाहती थीं। किन्तु यह काम-वासना भौतिक जगत् के काम से भिन्न है। यह संसारी काम-वासना जैसी तो लगती है, किन्तु वास्तव में कृष्ण के प्रति आकर्षण का यह सर्वोच्च रूप है। चैतन्य महाप्रभु संन्यासी थे; उन्होंने अपना घर-बार एवं सर्वस्व त्याग दिया था। उन्हें निःसन्देह कोई भी संसारी विषय-वासना आकर्षित नहीं कर सकती थी। अतएव जब वे *मदन-दहने* (काम की अग्नि में) शब्द का प्रयोग करते थे, तो उनका तात्पर्य यह होता था कि वे शुद्ध कृष्ण-प्रेम जनित वियोग की अग्नि में जल रहे थे। जब भी वे जगन्नाथ का दर्शन करते, चाहे मन्दिर में या रथयात्रा के समय, वे यही सोचा करते, "अब मुझे अपने प्राणनाथ मिल गये हैं।"

एइ धुया-गाने नाचेन द्वितीय प्रहर ।
कृष्ण लञा ब्रजे याइ—ए-भाव अन्तर ॥५६॥

एइ धुया-गाने नाचेन द्वितीय प्रहर ।
कृष्ण लञा व्रजे याइ—ए-भाव अन्तर ॥५६॥

एइ धुया-गाने—इस गीत को दोहराकर; **नाचेन**—वे नाचते; **द्वितीय प्रहर**—दोपहर को; **कृष्ण लञा**—कृष्ण को लेकर; **व्रजे याइ**—मैं वृन्दावन जाऊँ; **ए-भाव**—यह भाव; **अन्तर**—भीतर।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु इस गीत (*सेइत पराणनाथ*) को दिन के दूसरे

पहर में विशेष रूप से गाते और सोचा करते, "मैं कृष्ण को लेकर वृन्दावन लौट जाऊँ।" यह भाव सदैव उनके हृदय में उठता रहता था।

तात्पर्य

श्रीमती राधारानी के भाव में सदैव मग्न रहने के कारण श्री चैतन्य महाप्रभु को उसी तरह का कृष्ण-वियोग अनुभव होता, जैसा श्रीमती राधारानी को कृष्ण के वृन्दावन छोड़कर मथुरा चले जाने पर हुआ था। यह भाव विरह में भगवत्-प्रेम प्राप्त करने में अत्यन्त सहायक होता है। श्री चैतन्य महाप्रभु ने हर एक को सिखलाया है कि मनुष्य को भगवान् का दर्शन पाने के लिए अत्यन्त उतावला नहीं होना चाहिए, प्रत्युत भावावेश में उनसे विरह का अनुभव करना चाहिए। उनका साक्षात्कार करने की इच्छा की अपेक्षा उनसे विरह की अनुभूति करना श्रेयस्कर है। जब वृन्दावन की गोपियाँ तथा गोकुल के निवासी सूर्य-ग्रहण के अवसर पर कृष्ण से कुरुक्षेत्र में मिले, तो वे कृष्ण को अपने साथ वृन्दावन लौटाकर ले जाना चाह रहे थे। जब श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु, जगन्नाथ को मन्दिर में या रथयात्रा में देखा करते थे, तो उनको वही अनुभूति होती थी। वृन्दावन की गोपियों को द्वारका का ऐश्वर्य अच्छा नहीं लगता था। वे कृष्ण को वृन्दावन गाँव में ले जाकर कुंजों में उनके संग का आनन्द प्राप्त करना चाहती थीं। इसी इच्छा का श्री चैतन्य महाप्रभु भी अनुभव करते थे; अतएव जब भगवान् जगन्नाथ गुण्डिचा की यात्रा करते, तब वे रथ के समक्ष भावविभोर होकर नृत्य करते थे।

এই ভাবে নৃত্য-মধ্যে পড়ে এক শ্লোক ।
সেই শ্লোকের অর্থ কেহ নাহি বুঝে লোক ॥৫৭॥

এই ভাবে নৃত্য-মধ্যে পড়ে এক শ্লোক ।
সেই শ্লোকের অর্থ কেহ নাহি বুঝে লোক ॥৫৭॥

এই ভাবে—इस भाव में; **নৃত্য-মধ্যে**—नृत्य करते हुए; **পড়ে**—पढ़ते; **এক**—एक; **শ্লোক**—श्लोक; **সেই শ্লোকের**—उस श्लोक का; **অর্থ**—अर्थ; **কেহ**—कोई; **নাহি**—नहीं; **বুঝে**—समझता; **লোক**—व्यक्ति।

अनुवाद

उस भावावेश में श्री चैतन्य महाप्रभु भगवान् जगन्नाथ के समक्ष नृत्य करते समय एक श्लोक गाया करते थे, जिसका अर्थ लगभग कोई भी नहीं समझ पाता था।

यः कौमार-हरः स एव हि वरस्ता एव चैत्र-क्षपास्
ते चोन्मीलित-मालती-सुरभयः प्रौढ़ाः कदम्बानिलाः ।
सा चैवास्मि तथापि तत्र सुरत-व्यापार-लीला-विधौ
रेवा-रोधसि वेतसी-तरु-तले चेतः समुत्कण्ठते ॥५८॥

यः कौमार-हरः स एव हि वरस्ता एव चैत्र-क्षपास्
ते चोन्मीलित-मालती-सुरभयः प्रौढ़ाः कदम्बानिलाः ।
सा चैवास्मि तथापि तत्र सुरत-व्यापार-लीला-विधौ
रेवा-रोधसि वेतसी-तरु-तले चेतः समुत्कण्ठते ॥५८॥

यः—वही व्यक्ति जो; **कौमार-हरः**—मेरी युवावस्था के दौरान मेरे हृदय को चुराने वाला; **सः**—वह; **एव हि**—अवश्य; **वरः**—प्रेमी; **ताः**—ये; **एव**—ही; **चैत्र-क्षपाः**—चैत्र मास की चाँदनी रातें; **ते**—वे; **च**—और; **उन्मीलित**—पूरी तरह खिला हुआ; **मालती**—मालती पुष्प; **सुरभयः**—सुगन्धि; **प्रौढ़ाः**—पूर्ण, युक्त; **कदम्ब**—कदम्ब पुष्प की सुगन्ध से युक्त; **अनिलाः**—पवन; **सा**—वह; **च**—भी; **एव**—अवश्य; **अस्मि**—मैं हूँ; **तथा अपि**—फिर भी; **तत्र**—वहाँ; **सुरत-व्यापार**—अन्तरंग व्यवहार में; **लीला**—लीलाओं के; **विधौ**—विधि से; **रेवा**—रेवा नामक नदी के; **रोधसि**—के किनारे; **वेतसी**—वेतसी नामक; **तरु-तले**—वृक्ष के नीचे; **चेतः**—मेरा मन; **समुत्कण्ठते**—जाने को अत्यन्त उत्सुक है।

अनुवाद

"जिस व्यक्ति ने मेरी युवावस्था में मेरा हृदय चुरा लिया था, वही अब पुनः मेरा स्वामी है। ये चैत्र-मास की वही चाँदनी रातें हैं, वही मालती फूलों की सुगन्ध है और वही मधुर वायु कदम्ब वन से आ रही है। अपने घनिष्ठ सम्बन्ध में मैं भी वही प्रेमिका हूँ, किन्तु फिर भी मेरा मन यहाँ सुखी नहीं है। मैं रेवा नदी के तट पर वेतसी वृक्ष के नीचे उसी स्थान पर फिर से जाने के लिए लालायित हूँ। यही मेरी इच्छा है।"

तात्पर्य

यह श्लोक श्रील रूप गोस्वामी विरचित *पद्यावली* (३८६) में आया है।

এই শ্লোকের অর্থ জানে একলে স্বরূপ ।
দৈবে সে বৎসর তাহাঁ গিয়াছেন রূপ ॥৫৯॥

এই শ্লোকের অর্থ জানে একলে স্বরূপ ।
দৈবে সে বৎসর তাহাঁ গিয়াছেন রূপ ॥৫৯॥

এइ—इस; **श्लोकेर**—श्लोक का; **अर्थ**—अर्थ; **जाने**—जानते हैं; **एकले**—अकेले; **स्वरूप**—स्वरूप दामोदर; **दैवे**—संयोगवश; **से वत्सर**—उस वर्ष; **ताहाँ**—वहाँ; **गियाछेन**—गये; **रूप**—श्रील रूप गोस्वामी।

अनुवाद

यह श्लोक एक सामान्य भौतिक युवक तथा युवती की लालसा के समान लगता है, किन्तु इसका वास्तविक गहन अर्थ एकमात्र स्वरूप दामोदर को ज्ञात था। संयोगवश रूप गोस्वामी भी एक वर्ष वहाँ उपस्थित थे।

প্রভু-মুখে শ্লোক শুনি' শ্রী-রূপ-গোসাঞি ।
সেই শ্লোকের অর্থ-শ্লোক করিলা তথাই ॥৬০॥

প্রভু-মুখে শ্লোক শুনি' শ্রী-রূপ-গোসাঞি ।
সেই শ্লোকের অর্থ-শ্লোক করিলা তথাই ॥৬০॥

प्रभु-मुखे—श्री चैतन्य महाप्रभु के मुख से; **श्लोक**—श्लोक; **शुनि'**—सुनकर; **श्री-रूप-गोसाञि**—श्रील रूप गोस्वामी; **सेइ**—उसी; **श्लोकेर**—पहले श्लोक का; **अर्थ**—अर्थ करके; **श्लोक**—दूसरा श्लोक; **करिला**—रचा; **तथाइ**—तत्क्षण।

अनुवाद

यद्यपि इस श्लोक का अर्थ केवल स्वरूप दामोदर को ज्ञात था, किन्तु रूप गोस्वामी ने श्री चैतन्य महाप्रभु से इसे सुनकर तुरन्त एक अन्य श्लोक की रचना कर डाली, जिसमें मूल श्लोक का अर्थ दिया गया था।

শ্লোক করি' এক তাল-পত্রেতে লিখিয়া ।
আপন বাসার চালে রাখিল গুঞ্জিয়া ॥৬১॥

শ্লোক করি' এক তাল-পত্রেতে লিখিয়া ।
আপন বাসার চালে রাখিল গুঞ্জিয়া ॥৬১॥

श्लोक करि'—श्लोक रचकर; **एक**—एक; **ताल-पत्रेते**—ताल पत्र पर; **लिखिया**—लिखकर; **आपन**—अपने; **वासार**—निवासस्थान की; **चाले**—छत पर; **राखिल**—रख दिया; **गुञ्जिया**—धकेलकर।

अनुवाद

इस श्लोक की रचना करके रूप गोस्वामी ने इसे एक ताड़ के पत्ते पर लिख दिया और जिस कुटिया में वे रह रहे थे उसकी छत पर रख दिया।

श्लोक राखि' गेला समुद्र-स्नान करिते ।
हेन-काले आइला प्रभु ताँहारे मिलिते ॥ ६२ ॥

श्लोक राखि' गेला समुद्र-स्नान करिते ।
हेन-काले आइला प्रभु ताँहारे मिलिते ॥ ६२ ॥

श्लोक राखि'—श्लोक को इस प्रकार रखकर; **गेला**—गये; **समुद्र-स्नान**—समुद्र स्नान; **करिते**—करने के लिए; **हेन-काले**—इस दौरान; **आइला**—आये; **प्रभु**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु; **ताँहारे**—उन्हें; **मिलिते**—मिलने के लिए।

अनुवाद

इस श्लोक की रचना करके इसे अपने घर की छत पर रखने के बाद श्रील रूप गोस्वामी समुद्र में स्नान करने चले गये। इसी बीच श्री चैतन्य महाप्रभु उनसे मिलने उनकी कुटिया में आये।

हरिदास ठाकुर आर रूप-सनातन ।
जगन्नाथ-मन्दिरे ना या'न तिन जन ॥ ६३ ॥

हरिदास ठाकुर आर रूप-सनातन ।
जगन्नाथ-मन्दिरे ना या'न तिन जन ॥ ६३ ॥

हरिदास ठाकुर—श्रील हरिदास ठाकुर; **आर**—और; **रूप-सनातन**—श्रील रूप गोस्वामी और श्रील सनातन गोस्वामी; **जगन्नाथ-मन्दिरे**—भगवान् जगन्नाथ के मन्दिर में; **ना**—नहीं; **या'न**—जाते; **तिन जन**—तीन व्यक्ति।

अनुवाद

विरोध की स्थिति से बचने के लिए श्रील हरिदास ठाकुर, श्रील रूप

गोस्वामी तथा श्रील सनातन गोस्वामी—ये तीनों महान् भक्त जगन्नाथ मन्दिर में प्रवेश नहीं करते थे।

तात्पर्य

आज भी जगन्नाथ मन्दिर में यह प्रथा है कि जो लोग हिन्दू धर्म नामक वैदिक संस्कृति का दृढ़ता से पालन नहीं करते, उन्हें मन्दिर में प्रवेश करने नहीं दिया जाता। श्रील हरिदास ठाकुर, श्रील रूप गोस्वामी तथा श्रील सनातन गोस्वामी इन तीनों का पहले मुसलमानों से घनिष्ठ सम्बन्ध था। हरिदास ठाकुर तो मुसलमान परिवार में ही जन्मे थे और श्रील रूप गोस्वामी तथा श्रील सनातन गोस्वामी हिन्दू समाज में अपना सामाजिक स्थान त्यागने के पश्चात् मुसलमान सरकार में मन्त्री नियुक्त हुए थे। यहाँ तक कि उन्होंने अपने नाम भी बदलकर दबिर खास तथा साकर मल्लिक रख लिए थे। इस तरह वे ब्राह्मण-समाज से तथाकथित रूप से बहिष्कृत माने जाते थे। फलस्वरूप वे विनयवश जगन्नाथ-मन्दिर में प्रवेश नहीं करते थे, यद्यपि श्री चैतन्य महाप्रभु के रूप में भगवान् जगन्नाथ नित्य ही उनसे स्वयं भेंट करने आते थे। इसी प्रकार कभी-कभी कृष्णभावनामृत संघ के सदस्यों को भी भारत के कुछ मन्दिरों में प्रविष्ट होने नहीं दिया जाता। जब तक हम हरे कृष्ण मन्त्र का जप करते रहते हैं, हमें ऐसी बातों से खिन्न नहीं होना चाहिए। जो भक्त कृष्ण-नाम का जप करते हैं, उनके साथ स्वयं कृष्ण रहते हैं। अतएव किसी मन्दिर में यदि प्रवेश न मिले, तो इसके लिए दुःखी नहीं होना चाहिए। ऐसे अन्धविश्वासी निषेधों का श्री चैतन्य महाप्रभु ने कभी भी अनुमोदन नहीं किया। जिन्हें जगन्नाथ-मन्दिर में प्रवेश के लिए अयोग्य माना जाता था, उनके पास श्री चैतन्य महाप्रभु रोजाना मिलने जाते थे। इससे पता चलता है कि उन्हें ऐसे निषेध मान्य नहीं थे। फिर भी ये महान व्यक्ति मन्दिर में किसी प्रकार की अनावश्यक खलबली से बचने के लिए जगन्नाथ-मन्दिर में प्रवेश नहीं करते थे।

মহাপ্রভু জগন্নাথের উপল-ভোগ দেখিয়া ।
নিজ-গৃহে যা'ন এই তিনেরে মিলিয়া ॥ ৬৪॥

महाप्रभु जगन्नाथेर उपल-भोग देखिया ।
निज-गृहे या'न एइ तिनेरे मिलिया ॥ ६४॥

महाप्रभु—श्री चैतन्य महाप्रभु; **जगन्नाथेर**—भगवान् जगन्नाथ का; **उपल-भोग**—पत्थर पर भोग अर्पण; **देखिया**—देखकर; **निज-गृहे**—अपने घर; **ग्रा'न**—जाते; **एइ**—इन; **तिनेरे**—तीनों को; **मिलिया**—मिलने के लिए।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु नित्यप्रति जगन्नाथ मन्दिर में उपलभोग उत्सव देखते थे और उसके बाद वे अपने निवासस्थान लौटते समय इन तीनों महापुरुषों से भेंट किया करते थे।

तात्पर्य

उपलभोग एक विशेष प्रकार का भोग है, जो गरुड़-स्तम्भ के पीछे एक पत्थर के ऊपर चढ़ाया जाता है। यह पत्थर *उपल* कहलाता है। सारा भोग जगन्नाथ के सिंहासन के नीचे मन्दिर-कक्ष के भीतर अर्पण किया जाता है। किन्तु यह भोग जनता के सामने पत्थर पर अर्पण किया जाता है, इसीलिए यह उपलभोग कहलाता है।

এই তিন মধ্যে যবে থাকে যেই জন ।
তাঁরে আসি' আপনে মিলে,——প্রভুর নিয়ম ॥ ৬৫ ॥

एइ तिन मध्ये ग्रबे थाके ग्रेइ जन ।
ताँरे आसि' आपने मिले,——प्रभुर नियम ॥ ६५ ॥

एइ तिन मध्ये—इन तीनों में; **ग्रबे**—जब; **थाके**—रह जाता है; **ग्रेइ जन**—वही व्यक्ति जो; **ताँरे**—उनको; **आसि'**—आकर; **आपने मिले**—स्वयं मिलते; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु का; **नियम**—नियम।

अनुवाद

यदि इन तीनों में से कोई एक उपस्थित नहीं होता था, तो वे शेष जनों से मिलते थे। यह उनका दैनिक नियम था।

দৈবে আসি' প্রভু যবে ঊর্দ্ধ্বেতে চাহিলা ।
চালে গোঁজা তাল-পত্রে সেই শ্লোক পাইলা ॥ ৬৬ ॥

दैवे आसि' प्रभु ग्रबे ऊर्ध्वेते चाहिला ।
चाले गोंजा ताल-पत्रे सेइ श्लोक पाइला ॥ ६६ ॥

दैवे—अचानक; **आसि'**—वहाँ आकर; **प्रभु**—प्रभु; **यबे**—जब; **ऊर्ध्वेते**—छत पर; **चाहिला**—उन्होंने देखा; **चाले**—छत पर; **गोंजा**—रखा हुआ; **ताल-पत्रे**—ताल पत्र पर; **सेइ**—वह; **श्लोक**—श्लोक; **पाइला**—पाया।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु श्रील रूप गोस्वामी के आवास में गये, तो संयोगवश उन्होंने छत पर रखा ताड़-पत्र देख लिया और उन्होंने उनके द्वारा रचित उस श्लोक को पढ़ा।

श्लोक पड़ि' आछे प्रभु आविष्ट हइया ।
रूप-गोसाञि आसि' पड़े दण्डवत् हञा ॥ ६७॥

श्लोक पड़ि' आछे प्रभु आविष्ट हइया ।
रूप-गोसाञि आसि' पड़े दण्डवत् हञा ॥ ६७॥

श्लोक पड़ि'—श्लोक पढ़कर; **आछे**—आ गये; **प्रभु**—महाप्रभु; **आविष्ट**—भावावेश में; **हइया**—होकर; **रूप-गोसाञि**—श्रील रूप गोस्वामी; **आसि'**—आकर; **पड़े**—गिर पड़े; **दण्डवत्**—दण्डवत्; **हञा**—होकर।

अनुवाद

इस श्लोक को पढ़कर श्री चैतन्य महाप्रभु को भावावेश हो आया। जब वे इस दशा में थे, तो श्रील रूप गोस्वामी आ गये और वे तुरन्त ही भूमि पर दण्डवत् गिर पड़े।

तात्पर्य

दण्ड शब्द का अर्थ है डंडा। डंडा सीधा गिरता है। उसी प्रकार जब किसी गुरुजन को कोई साष्टांग प्रणाम करता है, तो वह *दण्डवत्* कहलाता है। कभी-कभी हम दण्डवत् शब्द का प्रयोग करते हैं, किन्तु भूमि पर गिरते नहीं। कुछ भी हो, दण्डवत् का अर्थ है, किसी गुरुजन के समक्ष डंडे की भाँति गिरना।

उठि' महाप्रभु ताँरे चापड़ मारिया ।
कहिते लागिला किछु कोलेते करिया ॥ ६८॥

उठि' महाप्रभु ताँरे चापड़ मारिया ।
कहिते लागिला किछु कोलेते करिया ॥ ६८॥

उठि'—उठकर; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ताँरे**—रूप गोस्वामी को; **चापड़ मारिया**—थप्पड़ मारकर (चपत लगाकर); **कहिते**—कहने; **लागिला**—लगे; **किछु**—कुछ; **कोलेते**—गोद में; **करिया**—लेकर।

अनुवाद

जब श्रील रूप गोस्वामी डंडे के समान गिर पड़े, तो श्री चैतन्य महाप्रभु उठे और उन्हें एक चपत लगाई। फिर उन्हें अपनी गोद में लेकर उनसे इस प्रकार कहा :

মোর শ্লোকের অভিপ্রায় না জানে কোন জনে ।
মোর মনের কথা তুমি জানিলে কেমনে? ॥৬৯॥

मोर श्लोकेर अभिप्राय ना जाने कोन जने ।
मोर मनेर कथा तुमि जानिले केमने? ॥६९॥

मोर—मेरे; **श्लोकेर**—श्लोक का; **अभिप्राय**—अभिप्राय; **ना**—नहीं; **जाने**—जानता है; **कोन**—कोई; **जने**—व्यक्ति; **मोर**—मेरे; **मनेर**—मन का; **कथा**—भाव; **तुमि**—तुम; **जानिले**—समझ गये; **केमने**—कैसे।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "मेरे श्लोक का तात्पर्य कोई नहीं जानता। तुम मेरे मन के भाव को कैसे समझ गये?"

এত বলি' তাঁরে বহু প্রসাদ করিয়া ।
স্বরূপ-গোসাঞিরে শ্লোক দেখাইল লঞা ॥৭০॥

एत बलि' ताँरे बहु प्रसाद करिया ।
स्वरूप-गोसाञिरे श्लोक देखाइल लञा ॥७०॥

एत बलि'—यह कहकर; **ताँरे**—रूप गोस्वामी को; **बहु**—बहुत; **प्रसाद**—कृपा; **करिया**—की; **स्वरूप-गोसाञिरे**—स्वरूप गोस्वामी को; **श्लोक**—श्लोक; **देखाइल**—दिखाया; **लञा**—लेकर।

अनुवाद

यह कहकर श्री चैतन्य महाप्रभु ने श्रील रूप गोस्वामी को अनेक

आशीर्वाद दिये और उस श्लोक को ले जाकर बाद में स्वरूप गोस्वामी को दिखलाया।

स्वरूपे पुछेन प्रभु हइया विस्मिते ।
मोर मनेर कथा रूप जानिल केमते ॥७१॥

स्वरूपे पुछेन प्रभु हइया विस्मिते ।
मोर मनेर कथा रूप जानिल केमते ॥७१॥

स्वरूपे—स्वरूप गोस्वामी को; **पुछेन**—पूछा; **प्रभु**—महाप्रभु ने; **हइया**—होकर; **विस्मिते**—विस्मित होकर; **मोर**—मेरे; **मनेर**—मन का; **कथा**—भाव; **रूप**—रूप गोस्वामी; **जानिल**—समझ गये; **केमते**—कैसे।

अनुवाद

स्वरूप दामोदर को अत्यन्त आश्चर्य के साथ वह श्लोक दिखाते हुए चैतन्य महाप्रभु ने उनसे पूछा कि रूप गोस्वामी किस तरह उनके मन के भाव को समझ सके।

तात्पर्य

हमें भी इसी प्रकार का आशीर्वाद श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती गोस्वामी से तब प्राप्त करने का सुअवसर मिला, जब हमने उनकी वर्षगाँठ पर एक लेख भेंट किया था। वे इस लेख से इतने प्रसन्न थे कि वे अपने कुछ विश्वस्त भक्तों को बुलाकर वे उन्हें यह लेख दिखलाया करते थे। आखिर हमने श्रील प्रभुपाद के मनोभावों को किस तरह समझ लिया?

स्वरूप कहे,—याते जानिल तोमार मन ।
ताते जानि,—हय तोमार कृपार भाजन ॥७२॥

स्वरूप कहे,—याते जानिल तोमार मन ।
ताते जानि,—हय तोमार कृपार भाजन ॥७२॥

स्वरूप कहे—स्वरूप दामोदर ने उत्तर दिया; **याते**—चूँकि; **जानिल**—वे जानते थे; **तोमार**—आपके; **मन**—मन का भाव; **ताते**—अतः; **जानि**—मैं समझ सकता हूँ; **हय**—वे हैं; **तोमार**—आपकी; **कृपार**—कृपा के; **भाजन**—पात्र।

अनुवाद

श्रील स्वरूप दामोदर गोस्वामी ने श्री चैतन्य महाप्रभु से कहा, "यदि रूप गोस्वामी आपके मन तथा भावों को जान सकते हैं, तो अवश्य ही उन्हें आपका विशेष आशीर्वाद प्राप्त हुआ होगा।"

प्रभु कहे,—तारे आमि सन्तुष्ट हञा ।
आलिङ्गन कैलु सर्व-शक्ति सञ्चारिया ॥७३॥

प्रभु कहे,—तारे आमि सन्तुष्ट हञा ।
आलिङ्गन कैलु सर्व-शक्ति सञ्चारिया ॥७३॥

प्रभु कहे—महाप्रभु ने कहा; **तारे**—उसको; **आमि**—मैं; **सन्तुष्ट हञा**—अत्यन्त सन्तुष्ट होकर; **आलिङ्गन कैलु**—आलिंगन किया; **सर्व-शक्ति**—सब शक्तियाँ; **सञ्चारिया**—प्रदान की।

अनुवाद

महाप्रभु ने कहा, "मैं रूप गोस्वामी से इतना प्रसन्न था कि मैंने उसका आलिंगन कर लिया और उसे भक्ति की विधि का प्रचार करने के लिए सारी आवश्यक शक्तियाँ प्रदान कर दीं।

योग्य पात्र हय गूढ़-रस-विवेचने ।
तुमिओ कहिओ तारे गूढ़-रसाख्याने ॥७४॥

योग्य पात्र हय गूढ़-रस-विवेचने ।
तुमिओ कहिओ तारे गूढ़-रसाख्याने ॥७४॥

योग्य—योग्य; **पात्र**—पात्र; **हय**—है; **गूढ़**—गूढ़, रहस्यमय; **रस**—रस; **विवेचने**—विवेचन करने में; **तुमिओ**—तुम भी; **कहिओ**—कहो; **तारे**—उसको; **गूढ़**—गूढ़, रहस्यपूर्ण; **रस**—रस; **आख्याने**—वर्णन करके।

अनुवाद

"मैं श्रील रूप गोस्वामी को भक्ति के गुह्य रस को समझने के लिए सर्वथा योग्य समझता हूँ और संस्तुति करता हूँ कि तुम उसे भक्ति के विषय में और आगे बतलाओ।"

এ-সব কহিব আগে বিস্তার করিঞা ।
সঙ্ক্ষেপে উদ্দেশ কৈল প্রস্তাব পাইঞা ॥৭৫॥

ए-सब कहिब आगे विस्तार करिञा ।
संक्षेपे उद्देश कैल प्रस्ताव पाइञा ॥७५॥

ए-सब—ये सब; **कहिब**—मैं कहूँगा; **आगे**—बाद में; **विस्तार**—विस्तार; **करिञा**—करके; **संक्षेपे**—संक्षेप में; **उद्देश**—वर्णन; **कैल**—किया; **प्रस्ताव**—अवसर; **पाइञा**—पाकर।

अनुवाद

मैं इन सब घटनाओं के बारे में बाद में विस्तार से बतलाऊँगा। यहाँ पर मैंने केवल संक्षिप्त वर्णन किया है।

প্রিয়ঃ সোঽয়ং কৃষ্ণঃ সহচরি কুরুক্ষেত্র-মিলিতস্
তথাহং সা রাধা তদিদমুভয়োঃ সঙ্গম-সুখম্ ।
তথাপ্যন্তঃ-খেলন্মধুর-মুরলী-পঞ্চম-জুষে
মনো মে কালিন্দী-পুলিন-বিপিনায় স্পৃহয়তি ॥৭৬॥

प्रियः सोऽयं कृष्णः सहचरि कुरुक्षेत्र-मिलितस्
तथाहं सा राधा तदिदमुभयोः सङ्गम-सुखम् ।
तथाप्यन्तः-खेलन्मधुर-मुरली-पञ्चम-जुषे
मनो मे कालिन्दी-पुलिन-विपिनाय स्पृहयति ॥७६॥

प्रियः—अत्यन्त प्रिय; **सः**—वे; **अयम्**—यह; **कृष्णः**—भगवान् कृष्ण; **सहचरि**—हे प्रिय सखी; **कुरुक्षेत्र-मिलितः**—जो कुरुक्षेत्र के मैदान में मिले हैं; **तथा**—भी; **अहम्**—मैं; **सा**—वही; **राधा**—राधारानी; **तत्**—वह; **इदम्**—यह; **उभयोः**—हम दोनों; **सङ्गम-सुखम्**—मिलने का सुख; **तथा अपि**—तथापि; **अन्तः**—अन्दर; **खेलन्**—वादन; **मधुर**—मधुर; **मुरली**—मुरली का; **पञ्चम**—पंचम सुर; **जुषे**—जो प्रसन्न करता है; **मनः**—मन; **मे**—मेरा; **कालिन्दी**—यमुना नदी के; **पुलिन**—तट पर; **विपिनाय**—वृक्ष; **स्पृहयति**—चाहती है।

अनुवाद

[यह श्रीमती राधारानी द्वारा कहा गया श्लोक है।] "हे प्रिय सखी, अब मैं इस कुरुक्षेत्र में अपने अत्यन्त पुराने और प्रिय मित्र कृष्ण से मिली हूँ। मैं वही राधारानी हूँ और अब हम मिल रहे हैं। यह अत्यन्त सुखद है, किन्तु अब भी मेरा मन यमुना-तट पर वहाँ के वन के वृक्षों के नीचे बैठने

के लिए लालायित है। मैं वृन्दावन के वन के भीतर पंचम स्वर में गूँजने वाली उनकी मधुर मुरली की ध्वनि सुनने की इच्छुक हूँ।"

तात्पर्य

यह श्लोक श्रील रूप गोस्वामी कृत *पद्यावली* (३८७) में भी आया है।

एइ श्लोकेर सङ्क्षेपार्थ शुन, भक्त-गण ।
जगन्नाथ देखि' यैछे प्रभुर भावन ॥७७॥

एइ श्लोकेर संक्षेपार्थ शुन, भक्त-गण ।
जगन्नाथ देखि' ग्रैछे प्रभुर भावन ॥७७॥

एइ—यह; **श्लोकेर**—श्लोक का; **संक्षेप-अर्थ**—संक्षिप्त अर्थ; **शुन**—सुनो; **भक्त-गण**—हे भक्तगण; **जगन्नाथ**—भगवान् जगन्नाथ; **देखि'**—दर्शन करके; **ग्रैछे**—जैसे; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु की; **भावन**—भावना।

अनुवाद

अब हे भक्तों, इस श्लोक की संक्षिप्त व्याख्या सुनो। श्री चैतन्य महाप्रभु जगन्नाथ के विग्रह का दर्शन करते हुए इस प्रकार सोचते थे।

श्री-राधिका कुरुक्षेत्रे कृष्णेर दरशन ।
यद्यपि पायेन, तबु भावेन ऐछन ॥७८॥

श्री-राधिका कुरुक्षेत्रे कृष्णेर दरशन ।
यद्यपि पायेन, तबु भावेन ऐछन ॥७८॥

श्री-राधिका—श्रीमती राधारानी; **कुरुक्षेत्रे**—कुरुक्षेत्र के मैदान में; **कृष्णेर**—भगवान् कृष्ण के; **दरशन**—दर्शन; **यद्यपि**—यद्यपि; **पायेन**—वे करती हैं; **तबु**—फिर भी; **भावेन**—सोचती हैं; **ऐछन**—इस प्रकार।

अनुवाद

वे उन श्रीमती राधारानी के विषय में सोच रहे थे, जो कृष्ण से कुरुक्षेत्र में मिली थीं। यद्यपि वे कृष्ण से वहाँ मिल चुकी थीं, किन्तु फिर भी वे उनके विषय में इस प्रकार सोच रही थीं।

রাজ-বেশ, হাতী, ঘোড়া, মনুষ্য গহন ।
কাহাঁ গোপ-বেশ, কাহাঁ নির্জন বৃন্দাবন ॥৭৯॥

राज-वेश, हाती, घोड़ा, मनुष्य गहन ।
काहाँ गोप-वेश, काहाँ निर्जन वृन्दावन ॥ ७९ ॥

राज-वेश—राजसी वेशभूषा; **हाती**—हाथी; **घोड़ा**—घोड़े; **मनुष्य**—मनुष्य; **गहन**—भीड़; **काहाँ**—कहाँ; **गोप-वेश**—ग्वाले की पोशाक (वेशभूषा); **काहाँ**—कहाँ; **निर्जन**—निर्जन; **वृन्दावन**—वृन्दावन।

अनुवाद

वे कृष्ण को वृन्दावन के शान्त वातावरण में गोपवेश धारण किये हुए सोच रही थीं। किन्तु कुरुक्षेत्र में तो वे राजसी वेश में थे और उनके साथ हाथी, घोड़े तथा लोगों का समूह था। इस प्रकार वहाँ का वातावरण उनके मिलन के लिए अनुकूल नहीं था।

সেই ভাব, সেই কৃষ্ণ, সেই বৃন্দাবন ।
যবে পাই, তবে হয় বাঞ্ছিত পূরণ ॥৮০॥

सेइ भाव, सेइ कृष्ण, सेइ वृन्दावन ।
यबे पाइ, तबे हय वाञ्छित पूरण ॥ ८० ॥

सेइ भाव—वही परिस्थिति; **सेइ कृष्ण**—वे कृष्ण; **सेइ वृन्दावन**—वही वृन्दावन; **यबे पाइ**—यदि मैं पा जाऊँ; **तबे**—तब; **हय**—है; **वाञ्छित**—वांछित वस्तु; **पूरण**—पूर्ण।

अनुवाद

इस प्रकार कृष्ण से मिलकर और वृन्दावन के वातावरण के विषय में सोचकर राधारानी ने मन ही मन चाहा कि वे मुझे पुनः वृन्दावन ले जाकर उस शान्त वातावरण में मेरी इच्छा पूरी करें।

আহুশ্চ তে নলিন-নাভ পদারবিন্দং
যোগেশ্বরৈর্হৃদি বিচিন্ত্যমগাধ-বোধৈঃ ।
সংসার-কূপ-পতিতোত্তরণাবলম্বং
গেহং জুষামপি মনস্যুদিয়াত্সদা নঃ ॥৮১॥

आहुश्च ते नलिन-नाभ पदारविन्दं
योगेश्वरैर्हृदि विचिन्त्यमगाध-बोधैः ।
संसार-कूप-पतितोत्तरणावलम्बं
गेहं जुषामपि मनस्युदियात्सदा नः ॥ ८१ ॥

आहुः—गोपियों ने कहा; **च**—और; **ते**—आपके; **नलिन-नाभ**—हे प्रभु! जिनकी नाभि एक कमल-पुष्प के समान है; **पद-अरविन्दम्**—चरणकमल; **योग-ईश्वरैः**—महान् योगियों से; **हृदि**—हृदय में; **विचिन्त्यम्**—ध्यान करने के योग्य; **अगाध-बोधैः**—जो सर्वोच्च विद्वान दार्शनिक थे; **संसार-कूप**—भौतिक संसार का अन्धा कुआँ; **पतित**—पतितों का; **उत्तरण**—उद्धारकों का; **अवलम्बम्**—एकमात्र आश्रय; **गेहम्**—पारिवारिक व्यवहार; **जुषाम्**—जो लगे हुए हैं, उनके; **अपि**—यद्यपि; **मनसि**—मनों में; **उदियात्**—जागृत हो; **सदा**—सदा; **नः**—हमारे।

अनुवाद

गोपियाँ इस प्रकार बोलीं : "हे कमल-पुष्प जैसी नाभि वाले प्रभु! आपके चरणकमल इस भौतिक अस्तित्वरूपी गहरे कुएँ में गिरे हुए व्यक्तियों के लिए एकमात्र आश्रय हैं। आपके चरणों की पूजा एवं ध्यान बड़े-बड़े योगियों और विद्वान दार्शनिकों द्वारा किया जाता है। हमारी मनोकामना है कि ये चरणकमल हमारे हृदयों के भीतर भी उदित हों, यद्यपि हम घर के कार्यकलापों में लगी हुईं साधारण स्त्रियाँ हैं।

तात्पर्य

यह श्लोक *श्रीमद्भागवत* (१०.८२.४८) से लिया गया है।

तोमार चरण मोर ब्रज-पुर-घरे ।
उदय करये यदि, तबे वाञ्छा पूरे ॥ ८२ ॥

तोमार चरण मोर व्रज-पुर-घरे ।
उदय करये यदि, तबे वाञ्छा पूरे ॥ ८२ ॥

तोमार—आपके; **चरण**—चरणकमल; **मोर**—मेरे; **व्रज-पुर-घरे**—वृन्दावन के घर में; **उदय**—जागृत करना; **करये**—मैं करती हूँ; **यदि**—यदि; **तबे**—तब; **वाञ्छा**—इच्छाएँ; **पूरे**—पूरी हों।

अनुवाद

गोपियों ने सोचा, "हे प्रभु! यदि आपके चरणकमलों का हमारे

वृन्दावन स्थित घरों में फिर पदार्पण हो, तो हमारी मनोकामनाएँ पूरी हो जायेंगी।"

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने अपनी कृति *अनुभाष्य* में टीका की है, "गोपियाँ निष्काम भाव से पूर्णत: भगवान् की सेवा में लगी हुई हैं। वे न तो कृष्ण के ऐश्वर्य से तथा न ही कृष्ण को भगवान् समझ करके उनसे आकर्षित हैं।" गोपियाँ स्वाभाविक रूप से कृष्ण से प्रेम करने के लिए उन्मुख थीं, क्योंकि वे वृन्दावन गाँव के एक आकर्षक युवक थे। ग्रामीण बालिकाएँ होने के कारण गोपियाँ कुरुक्षेत्र से अत्यधिक आकृष्ट नहीं हुईं, जहाँ कृष्ण हाथी-घोड़े तथा राजसी ठाठ से युक्त उपस्थित थे। वास्तव में उन्होंने कृष्ण की इस वातावरण में अधिक सराहना नहीं की। कृष्ण गोपियों के ऐश्वर्य या उनके व्यक्तिगत सौन्दर्य से नहीं, अपितु उनकी शुद्ध भक्ति से आकृष्ट थे। इसी तरह गोपियाँ राजकुमार कृष्ण से नहीं, अपितु गोप-कुमार कृष्ण के प्रति आकृष्ट थीं। भगवान् कृष्ण अचिन्त्य रूप से शक्तिमान हैं। उन्हें समझने के लिए बड़े-बड़े योगी तथा सन्त-महात्मा सारे भौतिक कार्यों को त्यागकर उनका ध्यान करते हैं। इसी तरह भौतिक भोग में लिप्त रहने वाले, भौतिक ऐश्वर्य की वृद्धि चाहने वाले, परिवार का भरण-पोषण करने वाले या इस संसार से मुक्ति चाहने वाले लोग पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की शरण में जाते हैं। किन्तु ऐसे कार्यों तथा इच्छाओं से गोपियाँ पूर्णतया अनजान हैं। वे इस प्रकार के शुभ कार्य करने में तनिक भी दक्ष नहीं हैं। पहले से आध्यात्मिक रूप से प्रबुद्ध होने के कारण वे दूर स्थित वृन्दावन गाँव में भगवान् की सेवा करने में अपनी विशुद्ध इन्द्रियों को लगाती हैं। वे गोपियाँ न तो शुष्क ज्ञान में, न कला, संगीत या अन्य सांसारिक विषयों में कोई रुचि रखती हैं। वे भौतिक भोग तथा वैराग्य के ज्ञान से सर्वथा अनजान हैं। इनकी एकमात्र अभिलाषा यह है कि कृष्ण वापस आकर इनके साथ दिव्य लीलाएँ करके आनन्द लें। इनकी इतनी ही इच्छा है कि कृष्ण वृन्दावन में ही रहे, जिससे वे उनकी प्रसन्नता के लिए उनकी सेवा कर सकें। इसमें लेशमात्र भी निजी इन्द्रियतृप्ति का भाव नहीं है।

ভাগবতের শ্লোক-গূঢ়ার্থ বিশদ করিঞা ।
রূপ-গোসাঞি শ্লোক কৈল লোক বুঝাইঞা ॥ ৮৩ ॥

भागवतेर श्लोक-गूढ़ार्थ विशद करिञा ।
रूप-गोसाञि श्लोक कैल लोक बुझाइञा ॥ ८३ ॥

भागवतेर—*श्रीमद्भागवत* का; **श्लोक**—श्लोक; **गूढ़-अर्थ**—गूढ़ अर्थ; **विशद**—विस्तृत वर्णन; **करिञा**—करके; **रूप-गोसाञि**—श्रील रूप गोस्वामी; **श्लोक**—श्लोक; **कैल**—रचा; **लोक**—सामान्य लोग; **बुझाइञा**—समझाने हेतु।

अनुवाद

श्रील रूप गोस्वामी ने साधारण जनों को समझाने के लिए श्रीमद्भागवत के श्लोक के गुह्य अर्थ को एक श्लोक में बतलाया है।

या ते लीला-रस-परिमलोदगारि-वन्यापरीता
धन्या क्ष्मोणी विलसति वृता माथुरी माधुरीभिः ।
तत्रास्माभिश्चटुल-पशुपी-भाव-मुग्धान्तराभिः
संवीतस्त्वं कलय वदनोल्लासि-वेणुर्विहारम् ॥ ८४ ॥

या ते लीला-रस-परिमलोद्गारि-वन्यापरीता
धन्या क्षौणी विलसति वृता माथुरी माधुरीभिः ।
तत्रास्माभिश्चटुल-पशुपी-भाव-मुग्धान्तराभिः
संवीतस्त्वं कलय वदनोल्लासि-वेणुर्विहारम् ॥ ८४ ॥

या—वह; **ते**—आपके; **लीला-रस**—लीलाओं से प्राप्त रस में; **परिमल**—सुगन्ध; **उद्गारि**—फैलाकर; **वन्य-आपरीता**—वनों से भरे; **धन्या**—धन्य; **क्षौणी**—धरती; **विलसति**—भोगता है; **वृता**—घिरे हुए; **माथुरी**—मथुरा प्रदेश; **माधुरीभिः**—सौन्दर्य से; **तत्र**—वहाँ; **अस्माभिः**—हमारे द्वारा; **चटुल**—टिमटिमाते हुए; **पशुपी-भाव**—गोपियों की तरह प्रसन्न भाव से; **मुग्ध-अन्तराभिः**—मुग्ध हृदयों वालों से; **संवीतः**—घिरे हुए; **त्वम्**—आप; **कलय**—कृपा करो; **वदन**—मुख पर; **उल्लासि**—थिरकती हुई; **वेणुः**—बांसुरी से; **विहारम्**—क्रीड़ा युक्त लीलाएँ।

अनुवाद

गोपियों ने आगे कहा—"हे कृष्ण! आपके लीला-रसों की सुगन्धि मथुरा जनपद की माधुरी से घिरे हुए वृन्दावन की धन्य भूमि के वनों में व्याप्त है। इस अद्भुत भूमि के अनुकूल वातावरण में अपने अधरों पर

थिरकने वाली बाँसुरी से तथा हम गोपियों के मध्य, जिनके हृदय अकथनीय आह्लादपूर्ण भावों से सदैव मोहित रहते हैं, आप अपनी लीलाओं का आनन्द लूट सकते हैं।"

तात्पर्य

यह श्लोक श्रील रूप गोस्वामी रचित *ललित माधव* (१०.३८) से लिया गया है।

एइ-मत महाप्रभु देखि' जगन्नाथे ।
सुभद्रा-सहित देखे, वंशी नाहि हाते ॥८५॥

एइ-मत—इस प्रकार; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **देखि'**—देखकर; **जगन्नाथे**—भगवान् जगन्नाथ; **सुभद्रा**—सुभद्रा; **सहित**—सहित; **देखे**—वे देखते हैं; **वंशी**—वंशी; **नाहि**—नहीं; **हाते**—हाथ में।

अनुवाद

इस तरह जब श्री चैतन्य महाप्रभु ने जगन्नाथ का दर्शन किया, तो उन्होंने देखा कि वे अपनी बहन सुभद्रा के साथ थे और उनके हाथ में वंशी नहीं थी।

त्रिभङ्ग-सुन्दर व्रजे व्रजेन्द्र-नन्दन ।
काहाँ पाब, एइ वाञ्छा बाड़े अनुक्षण ॥८६॥

त्रिभङ्ग—त्रिभंग, तीन स्थानों पर मुड़े; **सुन्दर**—सुन्दर; **व्रजे**—वृन्दावन में; **व्रजेन्द्र-नन्दन**—नन्द महाराज के पुत्र; **काहाँ**—कहाँ; **पाब**—पाऊँगा; **एइ**—यह; **वाञ्छा**—इच्छा; **बाड़े**—बढ़ती है; **अनुक्षण**—लगातार।

अनुवाद

गोपियों के हर्षोन्माद भाव में मग्न श्री चैतन्य महाप्रभु भगवान् जगन्नाथ को अपने आदि स्वरूप, वृन्दावन में त्रिभंगी शरीर के कारण

अत्यन्त सुन्दर लगने वाले नन्दनन्दन कृष्ण-रूप में देखना चाहते थे। इस रूप का दर्शन करने की उनकी इच्छा निरन्तर बढ़ती जा रही थी।

राधिका-उन्माद यैछे उद्धव-दर्शने ।
उदघूर्णा-प्रलाप तैछे प्रभुर रात्रि-दिने ॥ ८७॥

राधिका-उन्माद यैछे उद्धव-दर्शने ।
उद्घूर्णा-प्रलाप तैछे प्रभुर रात्रि-दिने ॥ ८७॥

राधिका-उन्माद—श्रीमती राधारानी का उन्माद; **यैछे**—जैसा; **उद्धव-दर्शने**—उद्धव को देखने से; **उद्घूर्णा-प्रलाप**—उन्माद में असंगत बातचीत; **तैछे**—इसी प्रकार; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु का; **रात्रि-दिने**—दिन-रात।

अनुवाद

जिस प्रकार श्रीमती राधारानी ने उद्धव की उपस्थिति में एक भौंरे से असंगत रूप में प्रलाप किया था, उसी तरह श्री चैतन्य महाप्रभु भावावेश में उन्मत्त की तरह रात-दिन असंगत बातें करते थे।

तात्पर्य

यह *उन्माद* साधारण पागलपन नहीं है। जब श्री चैतन्य महाप्रभु विक्षिप्त की भाँती असंगत बातें करते थे, तब वे दिव्य प्रेम के भावोन्माद में रहते थे। ऐसी सर्वोच्च भावदशा में मोहने वाले की उपस्थिति में मोहित होने की अनुभूति होती है। जब मोहने वाला तथा मोहित विलग होते हैं, तब *मोहन* अर्थात् भ्रम उत्पन्न होता है। जब कोई वियोग के कारण इस प्रकार भ्रमित हो जाता है, तो वह स्तब्ध हो जाता है और उस समय उसके शरीर में दिव्य भावावेश के सारे लक्षण प्रकट हो जाते हैं। इन लक्षणों के प्रकट होने पर भक्त अचिन्त्य रूप से उन्मत्त दिखाई देता है। इसे आध्यात्मिक उन्माद कहते हैं। इस अवस्था में काल्पनिक वार्तालाप होता है और उन्मत्त व्यक्ति की-सी अनुभूति होने लगती है। श्रीमती राधारानी की उन्माद दशा का वर्णन करते हुए उद्धव ने कृष्ण से कहा, "हे कृष्ण, आपके वियोग की अत्यन्त उत्कटता के कारण श्रीमती राधारानी कभी जंगल के कुंज में शयन करती हैं, कभी श्याम वर्ण के बादलों को कोसती हैं और कभी जंगल के गहन अंधकार में इधर-उधर विचरण करती हैं। इस तरह वे तो पगली सी बन गई हैं।"

দ্বাদশ বত্সর শেষ ঐছে গোঙাইল ।
এই মত শেষ-লীলা ত্রি-বিধানে কৈল ॥ ৮৮ ॥

द्वादश वत्सर शेष ऐछे गोङाइल ।
एइ मत शेष-लीला त्रि-विधाने कैल ॥ ८८ ॥

द्वादश—बारह; **वत्सर**—वर्ष; **शेष**—अन्तिम; **ऐछे**—उस प्रकार; **गोङाइल**—बिताए; **एइ मत**—इस प्रकार; **शेष-लीला**—अन्तिम लीलाएँ; **त्रि-विधाने**—तीन प्रकार से; **कैल**—की।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के अन्तिम बारह वर्ष इसी दिव्य उन्माद में बीते। इस तरह उन्होंने अपनी अन्त्य लीलाएँ तीन प्रकार से सम्पन्न कीं।

সন্ন্যাস করি' চব্বিশ বত্সর কৈলা যে যে কর্ম ।
অনন্ত, অপার—তার কে জানিবে মর্ম ॥ ৮৯ ॥

सन्न्यास करि' चब्बिश वत्सर कैला ये ये कर्म ।
अनन्त, अपार—तार के जानिबे मर्म ॥ ८९ ॥

सन्न्यास करि'—संन्यास लेने के बाद; **चब्बिश वत्सर**—चौबीस वर्ष; **कैला**—की; **ये ये**—जो जो; **कर्म**—लीलाएँ; **अनन्त**—अनन्त; **अपार**—अपार; **तार**—उनका; **के**—कौन; **जानिबे**—जानेगा; **मर्म**—भेद, रहस्य।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने संन्यास ग्रहण करने के बाद चौबीस वर्षों तक जो-जो लीलाएँ कीं, वे असंख्य तथा अपार थीं। ऐसी लीलाओं का मर्म भला कौन समझ सकता है?

উদ্দেশ করিতে করি দিগ্দরশন ।
মুখ্য মুখ্য লীলার করি সূত্র গণন ॥ ৯০ ॥

उद्देश करिते करि दिग्दरशन ।
मुख्य मुख्य लीलार करि सूत्र गणन ॥ ९० ॥

उद्देश—संकेत; **करिते**—करने हेतु; **करि**—मैं करता हूँ; **दिग्-दरशन**—दिग्दर्शन, सामान्य अवलोक; **मुख्य मुख्य**—मुख्य; **लीलार**—लीलाओं का; **करि**—मैं करता हूँ; **सूत्र**—रूपरेखा; **गणन**—गणना।

अनुवाद

उन लीलाओं का संकेत करने के उद्देश्य से मैं मुख्य-मुख्य लीलाओं को सूत्र रूप में प्रस्तुत कर रहा हूँ।

प्रथम सूत्र प्रभुर सन्न्यास-करण ।
सन्न्यास करि' चलिला प्रभु श्री-वृन्दावन ॥ ९१ ॥

प्रथम सूत्र प्रभुर सन्न्यास-करण ।
सन्न्यास करि' चलिला प्रभु श्री-वृन्दावन ॥ ९१ ॥

प्रथम—प्रथम; **सूत्र**—रूपरेखा; **प्रभुर**—महाप्रभु का; **सन्न्यास-करण**—संन्यास लेना; **सन्न्यास करि'**—संन्यास लेने के बाद; **चलिला**—गये; **प्रभु**—महाप्रभु; **श्री-बृन्दावन**—वृन्दावन की ओर।

अनुवाद

पहला सूत्र यह है : संन्यास ग्रहण करने के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु वृन्दावन की ओर चल पड़े।

तात्पर्य

ये कथन श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा संन्यास ग्रहण करने के स्पष्ट तथा प्रामाणिक वर्णन हैं। उनके द्वारा संन्यास ग्रहण किये जाने की तुलना मायावादियों द्वारा संन्यास ग्रहण करने से कदापि नहीं की जा सकती। संन्यास ग्रहण करने के बाद चैतन्य महाप्रभु वृन्दावन जाना चाहते थे। वे उन मायावादी सन्यासियों से सर्वथा भिन्न थे, जो ब्रह्म में समा जाने के लिए उत्सुक रहते हैं। वैष्णव के लिए संन्यास ग्रहण करने का अर्थ है, सारे भौतिक कार्यकलापों से छुटकारा पाना और भगवान् की दिव्य प्रेममयी सेवा में पूरी तरह लग जाना। इसकी पुष्टि श्रील रूप गोस्वामी द्वारा (*भक्तिरसामृतसिन्धु* १.२.२५५ में) की गई है—*अनासक्तस्य विषयान् यथार्हमुपयुञ्जतः/ निर्बन्धः कृष्णसम्बन्धे युक्तं वैराग्यमुच्यते।* वैष्णव के लिए संन्यास आश्रम का अर्थ है, भौतिक वस्तुओं से पूर्णतया विरक्ति और भगवान् की दिव्य प्रेममयी सेवा में निरन्तर लगे रहना। किन्तु मायावादी संन्यासी यह नहीं जानते कि प्रत्येक वस्तु को भगवान् की सेवा में किस प्रकार लगाइ जाये। उन्हें भक्ति की शिक्षा नहीं मिली रहती, इसलिए

वे भौतिक वस्तुओं को अस्पृश्य मानते हैं। *ब्रह्मसत्यं जगन्मिथ्या*—मायावादी सोचते हैं कि यह जगत् मिथ्या है, किन्तु वैष्णव संन्यासी इस प्रकार नहीं सोचते। वे तो कहते हैं, "जगत् मिथ्या क्यों होना चाहिए? यह वास्तविक है और यह पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की सेवा के निमित्त है।" वैष्णव संन्यासी के लिए वैराग्य का अर्थ है, अपने खुद के इन्द्रिय-भोग के लिए कोई वस्तु स्वीकार न करना। भक्ति का अर्थ है प्रत्येक वस्तु का उपयोग पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की तुष्टि के लिए करना।

প্রেমেতে বিহ্বল বাহ্য নাহিক স্মরণ ।
রাঢ়-দেশে তিন দিন করিলা ভ্রমণ ॥৯২॥

प्रेमेते विह्वल बाह्य नाहिक स्मरण ।
राढ़-देशे तिन दिन करिला भ्रमण ॥९२॥

प्रेमेते—कृष्ण के प्रेमावेश में; **विह्वल**—विह्वल; **बाह्य**—बाहर से; **नाहिक**—नहीं; **स्मरण**—स्मरण; **राढ़-देशे**—राढ़ प्रदेश में; **तिन दिन**—तीन दिन; **करिला**—की; **भ्रमण**—यात्रा।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु वृन्दावन की ओर जा रहे थे, तो वे कृष्ण-प्रेम में विह्वल हो गये और उनकी बाहरी जगत् की सारी सुध-बुध जाती रही। इस तरह उन्होंने तीन दिनों तक उस राढ़देश में भ्रमण किया, जो ऐसा प्रदेश है, जिसमें गंगा नदी नहीं बहती।

নিত্যানন্দ প্রভু মহাপ্রভু ভুলাইয়া ।
গঙ্গা-তীরে লঞা আইলা 'যমুনা' বলিয়া ॥৯৩॥

नित्यानन्द प्रभु महाप्रभु भुलाइया ।
गङ्गा-तीरे लञा आइला 'यमुना' बलिया ॥९३॥

नित्यानन्द प्रभु—नित्यानन्द प्रभु; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **भुलाइया**—भ्रमित किया; **गङ्गा-तीरे**—गंगा के तट पर; **लञा**—ले जाकर; **आइला**—लाये; **यमुना**—यमुना नदी; **बलिया**—सूचित करके।

अनुवाद

सर्वप्रथम नित्यानन्द प्रभु ने श्री चैतन्य महाप्रभु को गंगा के किनारे-किनारे ले जाते समय यह कहकर भ्रमित कर दिया कि यह यमुना नदी है।

शान्तिपुरे आचार्यर गृहे आगमन ।
प्रथम भिक्षा कैल ताहाँ, रात्रे सङ्कीर्तन ॥९४॥

शान्तिपुरे आचार्य्येर गृहे आगमन ।
प्रथम भिक्षा कैल ताहाँ, रात्रे सङ्कीर्तन ॥ ९४॥

शान्तिपुरे—शान्तिपुर नगर में; **आचार्य्येर**—अद्वैत आचार्य के; **गृहे**—घर; **आगमन**—आकर; **प्रथम**—पहले; **भिक्षा**—भिक्षा ग्रहण; **कैल**—की; **ताहाँ**—वहाँ; **रात्रे**—रात को; **सङ्कीर्तन**—संकीर्तन।

अनुवाद

तीन दिन बाद श्री चैतन्य महाप्रभु शान्तिपुर में अद्वैत आचार्य के घर आये और वहाँ उन्होंने भिक्षा ग्रहण की। यह उनके द्वारा प्रथम भिक्षा-ग्रहण था। उस रात उन्होंने वहाँ सामूहिक कीर्तन किया।

तात्पर्य

ऐसा लगता है कि श्री चैतन्य महाप्रभु दिव्य भावावेश में तीन दिनों तक भोजन करना ही भूल गये थे। तत्पश्चात् नित्यानन्द प्रभु ने उन्हें यह कहकर बहका दिया कि यह गंगा नहीं यमुना नदी है। महाप्रभु वृन्दावन जाने के भावोन्माद में थे, अतएव वे यमुना को देखकर परम प्रसन्न हुए, यद्यपि वास्तव में यह गंगा नदी थी। इस तरह तीन दिन बाद महाप्रभु को शान्तिपुर में अद्वैत प्रभु के घर लाया गया, जहाँ उन्होंने भोजन ग्रहण किया। वहाँ रहने के दौरान महाप्रभु अपनी माता शचीदेवी से मिले और समस्त भक्तों के साथ मिलकर प्रत्येक रात को सामूहिक कीर्तन करते रहे।

माता भक्त-गणेर ताहाँ करिल मिलन ।
सर्व समाधान करि' कैल नीलाद्रि-गमन ॥९५॥

माता भक्त-गणेर ताहाँ करिल मिलन ।
सर्व समाधान करि' कैल नीलाद्रि-गमन ॥ ९५ ॥

माता—माता; **भक्त-गणेर**—भक्तों के; **ताहाँ**—उस स्थान में; **करिल**—किया; **मिलन**—मिले; **सर्व**—सब; **समाधान**—समाधान; **करि'**—करके; **कैल**—किया; **नीलाद्रि-गमन**—जगन्नाथ पुरी को गमन।

अनुवाद

अद्वैत प्रभु के घर में वे अपनी माता से तथा मायापुर के सारे भक्तों से मिले। वहाँ पर सबका समाधान करने के बाद वे जगन्नाथ पुरी चले गये।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु भलीभाँती जानते थे कि उनके द्वारा संन्यास ग्रहण किया जाना उनकी माता के लिए वज्रपात समान था। अतएव उन्होंने मायापुर से अपनी माता तथा भक्तों को बुलवाया और श्री अद्वैत आचार्य के माध्यम से वे संन्यास ग्रहण करने के बाद अन्तिम बार उन सबसे मिले। उनकी माता उनका मुंडित मस्तक देखकर अत्यधिक दु:खी हुईं। उनके सिर पर अब सुन्दर बाल नहीं थे। सारे भक्तों ने शचीमाता को सान्त्वना दी और श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपनी माता से उनके लिए भोजन पकाने के लिए कहा, क्योंकि तीन दिन से भोजन ग्रहण न करने के कारण वे अत्यधिक भूखे थे। उनकी माता तुरन्त राजी हो गईं और सब कुछ भूलकर श्री चैतन्य महाप्रभु के लिए तब तक भोजन बनाती रहीं, जब तक वे श्री अद्वैत प्रभु के घर रहीं। कुछ दिनों के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपनी माता से जगन्नाथ पुरी जाने की अनुमति मांगी। संन्यास ग्रहण करने के बाद अपनी माता के कहने पर उन्होंने जगन्नाथ पुरी को अपना मुख्य स्थान बनाया था। इस तरह सब कुछ सुलझ गया और श्री चैतन्य महाप्रभु अपनी माता की अनुमति से जगन्नाथ पुरी के लिए चल पड़े ।

পথে নানা লীলা-রস, দেব-দরশন ।
মাধব-পুরীর কথা, গোপাল-স্থাপন ॥ ৯৬ ॥

पथे नाना लीला-रस, देव-दरशन ।
माधव-पुरीर कथा, गोपाल-स्थापन ॥ ९६ ॥

पथे—मार्ग में; **नाना**—नाना; **लीला-रस**—दिव्य लीलाएँ; **देव-दरशन**—मन्दिरों में दर्शन; **माधव-पुरीर**—माधवेन्द्र पुरी की; **कथा**—घटनाएँ; **गोपाल**—गोपाल की; **स्थापन**—स्थापना।

अनुवाद

जगन्नाथ पुरी के मार्ग में श्री चैतन्य महाप्रभु ने अन्य अनेक लीलाएँ कीं। उन्होंने विविध मन्दिरों की मुलाकात ली और गोपाल की स्थापना एवं माधवेन्द्र पुरी की कथा सुनी।

तात्पर्य

ये माधव पुरी माधवेन्द्र पुरी हैं। अन्य माधव पुरी माध्वाचार्य हैं, जो गदाधर पण्डित की परम्परा में एक भक्त के गुरु थे और जिन्होंने *श्री मंगल-भाष्य* नामक एक ग्रंथ की रचना की थी। माध्वाचार्य इस श्लोक में उल्लिखित माधवेन्द्र पुरी से भिन्न हैं।

क्षीर-चूरि-कथा, साक्षि-गोपाल-विवरण ।
नित्यानन्द कैल प्रभुर दण्ड-भञ्जन ॥९७॥

क्षीर-चुरि-कथा, साक्षि-गोपाल-विवरण ।
नित्यानन्द कैल प्रभुर दण्ड-भञ्जन ॥ ९७॥

क्षीर-चुरि-कथा—खीर चुराने की कथा; **साक्षि-गोपाल-विवरण**—साक्षीगोपाल का वर्णन; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु; **कैल**—किया; **प्रभुर**—महाप्रभु का; **दण्ड-भञ्जन**—संन्यास दण्ड तोड़ा।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने नित्यानन्द प्रभु से क्षीर-चुरी गोपीनाथ एवं साक्षीगोपाल की कथाएँ सुनीं। इसके बाद नित्यानन्द प्रभु ने श्री चैतन्य महाप्रभु का संन्यास-दण्ड तोड़ दिया।

तात्पर्य

यह क्षीर-चुरी गोपीनाथ रेमुणा नामक स्थान में उत्तर-पूर्व रेलवे लाइन, जो पहले बंगाल-मायापुर रेल लाइन कहलाती थी, उप पर स्थित बालासोर स्टेशन से लगभग ४ मील दूरी पर है। यह स्टेशन सुप्रसिद्ध खड़गपुर जंकशन से कुछ ही मील की दूरी पर स्थित है। कुछ समय हुआ इस मन्दिर का भार

मेदिनीपुर जिले की सीमा पर स्थित गोपीवल्लभपुर के श्यामसुन्दर अधिकारी को सौंपा गया था। श्यामसुन्दर अधिकारी श्यामानन्द गोस्वामी के मुख्य शिष्य रसिकानन्द मुरारी के वंशज थे।

जगन्नाथ पुरी स्टेशन से कुछ ही मील पहले साक्षीगोपाल नामक एक छोटा-सा स्टेशन है। इस स्टेशन के पास सत्यवादी नामक एक गाँव है, जहाँ साक्षीगोपाल का मन्दिर स्थित है।

क्रुद्ध हञा एका गेला जगन्नाथ देखिते ।
देखिया मूर्च्छित हञा पड़िला भूमिते ॥९८॥

क्रुद्ध हञा एका गेला जगन्नाथ देखिते ।
देखिया मूर्च्छित हञा पड़िला भूमिते ॥ ९८ ॥

क्रुद्ध—क्रुद्ध; **हञा**—होकर; **एका**—अकेले; **गेला**—गये; **जगन्नाथ**—भगवान् जगन्नाथ; **देखिते**—के दर्शन हेतु; **देखिया**—जगन्नाथ के दर्शन के बाद; **मूर्च्छित**—मूर्छित; **हञा**—होकर; **पड़िला**—गिर पड़े; **भूमिते**—भूमि पर।

अनुवाद

इसके बाद जब नित्यानन्द प्रभु ने उनका संन्यास-दण्ड तोड़ डाला, तो श्री चैतन्य महाप्रभु बाह्य रूप से अत्यधिक क्रुद्ध हुए और वे उनका साथ छोड़कर अकेले ही जगन्नाथ मन्दिर की यात्रा के लिए चल पड़े। जब श्री चैतन्य महाप्रभु जगन्नाथ-मन्दिर के भीतर प्रविष्ट हुए और उन्होंने भगवान् जगन्नाथ का दर्शन किया, तो वे तुरन्त अचेत होकर भूमि पर गिर पड़े।

सार्वभौम लञा गेला आपन-भवन ।
तृतीय प्रहरे प्रभुर हइल चेतन ॥९९॥

सार्वभौम लञा गेला आपन-भवन ।
तृतीय प्रहरे प्रभुर हइल चेतन ॥ ९९ ॥

सार्वभौम—सार्वभौम भट्टाचार्य; **लञा**—लेकर; **गेला**—गये; **आपन-भवन**—अपने घर में; **तृतीय प्रहरे**—दोपहर के बाद; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु को; **हइल**—आई; **चेतन**—चेतना।

अनुवाद

जब मन्दिर में श्री चैतन्य महाप्रभु भगवान् जगन्नाथ के दर्शन करने के बाद अचेत होकर गिर पड़े, तो सार्वभौम भट्टाचार्य उन्हें अपने घर ले गये। महाप्रभु दोपहर के बाद तक अचेत रहे। तब अन्त में उन्हें चेतना आई।

নিত্যানন্দ, জগদানন্দ, দামোদর, মুকুন্দ ।
পাছে আসি' মিলি' সবে পাইল আনন্দ ॥ ১০০ ॥

নিত্যানন্দ, জগদানন্দ, দামোদর, মুকুন্দ ।
পাছে আসি' মিলি' সবে পাইল আনন্দ ॥ ১০০ ॥

নিত্যানন্দ—नित्यानन्द; **জগদানন্দ**—जगदानन्द; **দামোদর**—दामोदर; **মুকুন্দ**—मुकुन्द; **পাছে আসি'**—आकर; **মিলি'**—मिले; **সবে**—सब; **পাইল**—पाया; **আনন্দ**—आनन्द।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु नित्यानन्द का साथ छोड़कर अकेले जगन्नाथ मन्दिर गये थे, किन्तु बाद में नित्यानन्द, जगदानन्द, दामोदर तथा मुकुन्द उन्हें मिलने के लिए आये और उन्हें देखकर वे सभी अत्यन्त प्रसन्न हुए।

তবে সার্বভৌমে প্রভু প্রসাদ করিল ।
আপন-ঈশ্বর-মূর্তি তাঁরে দেখাইল ॥ ১০১ ॥

তবে সার্বভৌমে প্রভু প্রসাদ করিল ।
আপন-ঈশ্বর-মূর্তি তাঁরে দেখাইল ॥ ১০১ ॥

তবে—उस समय; **সার্বভৌমে**—सार्वभौम भट्टाचार्य को; **প্রভু**—भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु; **প্রসাদ করিল**—कृपा की; **আপন**—अपनी; **ঈশ্বর-মূর্তি**—भगवान् का मूल रूप; **তাঁরে**—उनको; **দেখাইল**—दिखाया।

अनुवाद

इस घटना के बाद भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु ने सार्वभौम भट्टाचार्य को अपना आदि-भगवान् रूप दिखलाकर उन पर कृपा की।

তবে ত' করিলা প্রভু দক্ষিণ গমন ।
কূর্ম-ক্ষেত্রে কৈল বাসুদেব বিমোচন ॥১০২॥

তবে ত' করিলা প্রভু দক্ষিণ গমন ।
কূর্ম-ক্ষেত্রে কৈল বাসুদেব বিমোচন ॥ ১০২ ॥

তবে ত'—তৎপশ্চাত্; **করিলা**—किया; **প্রভু**—चैतन्य महाप्रभु; **দক্ষিণ**—दक्षिण भारत को; **গমন**—गमन; **কূর্ম-ক্ষেত্রে**—कूर्मक्षेत्र नामक तीर्थस्थान पर; **কৈল**—किया; **বাসুদেব**—वासुदेव; **বিমোচন**—उद्धार।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य पर कृपादृष्टि करने के बाद महाप्रभु दक्षिण भारत के लिए चल पड़े। जब वे कूर्मक्षेत्र आये, तो वहाँ उन्होंने वासुदेव नामक व्यक्ति का उद्धार किया।

জিয়ড়-নৃসিংহে কৈল নৃসিংহ-স্তবন ।
পথে-পথে গ্রামে-গ্রামে নাম-প্রবর্তন ॥১০৩॥

জিয়ড়-নৃসিংহে কৈল নৃসিংহ-স্তবন ।
পথে-পথে গ্রামে-গ্রামে নাম-প্রবর্তন ॥ ১০৩ ॥

জিয়ড়-নৃসিংহে—जियड़ नृसिंह नामक तीर्थस्थान; **কৈল**—किया; **নৃসিংহ**—नृसिंह की; **স্তবন**—स्तुति; **পথে-পথে**—मार्ग में; **গ্রামে-গ্রামে**—प्रत्येक गाँव में; **নাম-প্রবর্তন**—भगवान् के पावन नाम का प्रचार।

अनुवाद

कूर्मक्षेत्र की यात्रा करने के बाद महाप्रभु दक्षिण भारत में जियड़ नृसिंह के मन्दिर गये और वहाँ भगवान् नृसिंह देव की स्तुति की। रास्ते में उन्होंने प्रत्येक गाँव में हरे कृष्ण महामंत्र के कीर्तन का शुभारम्भ किया।

গোদাবরী-তীর-বনে বৃন্দাবন-ভ্রম ।
রামানন্দ রায় সহ তাহাঞি মিলন ॥১০৪॥

গোদাবরী-তীর-বনে বৃন্দাবন-ভ্রম ।
রামানন্দ রায় সহ তাহাঞি মিলন ॥ ১০৪ ॥

गोदावरी-तीर—गोदावरी नदी के तट पर; **वने**—वन में; **वृन्दावन-भ्रम**—वृन्दावन के भ्रम में; **रामानन्द राय**—रामानन्द राय; **सह**—साथ; **ताहाञि**—वहाँ; **मिलन**—मिले।

अनुवाद

एक बार महाप्रभु ने गोदावरी नदी के तट पर स्थित एक वन को वृन्दावन समझ लिया। वहाँ उनकी भेंट रामानन्द राय से हुई।

त्रिमल्ल-त्रिपदी-स्थान कैल दरशन ।
सर्वत्र करिल कृष्ण-नाम प्रचारण ॥ १०५॥

त्रिमल्ल-त्रिपदी-स्थान कैल दरशन ।
सर्वत्र करिल कृष्ण-नाम प्रचारण ॥ १०५॥

त्रिमल्ल—त्रिमल्ल अर्थात् तिरूमल नामक स्थान; **त्रिपदी**—तथा त्रिपदी या तिरुपति; **स्थान**—स्थान; **कैल**—किया; **दरशन**—दर्शन; **सर्वत्र**—सर्वत्र; **करिल**—किया; **कृष्ण-नाम**—भगवान् कृष्ण के पावन नाम का; **प्रचारण**—प्रचार।

अनुवाद

उन्होंने तिरुमल तथा तिरुपति नामक स्थानों की यात्रा की और वहाँ उन्होंने भगवान् के पवित्र नाम के कीर्तन का सर्वत्र प्रचार किया।

तात्पर्य

यह पवित्र स्थान दक्षिण भारत में तांजोर (चित्तूर) जिले में स्थित है। तिरुपति का मन्दिर व्यंकटाचल की घाटी में स्थित है और उसमें भगवान् रामचन्द्र का श्रीविग्रह है। व्यंकटाचल पर्वत की चोटी पर बालाजी का सुप्रसिद्ध मन्दिर है।

तबे त' पाषण्डि-गणे करिल दलन ।
अहोबल-नृसिंहादि कैल दरशन ॥ १०६॥

तबे त' पाषण्डि-गणे करिल दलन ।
अहोबल-नृसिंहादि कैल दरशन ॥ १०६॥

तबे त'—तत्पश्चात्; **पाषण्डि-गणे**—नास्तिकों का; **करिल**—किया; **दलन**—दलन; **अहोबल-नृसिंह-आदि**—नृसिंह देव नामक अहोबल मन्दिर; **कैल**—किया; **दरशन**—दर्शन।

अनुवाद

तिरुमल तथा तिरुपति मन्दिर के दर्शन के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु को कुछ नास्तिकों का दमन करना पड़ा। इसके बाद उन्होंने अहोवल-नृसिंह मन्दिर में दर्शन किया।

तात्पर्य

अहोवल मन्दिर दक्षिणात्य में कर्णुल जिले के अन्तर्गत सार्बेल तहसील में स्थित है। पूरे जिले में इस प्रसिद्ध मन्दिर की लोगों द्वारा प्रशंसा की जाती है। इसके अतिरिक्त आठ मन्दिर और हैं और ये सब मिलाकर नव-नृसिंह मन्दिर कहलाते हैं। इन मन्दिरों की बनावट और कलात्मक नक्काशी अत्यन्त अद्‌भुत है। किन्तु स्थानीय गजट कर्णुल मैन्युल से पता चलता है कि यह काम अधूरा है।

শ্রী-রঙ্গ-ক্ষেত্র আইলা কাবেরীর তীর ।
শ্রী-রঙ্গ দেখিয়া প্রেমে হইলা অস্থির ॥ ১০৭॥

श्री-रङ्ग-क्षेत्र आइला कावेरीर तीर ।
श्री-रङ्ग देखिया प्रेमे हइला अस्थिर ॥ १०७॥

श्री-रङ्ग-क्षेत्र—वह स्थान जहाँ रंगनाथ मन्दिर स्थित है; **आइला**—आये; **कावेरीर**—कावेरी नदी के; **तीर**—तट; **श्री-रङ्ग देखिया**—श्रीरंग मन्दिर देखने के बाद; **प्रेमे**—भगवत्-प्रेम में; **हइला**—हो गये; **अस्थिर**—अस्थिर, विह्वल।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु कावेरी के तट पर स्थित श्रीरंग क्षेत्र में आये, तो उन्होंने श्री रंगनाथ मन्दिर में दर्शन किये और वहाँ पर वे भगवत्प्रेम के आनन्द में विह्वल हो गये।

ত্রিমল্ল ভট্টের ঘরে কৈল প্রভু বাস ।
তাহাঞি রহিলা প্রভু বর্ষা চারি মাস ॥ ১০৮॥

त्रिमल्ल भट्टेर घरे कैल प्रभु वास ।
ताहाञि रहिला प्रभु वर्षा चारि मास ॥ १०८॥

त्रिमल्ल भट्टेर—त्रिमल्ल भट्ट के; **घरे**—घर पर; **कैल**—किया; **प्रभु**—महाप्रभु ने; **वास**—निवास; **ताहाञि**—वहाँ; **रहिला**—रहे; **प्रभु**—महाप्रभु; **वर्षा**—वर्षाऋतु के; **चारि**—चार; **मास**—महीने।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु वर्षा ऋतु के चार महीने त्रिमल्ल भट्ट के घर में रहे।

श्री-वैष्णव त्रिमल्ल-भट्ट——परम पण्डित ।
गोसाञिर पाण्डित्य-प्रेमे हइला विस्मित ॥ १०९॥

श्री-वैष्णव त्रिमल्ल-भट्ट——परम पण्डित ।
गोसाञिर पाण्डित्य-प्रेमे हइला विस्मित ॥ १०९॥

श्री-वैष्णव त्रिमल्ल-भट्ट—श्री वैष्णव त्रिमल भट्ट; **परम**—परम; **पण्डित**—विद्वान; **गोसाञिर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **पाण्डित्य**—विद्वत्ता; **प्रेमे**—तथा भगवत्-प्रेम; **हइला**—था; **विस्मित**—विस्मित।

अनुवाद

श्री त्रिमल्ल भट्ट श्री-वैष्णव संप्रदाय का सदस्य होने के साथ ही प्रकाण्ड विद्वान भी थे; अतएव जब उन्होंने परम विद्वान एवं महान् भक्त श्री चैतन्य महाप्रभु को देखे, तो वे अत्यन्त विस्मित हुए।

चातुर्मास्य ताँहा प्रभु श्री-वैष्णवेर सने ।
गोङाइल नृत्य-गीत-कृष्ण-सङ्कीर्तने ॥ ११०॥

चातुर्मास्य ताँहा प्रभु श्री-वैष्णवेर सने ।
गोङाइल नृत्य-गीत-कृष्ण-सङ्कीर्तने ॥ ११०॥

चातुर्मास्य—चातुर्मास्य (वर्षा ऋतु के); **ताँहा**—वहाँ; **प्रभु**—महाप्रभु; **श्री-वैष्णवेर सने**—श्री-वैष्णवों के साथ; **गोङाइल**—बिताए; **नृत्य**—नाचते हुए; **गीत**—गाते हुए; **कृष्ण-सङ्कीर्तने**—भगवान् कृष्ण के पावन नाम का संकीर्तन करते हुए।

अनुवाद

भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु ने श्री-वैष्णवों के साथ नृत्य, गान तथा कृष्ण के पवित्र नाम का कीर्तन करते हुए चातुर्मास व्यतीत किये।

चातुर्मास्य-अन्ते पुनः दक्षिण गमन ।
परमानन्द-पुरी सह ताहाञि मिलन ॥ १११ ॥

चातुर्मास्य-अन्ते पुनः दक्षिण गमन ।
परमानन्द-पुरी सह ताहाञि मिलन ॥ १११ ॥

चातुर्मास्य-अन्ते—चार्तुमास्य के अन्त में; **पुनः**—पुनः; **दक्षिण गमन**—दक्षिण भारत गये; **परमानन्द-पुरी**—परमानन्द पुरी; **सह**—के साथ; **ताहाञि**—वहाँ; **मिलन**—मिले।

अनुवाद

चातुर्मास के समाप्त होने पर श्री चैतन्य महाप्रभु सारे दक्षिण भारत में भ्रमण करते रहे। तभी उनकी भेंट परमानन्द पुरी से हुई।

तबे भट्टथारि हैते कृष्ण-दासेर उद्धार ।
राम-जपी विप्र-मुखे कृष्ण-नाम प्रचार ॥ ११२ ॥

तबे भट्टथारि हैते कृष्ण-दासेर उद्धार ।
राम-जपी विप्र-मुखे कृष्ण-नाम प्रचार ॥ ११२ ॥

तबे—इसके बाद; **भट्ट-थारि**—एक भट्टथारी; **हैते**—से; **कृष्ण-दासेर**—कृष्णदास का; **उद्धार**—उद्धार; **राम-जपी**—भगवान् राम का नाम जपने वाले; **विप्र-मुखे**—ब्राह्मणों को; **कृष्ण-नाम**—भगवान् कृष्ण का नाम; **प्रचार**—प्रचार किया।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने भट्टथारि के चंगुल से अपने सेवक कृष्णदास को बचाया। इसके बाद उन्होंने शिक्षा दी कि भगवान् कृष्ण के नाम का कीर्तन उन ब्राह्मणों को भी करना चाहिए, जो भगवान् राम के नाम का कीर्तन करने के अभ्यस्त हैं।

तात्पर्य

मालाबार जिले के ब्राह्मणों के एक समुदाय को *नम्बुद्रि-ब्राह्मण* कहा जाता है, जिनके पुरोहित भट्टथारि होते हैं। इन भट्टथारियों को अनेक तान्त्रिक कलाएँ आती हैं—यथा किसी मनुष्य को मारना, उसे वश में करना, उसे विनष्ट करना, इत्यादि। वे लोग इन काले जादुओं में अत्यन्त पटु होते हैं। ऐसे ही एक भट्टथारि ने श्री चैतन्य महाप्रभु के निजी सेवक कृष्णदास को भ्रमित कर दिया,

जब वह महाप्रभु के साथ दक्षिण भारत की यात्रा पर था। श्री चैतन्य महाप्रभु ने इस कृष्णदास को किसी तरह से भट्टथारि के चंगुल से छुड़ाया। श्री चैतन्य महाप्रभु पतितपावन के नाम से सुविख्यात हैं और उन्होंने अपने सेवक कृष्णदास का उद्धार करके इसे चरितार्थ किया। बंगाल में कभी-कभी भट्टथारि शब्द को बिगाड़कर भट्टमारि कहा जाता है।

श्री-रङ्ग-पुरी सह ताहाञि मिलन ।
रामदास विप्रेर कैल दुःख-विमोचन ॥ ११३॥

श्री-रङ्ग-पुरी सह ताहाञि मिलन ।
रामदास विप्रेर कैल दुःख-विमोचन ॥ ११३॥

श्री-रङ्ग-पुरी—श्रीरंग पुरी; **सह**—के साथ; **ताहाञि**—वहाँ; **मिलन**—मिलन; **रामदास**—रामदास नामक; **विप्रेर**—ब्राह्मण का; **कैल**—किया; **दुःख-विमोचन**—दुःख निवारण।

अनुवाद

तत्पश्चात् श्री चैतन्य महाप्रभु श्री रंग पुरी से मिले और उन्होंने रामदास नामक एक ब्राह्मण के सारे दुःखों को दूर किया।

तत्त्व-वादी सह कैल तत्त्वेर विचार ।
आपनाके हीन-बुद्धि हैल ताँ-सबार ॥ ११४॥

तत्त्व-वादी सह कैल तत्त्वेर विचार ।
आपनाके हीन-बुद्धि हैल ताँ-सबार ॥ ११४॥

तत्त्व-वादी—मध्वाचार्य सम्प्रदाय का एक अंग; **सह**—के साथ; **कैल**—किया; **तत्त्वेर**—परम सत्य का; **विचार**—विचार विमर्श; **आपनाके**—आपस में; **हीन-बुद्धि**—हीन बुद्धि समझकर; **हैल**—था; **ताँ-सबार**—सभी विरोधी दलों का।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने तत्त्ववादी सम्प्रदाय से भी विचार-विमर्श किया और उन तत्त्ववादियों ने अपने आपको निम्न वैष्णव अनुभव किया।

तात्पर्य

तत्त्ववादी सम्प्रदाय मध्वाचार्य के वैष्णव सम्प्रदाय से सम्बन्धित हैं, किन्तु

उनका आचरण मध्वाचार्य के यथार्थ वैष्णव सिद्धान्त से भिन्न है। वहाँ उत्तरराढ़ी नामक एक मठ है, जिसके एक मठाधीश का नाम रघुवर्यतीर्थ मध्वाचार्य है।

অনন্ত, পুরুষোত্তম, শ্রী-জনার্দন ।
পদ্মনাভ, বাসুদেব কৈল দরশন ॥ ১১৫ ॥

अनन्त, पुरुषोत्तम, श्री-जनार्दन ।
पद्मनाभ, वासुदेव कैल दरशन ॥ ११५ ॥

अनन्त—अनन्तदेव; **पुरुषोत्तम**—पुरुषोत्तम; **श्री-जनार्दन**—श्री जनार्दन; **पद्म-नाभ**—पद्मनाभ; **वासुदेव**—वासुदेव; **कैल**—किया; **दरशन**—दर्शन।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने अनन्तदेव, पुरुषोत्तम, श्री जनार्दन, पद्मनाभ तथा वासुदेव के विष्णु-मन्दिरों में दर्शन किया।

तात्पर्य

अनन्त पद्मनाभ विष्णु का मन्दिर त्रिवेन्द्रम (तिरुवनन्थपुरम) जिले में स्थित है। उस भूभाग में यह मन्दिर अत्यन्त प्रसिद्ध है। श्री जनार्दन नामक एक अन्य विष्णु मन्दिर त्रिवेन्द्रम जिले के उत्तर में लगभग २६ मील की दूरी पर वर्काला नामक रेलवे स्टेशन के पास स्थित है।

তবে প্রভু কৈল সপ্ত-তাল বিমোচন ।
সেতু-বন্ধে স্নান, রামেশ্বর দরশন ॥ ১১৬ ॥

তবে প্রভু কৈল সপ্ত-তাল বিমোচন ।
সেতু-বন্ধে স্নান, রামেশ্বর দরশন ॥ ११६ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **प्रभु**—महाप्रभु; **कैल**—किया; **सप्त-ताल-विमोचन**—सात ताल वृक्षों का उद्धार; **सेतु-बन्धे**—कुमारी अन्तरीप पर; **स्नान**—स्नान करके; **रामेश्वर**—रामेश्वर मन्दिर; **दरशन**—दर्शन।

अनुवाद

इसके बाद भगवान् श्री चैतन्य महाप्रभु ने विख्यात सप्ततात वृक्षों का उद्धार किया, सेतुबन्ध रामेश्वर में स्नान किया और शिवजी अर्थात् रामेश्वर के मन्दिर में दर्शन किया।

तात्पर्य

कहा जाता है कि सप्तताल वृक्ष अत्यन्त प्राचीन भारी-भरकम ताड़ के वृक्ष थे। एक बार बालि तथा उसके भाई सुग्रीव के बीच लड़ाई हुई और भगवान् रामचन्द्र ने सुग्रीव का पक्ष लेकर इन्हीं विख्यात वृक्षों में से एक के पीछे छुपकर बालि का वध किया था। जब श्री चैतन्य महाप्रभु दक्षिण भारत की यात्रा पर थे, तो उन्होंने इन वृक्षों का आलिंगन किया। इससे इन वृक्षों का उद्धार हो गया और वे सीधे वैकुण्ठ चले गये।

তাহাঞি করিল কূর্ম-পুরাণ শ্রবণ ।
মায়া-সীতা নিলেক রাবণ, তাহাতে লিখন ॥ ১১৭॥

তাহাঞি করিল কূর্ম-পুরাণ শ্রবণ ।
মায়া-সীতা নিলেক রাবণ, তাহাতে লিখন ॥ ১১৭॥

তাহাঞি—वहाँ; **করিল**—किया; **কূর্ম-পুরাণ**—*कूर्म पुराण* का; **শ্রবণ**—श्रवण; **মায়া-সীতা**—माया सीता; **নিলেক**—चुराई गई; **রাবণ**—रावण द्वारा; **তাহাতে**—उस पुस्तक में; **লিখন**—लिखा है।

अनुवाद

रामेश्वर में श्री चैतन्य महाप्रभु को *कूर्म पुराण* पढ़ने का अवसर मिला, जिससे उन्हें यह पता चला कि रावण ने जिस सीता का अपहरण किया था वह वास्तविक सीता न थीं, अपितु उनकी छाया-मात्र थीं।

तात्पर्य

कूर्म पुराण का कथन है कि इस छाया-सीता के सतीत्व की अग्नि परीक्षा की गई। माया-सीता ने जब अग्नि में प्रवेश किया, तो वास्तविक सीता अग्नि से प्रकट हो गईं।

শুনিয়া প্রভুর আনন্দিত হৈল মন ।
রামদাস বিপ্রের কথা হইল স্মরণ ॥ ১১৮॥

শুনিয়া প্রভুর আনন্দিত হৈল মন ।
রামদাস বিপ্রের কথা হইল স্মরণ ॥ ১১৮॥

शुनिया—यह सुनकर; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु का; **आनन्दित**—आनन्दित; **हैल**—हो गया; **मन**—मन; **रामदास**—रामदास का; **विप्रेर**—ब्राह्मण के साथ; **कथा**—वार्तालाप का; **हइल**—हुआ; **स्मरण**—स्मरण।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु माया-सीता के विषय में पढ़कर अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्हें रामदास विप्र से अपनी भेंट का स्मरण हो आया, जो अत्यन्त दुःखी था कि रावण ने सीता माता का अपहरण किया था।

सेई पुरातन पत्र आग्रह करि' निल ।
रामदासे देखाइया दुःख खण्डाइल ॥ ११९॥

सेइ पुरातन पत्र आग्रह करि' निल ।
रामदासे देखाइया दुःख खण्डाइल ॥ ११९॥

सेइ—वह; **पुरातन**—पुराना; **पत्र**—पृष्ठ; **आग्रह**—उत्साहपूर्वक; **करि'**—करके; **निल**—लिया; **रामदासे**—ब्राह्मण रामदास को; **देखाइया**—दिखाकर; **दुःख**—दुःख; **खण्डाइल**—दूर किया।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने कूर्म पुराण की उस अत्यन्त प्राचीन पुस्तक से यह पन्ना उत्सुकता के कारण फाड़ लिया और बाद में इसे रामदास विप्र को दिखलाया, जिसे देखकर उसका दुःख दूर हुआ।

ब्रह्म-संहिता, कर्णामृत, दुई पुँथि पाञा ।
दुई पुस्तक लञा आइला उत्तम जानिञा ॥ १२०॥

ब्रह्म-संहिता, कर्णामृत, दुइ पुँथि पाञा ।
दुइ पुस्तक लञा आइला उत्तम जानिञा ॥ १२०॥

ब्रह्म-संहिता—*ब्रह्म-संहिता* नामक ग्रन्थ ; **कर्णामृत**—*कृष्णकर्णामृत* नामक ग्रन्थ ; **दुइ**—दोनों; **पुँथि**—शास्त्र; **पाञा**—पाकर; **दुइ**—दोनों; **पुस्तक**—पुस्तकें; **लञा**—लेकर; **आइला**—लौट आये; **उत्तम**—उत्तम; **जानिञा**—जानकर।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु को दो ग्रन्थ और भी मिले—ब्रह्म-संहिता तथा

कृष्णकर्णामृत। इन ग्रन्थों को श्रेष्ठ मानते हुए वे उन्हें अपने भक्तों को भेंट करने के लिए ले आये।

तात्पर्य

प्राचीनकाल में छापेखाने नहीं होते थे, अतएव सारे महत्त्वपूर्ण शास्त्रों को हाथ से लिखा जाता था, जिन्हें बड़े-बड़े मन्दिरों में रखा जाता था। श्री चैतन्य महाप्रभु को *ब्रह्म-संहिता* तथा *कृष्णकर्णामृत* की हस्तलिखित प्रतियाँ प्राप्त हुईं। वे इन्हें अत्यन्त प्रामाणिक समझकर अपने साथ लेते आये, जिससे उन्हें वे अपने भक्तों को भेंट कर सकें। निस्सन्देह, उन्होंने मठाधीश की अनुमति ले ली थी। अब *ब्रह्म-संहिता* तथा *कृष्णकर्णामृत* दोनों ही की छपी हुई प्रतियाँ श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर की टीकाओं के साथ उपलब्ध हैं।

पुनरपि नीलाचले गमन करिल ।
भक्त-गणे मेलिया स्नान-यात्रा देखिल ॥ १२१॥

पुनरपि नीलाचले गमन करिल ।
भक्त-गणे मेलिया स्नान-यात्रा देखिल ॥ १२१॥

पुनरपि—दोबारा; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी को; **गमन**—लौटकर; **करिल**—की; **भक्त-गणे**—सभी भक्तों की; **मेलिया**—मिले; **स्नान-यात्रा**—भगवान् जगन्नाथ का स्नानोत्सव; **देखिल**—देखा।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु इन पुस्तकों को लेकर जगन्नाथ पुरी लौट आये। उस समय जगन्नाथजी का स्नान-उत्सव मनाया जा रहा था, जिसे उन्होंने देखा।

अनवसरे जगन्नाथेर ना पाञा दरशन ।
विरहे आलालनाथ करिला गमन ॥ १२२॥

अनवसरे जगन्नाथेर ना पाञा दरशन ।
विरहे आलालनाथ करिला गमन ॥ १२२॥

अनवसरे—अनुपस्थिति के दौरान; **जगन्नाथेर**—भगवान् जगन्नाथ का; **ना**—नहीं;

पाञा—पाकर; **दरशन**—दर्शन; **विरहे**—विरह में; **आलालनाथ**—आलालनाथ नामक स्थान को; **करिला**—किया; **गमन**—गमन।

अनुवाद

जब जगन्नाथजी मन्दिर में नहीं थे, तब श्री चैतन्य महाप्रभु उनका दर्शन नहीं कर सके। फलतः उनके विरह में वे जगन्नाथ पुरी छोड़कर आलालनाथ नामक स्थान पर चले गये।

तात्पर्य

आलालनाथ ब्रह्मगिरि के नाम से भी प्रसिद्ध है। यह स्थान भी समुद्र-तट पर है और जगन्नाथ पुरी से लगभग १४ मील की दूरी पर है। वहाँ पर जगन्नाथ मन्दिर है। इस समय वहाँ एक थाना और एक डाकघर है, क्योंकि अनेक लोग इस मन्दिर में दर्शन के लिए आते हैं।

जब श्री जगन्नाथजी के दर्शन मन्दिर में नहीं होते, तो इसे *अनवसर* कहते हैं। स्नान-यात्रा के बाद भगवान् जगन्नाथ बीमार हो जाते हैं। अतएव उन्हें अन्तःपुर में ले जाया जाता है, जहाँ कोई उन्हें मिल नहीं सकता। वास्तव में इस बीच जगन्नाथ के श्रीविग्रह में सुधार द्वारा नवीनता लाई जाती है। इसे *नवयौवन* कहते हैं। रथयात्रा उत्सव में भगवान् जगन्नाथ एक बार फिर जनता के समक्ष आते हैं। इस तरह स्नान यात्रा के बाद पन्द्रह दिनों तक भगवान् जगन्नाथ के दर्शन नहीं होते।

ভক্ত-সনে দিন কত তাহাঞি রহিলা ।
গৌড়ের ভক্ত আইসে, সমাচার পাইলা ॥ ১২৩॥

भक्त-सने दिन कत ताहाञि रहिला ।
गौड़ेर भक्त आइसे, समाचार पाइला ॥ १२३॥

भक्त-सने—भक्तों के साथ; **दिन कत**—कुछ दिन; **ताहाञि**—वहाँ आलालनाथ में; **रहिला**—रहे; **गौड़ेर**—बंगाल के; **भक्त**—भक्त; **आइसे**—आते हैं; **समाचार**—समाचार; **पाइला**—उन्हें मिले।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु कुछ दिनों तक आलालनाथ रहे। तभी उन्हें यह समाचार मिला कि बंगाल से सारे भक्तगण जगन्नाथ पुरी आ रहे हैं।

নিত্যানন্দ-সার্বভৌম আগ্রহ করিঞা ।
নীলাচলে আইলা মহাপ্রভুকে লইঞা ॥ ১২৪ ॥

নিত্যানন্দ-সার্বভৌম আগ্রহ করিঞা ।
নীলাচলে আইলা মহাপ্রভুকে লইঞা ॥ ১২৪ ॥

নিত্যানন্দ—नित्यानन्द प्रभु; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **आग्रह करिञा**—बहुत विनती करके; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी को; **आइला**—लौट आये; **महाप्रभुके**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **लइञा**—लेकर।

अनुवाद

जब बंगाल के भक्तगण जगन्नाथ पुरी आ गये, तो नित्यानन्द प्रभु तथा सार्वभौम भट्टाचार्य काफी प्रयास से श्री चैतन्य महाप्रभु को जगन्नाथ पुरी वापस ले आये।

বিরহে বিহ্বল প্রভু না জানে রাত্রি-দিনে ।
হেন-কালে আইলা গৌড়ের ভক্ত-গণে ॥ ১২৫ ॥

বিরহে বিহ্বল প্রভু না জানে রাত্রি-দিনে ।
হেন-কালে আইলা গৌড়ের ভক্ত-গণে ॥ ১২৫ ॥

विरहे—विरह में; **विह्वल**—विह्वल; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ना**—नहीं; **जाने**—जानते हैं; **रात्रि-दिने**—रात-दिन; **हेन-काले**—इस समय; **आइला**—पहुँचे; **गौड़ेर**—बंगाल के; **भक्त-गणे**—सभी भक्तगण।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु अन्ततः आलालनाथ छोड़कर जगन्नाथ पुरी लौटे, तो वे जगन्नाथ के विरह में रात-दिन भावविभोर रहने लगे। उनके शोक की कोई सीमा न थी। इस समय बंगाल के विभिन्न भागों के और विशेष रूप से नवद्वीप के सारे भक्त जगन्नाथ पुरी पहुँचे।

সবে মিলি' যুক্তি করি' কীর্তন আরম্ভিল ।
কীর্তন-আবেশে প্রভুর মন স্থির হৈল ॥ ১২৬ ॥

সবে মিলি' যুক্তি করি' কীর্তন আরম্ভিল ।
কীর্তন-আবেশে প্রভুর মন স্থির হৈল ॥ ১২৬ ॥

सबे मिलि'—सभी ने मिलकर; **युक्ति करि'**—विचार के पश्चात्; **कीर्तन**—पवित्र नाम का सामूहिक कीर्तन; **आरम्भिल**—आरम्भ किया; **कीर्तन-आवेशे**—कीर्तन के आवेश में; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु का; **मन**—मन; **स्थिर**—स्थिर, शान्त; **हैल**—हो गया।

अनुवाद

परस्पर विचार-विमर्श के बाद सभी भक्तों ने सामूहिक कीर्तन प्रारम्भ किया। इस तरह श्री चैतन्य महाप्रभु का मन कीर्तन के आह्लाद से शान्त हुआ।

तात्पर्य

सारी परिस्थितियों में परम पूर्ण होने के कारण जगन्नाथजी का व्यक्तित्व, रूप, चित्र और कीर्तन सब कुछ अभिन्न हैं। अतएव जब चैतन्य महाप्रभु ने भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन सुना, तो वे शान्त हो गये। इसके पहले वे जगन्नाथ के विरह के कारण अत्यन्त खिन्नता का अनुभव कर रहे थे। निष्कर्ष यह है कि जब भी शुद्ध भक्तों द्वारा कीर्तन किया जाता है, तो भगवान् वहाँ तुरन्त उपस्थित हो जाते हैं। भगवान् के पवित्र नामों का कीर्तन करने से हमें साक्षात् भगवान् का सान्निध्य प्राप्त होता है।

पूर्वे यबे प्रभु रामानन्देरे मिलिला ।
नीलाचले आसिवारे ताँरे आज्ञा दिला ॥ १२७॥

पूर्वे यबे प्रभु रामानन्देरे मिलिला ।
नीलाचले आसिबारे ताँरे आज्ञा दिला ॥ १२७॥

पूर्वे—इसके पूर्व; **यबे**—जब; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **रामानन्देरे**—श्री रामानन्द राय; **मिलिला**—मिले; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी; **आसिबारे**—आने की; **ताँरे**—उन्हें; **आज्ञा दिला**—आज्ञा दी।

अनुवाद

इसके पूर्व जब श्री चैतन्य महाप्रभु दक्षिण भारत का भ्रमण कर रहे थे, तब गोदावरी नदी के तट पर उनकी भेंट रामानन्द राय से हुई थी। उस समय यह तय हुआ था कि रामानन्द राय अपने राज्यपाल के पद से त्यागपत्र दे देंगे और जगन्नाथ पुरी आयेंगे और श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ रहेंगे।

রাজ-আজ্ঞা লঞা তেঁহো আইলা কত দিনে ।
রাত্রি-দিনে কৃষ্ণ-কথা রামানন্দ-সনে ॥ ১২৮ ॥

রাজ-আজ্ঞা লঞা তেঁহো আইলা কত দিনে ।
রাত্রি-দিনে কৃষ্ণ-কথা রামানন্দ-সনে ॥ ১২৮ ॥

রাজ-আজ্ঞা—রাজা প্রতাপরুদ্র কী আজ্ঞা; **লঞা**—লেকর; **তেঁহো**—রামানন্দ রায়; **আইলা**—বাপস আয়ে; **কত দিনে**—কুছ দিনোঁ মেঁ; **রাত্রি-দিনে**—রাত-দিন; **কৃষ্ণ-কথা**—ভগবান্ কৃষ্ণ কী কথা ঔর উনকী লীলাএঁ; **রামানন্দ-সনে**—রামানন্দ রায় কী সংগতি মেঁ।

অনুবাদ

শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু কে আদেশ পর শ্রী রামানন্দ রায় নে রাজা সে ছুট্টী মাঁগী ঔর জগন্নাথ পুরী আ গয়ে। উনকে বহাঁ আনে কে বাদ শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু নে উনকে সাথ দিন-রাত কৃষ্ণা তথা উনকী লীলাওঁ কে বিষয মেঁ বাতেঁ করতে হুএ প্রচুর আনন্দ প্রাপ্ত কিয়া।

কাশী-মিশ্রে কৃপা, প্রদ্যুম্ন মিশ্রাদি-মিলন ।
পরমানন্দ-পুরী-গোবিন্দ-কাশীশ্বরাগমন ॥ ১২৯ ॥

কাশী-মিশ্রে কৃপা, প্রদ্যুম্ন মিশ্রাদি-মিলন ।
পরমানন্দ-পুরী-গোবিন্দ-কাশীশ্বরাগমন ॥ ১২৯ ॥

কাশী-মিশ্রে কৃপা—কাশী মিশ্র পর উনকী কৃপা; **প্রদ্যুম্ন মিশ্র-আদি-মিলন**—প্রদ্যুম্ন মিশ্র আদি কে সাথ মিলন; **পরমানন্দ-পুরী**—পরমানন্দ পুরী; **গোবিন্দ**—গোবিন্দ; **কাশীশ্বর**—কাশীশ্বর; **আগমন**—আগমন।

অনুবাদ

রামানন্দ রায় কে আনে কে বাদ, শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু নে কাশী মিশ্র পর কৃপা কী ঔর প্রদ্যুম্ন মিশ্র তথা অন্য ভক্তোঁ সে ভেঁট কী। উস সময তীন ঔর ভক্ত পরমানন্দ পুরী, গোবিন্দ তথা কাশীশ্বর শ্রী চৈতন্য মহাপ্রভু সে মিলনে জগন্নাথপুরী আয়ে।

দামোদর-স্বরূপ-মিলনে পরম আনন্দ ।
শিখি-মাহিতি-মিলন, রায় ভবানন্দ ॥ ১৩০ ॥

दामोदर-स्वरूप-मिलने परम आनन्द ।
शिखि-माहिति-मिलन, राय भवानन्द ॥ १३० ॥

दामोदर-स्वरूप—स्वरूप दामोदर; **मिलने**—मिलने पर; **परम**—परम; **आनन्द**—आनन्द; **शिखि-माहिति**—शिखि माहिति; **मिलन**—मिलन; **राय भवानन्द**—रामानन्द राय के पिता भवानन्द।

अनुवाद

अन्ततः स्वरूप दामोदर गोस्वामी से भेंट होने पर चैतन्य महाप्रभु अत्यन्त प्रसन्न हुए। इसके बाद शिखि माहिति तथा रामानन्द राय के पिता भवानन्द राय से उनकी भेंट हुई।

গৌড় হইতে সর্ব বৈষ্ণবের আগমন ।
কুলীন-গ্রাম-বাসি-সঙ্গে প্রথম মিলন ॥ ১৩১ ॥
গৌড় হইতে সর্ব বৈষ্ণবের আগমন ।
কুলীন-গ্রাম-বাসি-সঙ্গে প্রথম মিলন ॥ ১৩১ ॥

गौड़ हइते—बंगाल से; **सर्व**—सारे; **वैष्णवेर**—वैष्णवों का; **आगमन**—आगमन; **कुलीन-ग्राम-वासि**—कुलीन ग्राम के निवासी; **सङ्गे**—उनके साथ; **प्रथम**—पहली बार; **मिलन**—मिलन।

अनुवाद

बंगाल के सारे भक्त क्रमशः जगन्नाथ पुरी पहुँचने लगे। उस समय कुलीन ग्राम के निवासी भी श्री चैतन्य महाप्रभु से भेंट करने पहली बार आये।

নরহরি দাস আদি যত খণ্ড-বাসী ।
শিবানন্দ-সেন-সঙ্গে মিলিলা সবে আসি' ॥ ১৩২ ॥
নরহরি দাস আদি যত খণ্ড-বাসী ।
শিবানন্দ-সেন-সঙ্গে মিলিলা সবে আসি' ॥ ১৩২ ॥

नरहरि दास—नरहरि दास; **आदि**—आदि; **यत**—जितने; **खण्ड-वासी**—खण्ड नामक स्थान के रहने वाले; **शिवानन्द-सेन**—शिवानन्द सेन; **सङ्गे**—के साथ; **मिलिला**—वे मिले; **सबे**—सब; **आसि'**—वहाँ आकर।

अनुवाद

अन्ततोगत्वा नरहरि दास तथा खण्ड के सारे निवासी शिवानन्द सेन सहित आये और श्री चैतन्य महाप्रभु उन सबसे मिले।

স্নান-যাত্রা দেখি' প্রভু সঙ্গে ভক্ত-গণ ।
সবা লঞা কৈলা প্রভু গুণ্ডিচা মার্জন ॥ ১৩৩ ॥

স্নান-যাত্রা দেখি' প্রভু সঙ্গে ভক্ত-গণ ।
সবা লঞা কৈলা প্রভু গুণ্ডিচা মার্জন ॥ ১৩৩ ॥

स्नान-यात्रा—स्नानोत्सव; **देखि'**—देखकर; **प्रभु**—चैतन्य महाप्रभु; **सङ्गे**—उनके साथ; **भक्त-गण**—भक्तगण; **सबा**—सब; **लञा**—लेकर; **कैला**—किया; **प्रभु**—चैतन्य महाप्रभु; **गुण्डिचा मार्जन**—गुण्डीचा मन्दिर का मार्जन और सफाई।

अनुवाद

भगवान् जगन्नाथ की स्नान यात्रा के दर्शन के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने अनेक भक्तों की सहायता से श्री गुण्डिचा मन्दिर को धोया और सफाई की।

সবা-সঙ্গে রথ-যাত্রা কৈল দরশন ।
রথ-অগ্রে নৃত্য করি' উদ্যানে গমন ॥ ১৩৪ ॥

সবা-সঙ্গে রথ-যাত্রা কৈল দরশন ।
রথ-অগ্রে নৃত্য করি' উদ্যানে গমন ॥ ১৩৪ ॥

सबा-सङ्गे—उन सबके साथ; **रथ-यात्रा**—रथयात्रा; **कैल**—की; **दरशन**—दर्शन करके; **रथ-अग्रे**—रथ के आगे; **नृत्य**—नृत्य; **करि'**—करके; **उद्याने**—उद्यान में; **गमन**—गमन।

अनुवाद

इसके बाद समस्त भक्तों सहित श्री चैतन्य महाप्रभु ने रथयात्रा का दर्शन किया। चैतन्य महाप्रभु ने रथ के आगे स्वयं नृत्य किया और नृत्य के बाद एक बगीचे में गये।

প্রতাপরুদ্রেরে কৃপা কৈল সেই স্থানে ।
গৌড়ীয়া-ভক্তে আজ্ঞা দিল বিদায়ের দিনে ॥ ১৩৫ ॥

प्रतापरुद्रेरे कृपा कैल सेइ स्थाने ।
गौड़ीया-भक्ते आज्ञा दिल विदायेर दिने ॥ १३५ ॥

प्रतापरुद्रेरे—राजा प्रतापरुद्र को; **कृपा**—कृपा; **कैल**—की; **सेइ स्थाने**—उसी उद्यान में; **गौड़ीया-भक्ते**—बंगाल के सभी भक्तों को; **आज्ञा**—आज्ञा; **दिल**—दी; **विदायेर**—विदा होने की; **दिने**—दिन को।

अनुवाद

उस बगीचे में श्री चैतन्य महाप्रभु ने राजा प्रतापरुद्र पर कृपा की। इसके बाद जब बंगाल के भक्तगण अपने घरों को लौटने वाले थे, तो महाप्रभु ने लगभग सबों को अलग-अलग आदेश दिये।

প্রত্যব্দ আসিবে রথ-যাত্রা-দরশনে ।
এই ছলে চাহে ভক্ত-গণের মিলনে ॥ ১৩৬ ॥

प्रत्यब्द आसिबे रथ-यात्रा-दरशने ।
एइ छले चाहे भक्त-गणेर मिलने ॥ १३६ ॥

प्रति-अब्द—प्रति वर्ष; **आसिबे**—तुम सब को आना चाहिए; **रथ-यात्रा**—रथयात्रा; **दरशने**—के दर्शन के लिए; **एइ छले**—इस प्रयोजन के अन्तर्गत; **चाहे**—चाहते हैं; **भक्त-गणेर**—सभी भक्तों का; **मिलने**—मिलन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु बंगाल के सारे भक्तों से प्रतिवर्ष मिलते रहना चाहते थे। अतएव महाप्रभु ने उन्हें आज्ञा दी कि वे प्रतिवर्ष रथयात्रा का दर्शन करने आया करें।

সার্বভৌম-ঘরে প্রভুর ভিক্ষা-পরিপাটী ।
ষাঠীর মাতা কহে, যাতে রাণ্ডী হ-উক্ষাঠী ॥ ১৩৭ ॥

सार्वभौम-घरे प्रभुर भिक्षा-परिपाटी ।
षाठीर माता कहे, याते राण्डी हउक् षाठी ॥ १३७ ॥

सार्वभौम-घरे—सार्वभौम भट्टाचार्य के घर में; **प्रभुर**—महाप्रभु का; **भिक्षा**—भोजन; **परिपाटी**—तृप्ति करके; **षाठीर माता**—सार्वभौम भट्टाचार्य की पुत्री षाठी की माता; **कहे**—कहती है; **याते**—जिससे; **राण्डी**—विधवा; **हउक्**—हो जाये; **षाठी**—पुत्री षाठी।

अनुवाद

सार्वभौम भट्टाचार्य के घर भोजन करने के लिए श्री चैतन्य महाप्रभु आमन्त्रित किये गये। जब महाप्रभु सुस्वादु भोजन कर रहे थे, तो सार्वभौम भट्टाचार्य के जामाता (उनकी पुत्री षाठी के पति) ने उनकी आलोचना की। इसके कारण षाठी की माता ने उसे शाप दे दिया कि षाठी विधवा हो जाये। दूसरे शब्दों में, उसने अपने जामाता को मर जाने का शाप दे डाला।

वर्षान्तरे अद्वैतादि भक्तेर आगमन ।
प्रभुरे देखिते सबे करिला गमन ॥ १३८॥

वर्षान्तरे अद्वैतादि भक्तेर आगमन ।
प्रभुरे देखिते सबे करिला गमन ॥ १३८॥

वर्ष-अन्तरे—वर्ष के अन्त में; **अद्वैत-आदि**—अद्वैत आचार्य आदि; **भक्तेर**—सभी भक्तों का; **आगमन**—जगन्नाथ पुरी आकर; **प्रभुरे**—महाप्रभु; **देखिते**—देखने हेतु; **सबे**—वे सब; **करिला**—किया; **गमन**—जगन्नाथ पुरी को गमन।

अनुवाद

साल के अन्त में बंगाल के सारे भक्त अद्वैत आचार्य के साथ पुनः श्री चैतन्य महाप्रभु का दर्शन करने आये। निस्सन्देह, जगन्नाथ पुरी जाने के लिए भक्तों की भारी भीड़ उमड़ रही थी।

आनन्दे सबारे निया देन वास-स्थान ।
शिवानन्द सेन करे सबार पालन ॥ १३९॥

आनन्दे सबारे निया देन वास-स्थान ।
शिवानन्द सेन करे सबार पालन ॥ १३९॥

आनन्दे—परम आनन्द में; **सबारे**—सभी भक्तों को; **निया**—लेकर; **देन**—दिया; **वास-स्थान**—निवास हेतु स्थान; **शिवानन्द सेन**—शिवानन्द सेन; **करे**—करते हैं; **सबार**—सबका; **पालन**—पालन-पोषण।

अनुवाद

जब बंगाल के सारे भक्त आ गये, तो श्री चैतन्य महाप्रभु ने सबको

रहने का स्थान दिया और शिवानन्द सेन को उनकी देखरेख का भार सौंप दिया।

শিবানন্দের সঙ্গে আইলা কুক্কুর ভাগ্যবান্ ।
প্রভুর চরণ দেখি' কৈল অন্তর্ধান ॥ ১৪০ ॥

शिवानन्देर सङ्गे आइला कुक्कुर भाग्यवान् ।
प्रभुर चरण देखि' कैल अन्तर्धान ॥ १४० ॥

शिवानन्देर सङ्गे—शिवानन्द सेन के साथ; **आइला**—आया; **कुक्कुर**—एक कुत्ता; **भाग्यवान्**—भाग्यशाली; **प्रभुर**—महाप्रभु के; **चरण**—चरणकमल; **देखि'**—दर्शन कर; **कैल**—किया; **अन्तर्धान**—अन्तर्धान।

अनुवाद

शिवानन्द सेन तथा भक्तों के साथ एक कुत्ता आया था, जो इतना भाग्यवान निकला कि श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों का दर्शन करने के बाद वह मुक्त हो गया और भगवद्धाम वापस चला गया।

পথে সার্বভৌম সহ সবার মিলন ।
সার্বভৌম ভট্টাচার্যের কাশীতে গমন ॥ ১৪১ ॥

पथे सार्वभौम सह सबार मिलन ।
सार्वभौम भट्टाचार्य्येर काशीते गमन ॥ १४१ ॥

पथे—मार्ग में; **सार्वभौम**—सार्वभौम भट्टाचार्य; **सह**—के साथ; **सबार**—सबका; **मिलन**—मिलन; **सार्वभौम भट्टाचार्य्येर**—सार्वभौम भट्टाचार्य नामक भक्त का; **काशीते**—काशी को; **गमन**—गमन।

अनुवाद

वाराणसी जा रहे सार्वभौम भट्टाचार्य से मार्ग में सभी लोग मिले।

প্রভুরে মিলিলা সর্ব বৈষ্ণব আসিয়া ।
জল-ক্রীড়া কৈল প্রভু সবারে লইয়া ॥ ১৪২ ॥

प्रभुरे मिलिला सर्व वैष्णव आसिया ।
जल-क्रीड़ा कैल प्रभु सबारे लइया ॥ १४२ ॥

प्रभुरे—चैतन्य महाप्रभु; **मिलिला**—मिले; **सर्व**—सभी; **वैष्णव**—भक्त; **आसिया**—जगन्नाथ पुरी आकर; **जल-क्रीड़ा**—जल क्रीड़ा; **कैल**—की; **प्रभु**—महाप्रभु; **सबारे**—सभी भक्तों को; **लइया**—लेकर।

अनुवाद

जगन्नाथ पुरी आकर सारे वैष्णव श्री चैतन्य महाप्रभु से मिले। बाद में सभी भक्तों को साथ लेकर श्री चैतन्य महाप्रभु ने जलक्रीड़ा की।

सबा लञा कैल गुण्डिचा-गृह-सम्मार्जन ।
रथ-यात्रा-दरशने प्रभुर नर्तन ॥ १४३ ॥

सबा लञा कैल गुण्डिचा-गृह-सम्मार्जन ।
रथ-यात्रा-दरशने प्रभुर नर्तन ॥ १४३ ॥

सबा लञा—उन सबको लेकर; **कैल**—किया; **गुण्डिचा-गृह-सम्मार्जन**—गुण्डीचा-मन्दिर का मार्जन; **रथ-यात्रा**—रथयात्रा; **दरशने**—दर्शन करते समय; **प्रभुर**—महाप्रभु का; **नर्तन**—नृत्य।

अनुवाद

सबसे पहले महाप्रभु ने गुण्डिचा-मन्दिर को बारीकी से धोया। उसके बाद सब भक्तों ने रथयात्रा उत्सव एवं रथ के आगे महाप्रभु के नृत्य का दर्शन किया।

उपवने कैल प्रभु विविध विलास ।
प्रभुर अभिषेक कैल विप्र कृष्णदास ॥ १४४ ॥

उपवने कैल प्रभु विविध विलास ।
प्रभुर अभिषेक कैल विप्र कृष्णदास ॥ १४४ ॥

उपवने—सड़क पर स्थित उद्यान में; **कैल**—की; **प्रभु**—चैतन्य महाप्रभु ने; **विविध**—विविध; **विलास**—लीलाएँ; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु का; **अभिषेक**—अभिषेक; **कैल**—किया; **विप्र**—ब्राह्मण; **कृष्ण-दास**—कृष्णदास नामक।

अनुवाद

जगन्नाथ मन्दिर से गुण्डिचा के रास्ते में पड़ने वाले बगीचे में श्री

चैतन्य महाप्रभु ने विविध लीलाएँ कीं। कृष्णदास नामक एक ब्राह्मण ने श्री चैतन्य महाप्रभु का अभिषेक किया।

গুণ্ডিচাতে নৃত্য-অন্তে কৈল জল-কেলি ।
হেরা-পঞ্চমীতে দেখিল লক্ষ্মী-দেবীর কেলী ॥ ১৪৫ ॥

গুণ্ডিচাতে নৃত্য-অন্তে কৈল জল-কেলি ।
হেরা-পঞ্চমীতে দেখিল লক্ষ্মী-দেবীর কেলী ॥ ১৪৫ ॥

गुण्डिचाते—गुण्डीचा मन्दिर के पास; **नृत्य-अन्ते**—नृत्य के बाद; **कैल**—किया; **जल-केलि**—जल-क्रीड़ा; **हेरा-पञ्चमीते**—हेरा-पंचमी के दिन; **देखिल**—देखा; **लक्ष्मी-देवीर**—लक्ष्मी देवी के; **केली**—कार्यकलाप।

अनुवाद

गुण्डिचा-मन्दिर में नृत्य करने के बाद महाप्रभु ने भक्तों के साथ जलक्रीड़ा की और हेरापंचमी के दिन उन सबने लक्ष्मीदेवी के कार्यकलापों का दर्शन किया।

কৃষ্ণ-জন্ম-যাত্রাতে প্রভু গোপ-বেশ হৈলা ।
দধি-ভার বহি' তবে লগুড় ফিরাইলা ॥ ১৪৬ ॥

কৃষ্ণ-জন্ম-যাত্রাতে প্রভু গোপ-বেশ হৈলা ।
দধি-ভার বহি' তবে লগুড় ফিরাইলা ॥ ১৪৬ ॥

कृष्ण-जन्म-यात्राते—भगवान् कृष्ण के जन्म-दिन पर; **प्रभु**—चैतन्य महाप्रभु; **गोप-वेश**—गोप-वेश में; **हैला**—थे; **दधि-भार**—दही का मटका; **वहि'**—उठाकर; **तबे**—उस समय; **लगुड़**—एक छड़ी; **फिराइला**—फिराई, घुमाई।

अनुवाद

कृष्ण के जन्मदिवस, जन्माष्टमी को, श्री चैतन्य महाप्रभु ने ग्वालबाल का वेश बनाकर दही के मटकों से युक्त एक बहँगी धारण की तथा एक लाठी को घुमाइ।

গৌড়ের ভক্ত-গণে তবে করিল বিদায় ।
সঙ্গের ভক্ত লঞা করে কীর্তন সদায় ॥ ১৪৭ ॥

गौड़ेर भक्त-गणे तबे करिल विदाय ।
सङ्गेर भक्त लञा करे कीर्तन सदाय ॥ १४७॥

गौड़ेर—गौड़ देश (बंगाल) के; **भक्त-गणे**—भक्तों को; **तबे**—तब; **करिल**—दी; **विदाय**—विदाई; **सङ्गेर**—नित्य पार्षदों के साथ; **भक्त**—भक्त; **लञा**—लेकर; **करे**—करते; **कीर्तन**—कीर्तन; **सदाय**—सदा।

अनुवाद

इसके बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने गौड़देश (बंगाल) से आये सारे भक्तों को विदा किया। महाप्रभु सदा साथ रहने वाले अपने अन्तरंग भक्तों के साथ सदैव कीर्तन करते रहे।

বৃন্দাবন যাইতে কৈল গৌড়েরে গমন ।
প্রতাপরুদ্র কৈল পথে বিবিধ সেবন ॥ ১৪৮॥

वृन्दावन ग्राइते कैल गौड़ेरे गमन ।
प्रतापरुद्र कैल पथे विविध सेवन ॥ १४८॥

वृन्दावन ग्राइते—वृन्दावन जाने के लिए; **कैल**—किया; **गौड़ेरे**—बंगाल को; **गमन**—गमन; **प्रतापरुद्र**—राजा प्रतापरुद्र; **कैल**—किया; **पथे**—पथ में; **विविध**—विविध; **सेवन**—सेवाएँ।

अनुवाद

वृन्दावन जाने के लिए, महाप्रभु पहले गौड़देश (बंगाल) गये। रास्ते में राजा प्रतापरुद्र ने महाप्रभु को प्रसन्न करने के लिए अनेक प्रकार से सेवाएँ कीं।

পুরী-গোসাঞি-সঙ্গে বস্ত্র-প্রদান-প্রসঙ্গ ।
রামানন্দ রায় আইলা ভদ্রক পর্যন্ত ॥ ১৪৯॥

पुरी-गोसाञि-सङ्गे वस्त्र-प्रदान-प्रसङ्ग ।
रामानन्द राय आइला भद्रक पर्यन्त ॥ १४९॥

पुरी-गोसाञि-सङ्गे—पुरी गोस्वामी के साथ; **वस्त्र-प्रदान-प्रसङ्ग**—वस्त्र प्रदान प्रसंग; **रामानन्द राय**—रामानन्द राय; **आइला**—आये; **भद्रक**—भद्रक नामक स्थान; **पर्यन्त**—तक।

अनुवाद

बंगाल होकर वृन्दावन जाते समय एक घटना घटी, जिसमें पुरी गोसांइ का वस्त्र उनसे बदल गया। श्री रामानन्द राय महाप्रभु के साथ-साथ भद्रक नगर तक गये।

आसि' विद्या-वाचस्पतिर गृहेते रहिला ।
प्रभुरे देखिते लोक-सङ्घट्ट हइला ॥ १५० ॥

आसि' विद्या-वाचस्पतिर गृहेते रहिला ।
प्रभुरे देखिते लोक-सङ्घट्ट हइला ॥ १५० ॥

आसि'—बंगाल आकर; **विद्या-वाचस्पतिर**—विद्या वाचस्पति; **गृहेते**—घर पर; **रहिला**—रहे; **प्रभुरे**—चैतन्य महाप्रभु को; **देखिते**—देखने के लिए; **लोक-सङ्घट्ट**—लोगों की भीड़; **हइला**—वहाँ थी।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु वृन्दावन जाते हुए विद्यानगर (बंगाल) पहुँचे, तो वे सार्वभौम भट्टाचार्य के भाई विद्या वाचस्पति के घर पर रुके। जब महाप्रभु सहसा उनके घर पहुँचे, तो वहाँ लोगों की भारी भीड़ जमा हो गई।

पञ्च-दिन देखे लोक नाहिक विश्राम ।
लोक-भये रात्रे प्रभु आइला कुलिया-ग्राम ॥ १५१ ॥

पञ्च-दिन देखे लोक नाहिक विश्राम ।
लोक-भये रात्रे प्रभु आइला कुलिया-ग्राम ॥ १५१ ॥

पञ्च-दिन—लगातार पाँच दिन तक; **देखे**—देखने; **लोक**—लोग; **नाहिक**—नहीं; **विश्राम**—विश्राम; **लोक-भये**—लोगों के डर से; **रात्रे**—रात को; **प्रभु**—महाप्रभु; **आइला**—गये; **कुलिया-ग्राम**—कुलिया ग्राम को।

अनुवाद

लोग लगातार पाँच दिनों तक महाप्रभु का दर्शन करने आते रहे और उन्हें कोई विश्राम नहीं मिल रहा था। अतएव भीड़ के भय से महाप्रभु ने रात्रि में ही प्रस्थान कर दिया और वे कुलिया नामक ग्राम (आज का नवद्वीप) में चले गये।

तात्पर्य

यदि *चैतन्य-भागवत* में दिये गये कथनों के साथ-साथ लोचनदास ठाकुर के विवरण पर विचार किया जाय, तो यह स्पष्ट हो जाता है कि आज का नवद्वीप पहले कुलियाग्राम कहलाता था। कुलियाग्राम में श्री चैतन्य महाप्रभु ने देवानन्द पंडित पर कृपा की तथा गोपाल चापल एवं अन्य कई लोगों का उद्धार किया, जिन्होंने पहले महाप्रभु के चरणकमलों के प्रति अपराध किये थे। उन दिनों विद्यानगर से कुलियाग्राम जाने के लिए गंगा नदी की एक शाखा को पार करना होता था। ये सारे पुराने स्थान आज भी विद्यमान हैं। चिनाडांगा पहले कुलियाग्राम में स्थित था, जो आजकल कोलेरगंज के नाम से प्रसिद्ध है।

कुलिया-ग्रामेते प्रभुर शुनिया आगमन ।
कोटि कोटि लोक आसि' कैल दरशन ॥ १५२॥

कुलिया-ग्रामेते प्रभुर शुनिया आगमन ।
कोटि कोटि लोक आसि' कैल दरशन ॥ १५२ ॥

कुलिया-ग्रामेते—कुलियाग्राम में; **प्रभुर**—महाप्रभु का; **शुनिया**—सुनकर; **आगमन**—आगमन; **कोटि कोटि**—लाखों; **लोक**—लोगों ने; **आसि'**—आकर; **कैल**—लिए; **दरशन**—दर्शन।

अनुवाद

कुलियाग्राम में महाप्रभु का आगमन सुनकर हजारों-लाखों लोग उनका दर्शन करने आये।

कुलिया-ग्रामे कैल देवानन्देरे प्रसाद ।
गोपाल-विप्रेरे क्षमाइल श्रीवासापराध ॥ १५३॥

कुलिया-ग्रामे कैल देवानन्देरे प्रसाद ।
गोपाल-विप्रेरे क्षमाइल श्रीवासापराध ॥ १५३ ॥

कुलिया-ग्रामे—कुलियाग्राम में; **कैल**—दिखाया; **देवानन्देरे प्रसाद**—देवानन्द पण्डित पर दया; **गोपाल-विप्रेरे**—गोपाल चापल ब्राह्मण को; **क्षमाइल**—क्षमा किया; **श्रीवास-अपराध**—श्रीवास ठाकुर के चरणकमलों पर अपराध के लिए।

अनुवाद

इस समय श्री चैतन्य महाप्रभु ने जो विशेष कार्य किये, उनमें देवानन्द पंडित पर कृपा करना तथा गोपाल चापल नामक ब्राह्मण, जिसने श्रीवास ठाकुर के चरणकमलों के प्रति अपराध किया था, उसको क्षमा प्रदान करना मुख्य हैं।

पाषण्डी निन्दक आसि' पड़िला चरणे ।
अपराध क्षमि' तारे दिल कृष्ण-प्रेमे ॥ १५४॥
पाषण्डी निन्दक आसि' पड़िला चरणे ।
अपराध क्षमि' तारे दिल कृष्ण-प्रेमे ॥ १५४॥

पाषण्डी—नास्तिक; **निन्दक**—निन्दक; **आसि'**—वहाँ आकर; **पड़िला**—गिर पड़े; **चरणे**—महाप्रभु के चरणकमलों पर; **अपराध क्षमि'**—उनके अपराधों को क्षमा करने के बाद; **तारे**—उनको; **दिल**—दिया; **कृष्ण-प्रेमे**—कृष्ण-प्रेम।

अनुवाद

अनेक नास्तिक तथा निन्दक भी आये और महाप्रभु के चरणकमलों में गिर पड़े। महाप्रभु ने उन्हें क्षमा की और उनको कृष्ण-प्रेम प्रदान किया।

वृन्दावन यावेन प्रभु शुनि' नृसिंहानन्द ।
पथ साजाइल मने पाइया आनन्द ॥ १५५॥
वृन्दावन याबेन प्रभु शुनि' नृसिंहानन्द ।
पथ साजाइल मने पाइया आनन्द ॥ १५५॥

वृन्दावन—वृन्दावन को; **याबेन**—जायेंगे; **प्रभु**—महाप्रभु; **शुनि'**—सुनकर; **नृसिंहानन्द**—नृसिंहानन्द; **पथ**—मार्ग; **साजाइल**—सजाया; **मने**—मन में; **पाइया**—पाकर; **आनन्द**—आनन्द।

अनुवाद

जब श्री नृसिंहानन्द ब्रह्मचारी ने सुना कि श्री चैतन्य महाप्रभु वृन्दावन जायेंगे, तो वे अत्यन्त प्रसन्न हुए और मन ही मन उस मार्ग को सजाने लगे।

कुलिया नगर हैते पथ रत्ने बान्धाइल ।
निवृन्त पुष्प-शय्या उपरे पातिल ॥ १५६ ॥

कुलिया नगर हैते पथ रत्ने बान्धाइल ।
निवृन्त पुष्प-शय्या उपरे पातिल ॥ १५६ ॥

कुलिया नगर—कुलिया नगर; **हैते**—से; **पथ**—मार्ग; **रत्ने**—रत्नों से; **बान्धाइल**—बनाया; **निवृन्त**—डंठल रहित; **पुष्प-शय्या**—पुष्प शय्या; **उपरे**—ऊपर; **पातिल**—बिछाई।

अनुवाद

सर्वप्रथम नृसिंहानन्द ब्रह्मचारी ने कुलिया नगरी से शुरु होने वाली एक चौड़ी सड़क का चिन्तन किया। उन्होंने पुनः इस सड़क को रत्नों से सजाया और उसके ऊपर डंठल रहित फूलों की एक सेज बिछायी।

पथे दुई दिके पुष्प-वकुलेर श्रेणी ।
मध्ये मध्ये दुई-पाशे दिव्य पुष्करिणी ॥ १५७ ॥

पथे दुइ दिके पुष्प-बकुलेर श्रेणी ।
मध्ये मध्ये दुइ-पाशे दिव्य पुष्करिणी ॥ १५७ ॥

पथे—मार्ग पर; **दुइ दिके**—दोनों ओर; **पुष्प-बकुलेर**—बकुल पुष्पों के वृक्षों की; **श्रेणी**—कतारें; **मध्ये मध्ये**—बीच में; **दुइ-पाशे**—दोनों ओर; **दिव्य**—दिव्य; **पुष्करिणी**—सरोवर।

अनुवाद

उन्होंने मन-ही-मन सड़क के दोनों किनारों को बकुल पुष्प के वृक्षों से सजाया और बीच-बीच में दोनों ओर दिव्य सरोवर निर्मित किये।

रत्न-बाँधा घाट, ताहे प्रफुल्ल कमल ।
नाना पक्षि-कोलाहल, सुधा-सम जल ॥ १५८ ॥

रत्न-बाँधा घाट, ताहे प्रफुल्ल कमल ।
नाना पक्षि-कोलाहल, सुधा-सम जल ॥ १५८ ॥

रत्न-बाँधा—रत्नों के बने; **घाट**—स्नान घाट; **ताहे**—वहाँ; **प्रफुल्ल**—पूरे खिले हुए; **कमल**—कमल के फूल; **नाना**—विविध; **पक्षि**—पक्षियों का; **कोलाहल**—कोलाहर, शोर; **सुधा**—अमृत; **सम**—समान; **जल**—जल।

अनुवाद

इन सरोवरों में स्नान करने के घाट रत्नों से बने थे, जिनमें कमल के फूल खिले थे। तरह-तरह के पक्षी चहक रहे थे और सरोवरों का जल अमृत के समान था।

शीतल समीर वहे नाना गन्ध लञा ।
'कानाइर नाटशाला' पर्यन्त लइल बान्धिञा ॥ १५९॥

शीतल समीर वहे नाना गन्ध लञा ।
'कानाइर नाटशाला' पर्य्यन्त लइल बान्धिञा ॥ १५९॥

शीतल—अत्यन्त शीतल; **समीर**—पवन; **वहे**—बहने लगी; **नाना**—विविध; **गन्ध**—सुगन्ध; **लञा**—लेकर; **कानाइर नाटशाला**—कानाइ नाटशाला; **पर्य्यन्त**—जहाँ तक; **लइल**—लेकर; **बान्धिञा**—सड़क का बनाना।

अनुवाद

पूरी सड़क में नाना प्रकार की शीतल हवा बह रही थी, जो विविध फूलों की सुगन्ध से लदी थी। वे इस सड़क को कानाइ नाटशाला तक बनाते हुए ले गये।

तात्पर्य

कानाइ नाटशाला कलकत्ता से लगभग २०० मील दूरी पर पूर्वी रेलवे की लूप-लाइन में है। रेलवे स्टेशन का नाम तालझाड़ि है, जहाँ उतरकर लगभग दो मील चलने पर कानाइ नाटशाला आ जाता है।

आगे मन नाहि चले, ना पारे बान्धिते ।
पथ-बान्धा ना याय, नृसिंह हैला विस्मिते ॥ १६०॥

आगे मन नाहि चले, ना पारे बान्धिते ।
पथ-बान्धा ना य्राय, नृसिंह हैला विस्मिते ॥ १६०॥

आगे—इसके आगे; **मन**—मन; **नाहि**—नहीं; **चले**—जाता; **ना**—नहीं; **पारे**—सकते; **बान्धिते**—सड़क बनाने में; **पथ-बान्धा**—सड़क बनाना; **ना य्राय**—सम्भव नहीं; **नृसिंह**—नृसिंहानन्द ब्रह्मचारी; **हैला**—हो गये; **विस्मिते**—चकित।

अनुवाद

नृसिंहानन्द ब्रह्मचारी अपने मन में कानाइ नाटशाला के आगे सड़क नहीं बना पाये। उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि पूरी सड़क क्यों नहीं बन पा रही है, अतः वे चकित थे।

নিশ্চয় করিয়া কহি, শুন, ভক্ত-গণ ।
এবার না যাবেন প্রভু শ্রী-বৃন্দাবন ॥১৬১॥

निश्चय करिया कहि, शुन, भक्त-गण ।
एबार ना ग्राबेन प्रभु श्री-वृन्दावन ॥ १६१ ॥

निश्चय—निश्चय; **करिया**—करके; **कहि**—मैं कहता हूँ; **शुन**—कृपया सुनो; **भक्त-गण**—मेरे प्रिय भक्तों; **एबार**—इस बार; **ना**—नहीं; **ग्राबेन**—जायेंगे; **प्रभु**—चैतन्य महाप्रभु; **श्री-वृन्दावन**—वृन्दावन को।

अनुवाद

उसके बाद उन्होंने विश्वासपूर्वक भक्तों से बतलाया कि इस बार श्री चैतन्य महाप्रभु वृन्दावन नहीं जायेंगे।

तात्पर्य

श्री नृसिंहानन्द ब्रह्मचारी श्री चैतन्य महाप्रभु के बहुत बड़े भक्त थे, अतएव जब उन्होंने सुना कि महाप्रभु कुलिया से वृन्दावन जा रहे हैं, तो भौतिक धन न होते हुए भी वे अपने मन के भीतर उनके लिए एक आकर्षक मार्ग बनाने लगे, जिससे होकर महाप्रभु जा सकें। इस मार्ग का कुछ विवरण ऊपर दिया हुआ है। किन्तु वे अपने मन के भीतर भी कानाइ नाटशाला से आगे मार्ग न बना सके। अतएव उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि इस बार श्री चैतन्य महाप्रभु वृन्दावन नहीं जायेंगे।

शुद्ध भक्त के लिए भौतिक दृष्टि से मार्ग बनाना या मन के भीतर मार्ग बनाना एक समान है। इसका कारण यह है कि पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् जनार्दन *भावग्राही* हैं अर्थात् वे भाव को ग्रहण करते हैं। उनके लिए चाहे मार्ग वास्तविक रत्नों से बनाया जाय या मानसिक रत्नों से—दोनों एक समान हैं। मन सूक्ष्म होते हुए भी आखिर पदार्थ है, अतएव कोई भी मार्ग, चाहे वह स्थूल पदार्थ

का हो या सूक्ष्म पदार्थ का, यदि भगवान् की सेवा के लिए है, तो भगवान् उसे समान रूप से स्वीकार करते हैं। भगवान् तो भक्त के भाव को ग्रहण करते हैं और यह देखते हैं कि वह सेवा के लिए कितना तत्पर है। भक्त को छूट रहती है कि वह चाहे स्थूल पदार्थ से या सूक्ष्म पदार्थ से भगवान् की सेवा करे। महत्त्वपूर्ण बात यह होती है कि यह सेवा पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् से सम्बन्धित हो। इसकी पुष्टि *भगवद्गीता* (९.२६) में हुई है :

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः॥

"यदि कोई मुझे प्रेम तथा भक्तिपूर्वक एक पत्ती, एक फूल, फल या जल अर्पित करता है, तो मैं उसे स्वीकार करता हूँ।" असली वस्तु *भक्ति* है। शुद्ध भक्ति में भौतिक प्रकृति के गुणों का कल्मष नहीं रहता। *अहैतुक्यप्रतिहता*—अहैतुकी भक्ति को किसी भी भौतिक अवस्था द्वारा रोका नहीं जा सकता। इसका अर्थ यह है कि मनुष्य को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् की सेवा करने के लिए धनवान होना आवश्यक नहीं है। गरीब से गरीब व्यक्ति भी शुद्ध भक्ति से युक्त होने पर उसी तरह से भगवान् की सेवा कर सकता है। यदि कोई निम्न अभिलाषा नहीं है, तो भक्ति को किसी भी भौतिक स्थिति से रोकी नहीं जा सकती।

'কানাঞির নাটশালা' হৈতে আসিব ফিরিঞা ।
জানিবে পশ্চাৎ, কহিলু নিশ্চয় করিঞা ॥ ১৬২॥

'कानाञिर नाटशाला' हैते आसिब फिरिञा ।
जानिबे पश्चात्, कहिलु निश्चय करिञा ॥ १६२॥

कानाञिर नाटशाला—कानाई नाटशाला नामक स्थान; **हैते**—से; **आसिब**—आयेंगे; **फिरिञा**—लौटकर; **जानिबे**—आप जानेंगे; **पश्चात्**—बाद में; **कहिलु**—मैं कहता हूँ; **निश्चय**—निश्चय; **करिञा**—करके।

अनुवाद

नृसिंहानन्द ब्रह्मचारी ने कहा, "महाप्रभु कानाइ नाटशाला तक जायेंगे और पुनः लौट आयेंगे। इसे तुम बाद में जानोगे, किन्तु मैं अभी बड़े ही विश्वास के साथ कह रहा हूँ।"

গোসাঞি কুলিয়া হৈতে চলিলা বৃন্দাবন ।
সঙ্গে সহস্রেক লোক যত ভক্ত-গণ ॥ ১৬৩ ॥

গোসাঞি কুলিয়া হৈতে চলিলা বৃন্দাবন ।
সঙ্গে সহস্রেক লোক যত ভক্ত-গণ ॥ ১৬৩ ॥

গোসাঞি—চৈতন্য মহাপ্রভু; **কুলিয়া হৈতে**—কুলিয়া से; **চলিলা**—चल पड़े; **বৃন্দাবন**—वृन्दावन की ओर; **সঙ্গে**—उनके साथ; **সহস্রেক**—हजारों; **লোক**—लोग; **যত**—सब; **ভক্ত-গণ**—भक्तगण।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु कुलिया से वृन्दावन की ओर चलने लगे, तो हजारों लोग उनके साथ थे और ये सारे भक्त थे।

যাহাঁ যায় প্রভু, তাহাঁ কোটি-সঙ্খ্য লোক ।
দেখিতে আইসে, দেখি' খণ্ডে দুঃখ-শোক ॥ ১৬৪ ॥

যাহাঁ যায় প্রভু, তাহাঁ কোটি-সংখ্য লোক ।
দেখিতে আইসে, দেখি' খণ্ডে দুঃখ-শোক ॥ ১৬৪ ॥

যাহাঁ—जहाँ कहीं; **যায়**—जाते; **প্রভু**—महाप्रभु; **তাহাঁ**—वहाँ वहाँ; **কোটি-সংখ্য লোক**—असंख्य लोग; **দেখিতে আইসে**—उनके दर्शन के लिए आते; **দেখি'**—देखने के पश्चात्; **খণ্ডে**—दूर; **দুঃখ**—दुःख; **শোক**—शोक।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु जहाँ-जहाँ गये, वहीं असंख्य लोगों की भीड़ उनका दर्शन करने आई। दर्शन करने पर उनका सारा दुःख और शोक दूर हो गया।

যাহাঁ যাহাঁ প্রভুর চরণ পড়য়ে চলিতে ।
সে মৃত্তিকা লয় লোক, গর্ত হয় পথে ॥ ১৬৫ ॥

যাহাঁ যাহাঁ প্রভুর চরণ পড়য়ে চলিতে ।
সে মৃত্তিকা লয় লোক, গর্ত হয় পথে ॥ ১৬৫ ॥

যাহাঁ যাহাঁ—जहाँ कहीं; **প্রভুর**—महाप्रभु के; **চরণ**—चरणकमल; **পড়য়ে**—पड़े;

चलिते—चलते समय; **से**—वह; **मृत्तिका**—मिट्टी; **लय**—ले लेते; **लोक**—लोग; **गर्त**—गड्ढे; **हय**—वहाँ हो जाते; **पथे**—मार्ग पर।

अनुवाद

जहाँ-जहाँ महाप्रभु के चरणकमल भूमि पर पड़ते थे, लोग तुरन्त आकर वहाँ की धूल ले लेते थे। उन लोगों ने इतनी धूल एकत्रित की कि इससे मार्ग में अनेक गड्ढे बन गये।

ঐছে চলি, আইলা প্রভু 'রামকেলি' গ্রাম ।
গৌড়ের নিকট গ্রাম অতি অনুপাম ॥ ১৬৬॥

ऐछे चलि, आइला प्रभु 'रामकेलि' ग्राम ।
गौड़ेर निकट ग्राम अति अनुपाम ॥ १६६॥

ऐछे—इस प्रकार; **चलि**—चलकर; **आइला**—आये; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **रामकेलि ग्राम**—रामकेलि ग्राम; **गौड़ेर**—बंगाल; **निकट**—निकट; **ग्राम**—ग्राम; **अति**—अत्यन्त; **अनुपाम**—अनुपम।

अनुवाद

अन्त में श्री चैतन्य महाप्रभु रामकेलि नामक गाँव में आये। यह गाँव बंगाल की सीमा पर स्थित है और अत्यन्त मनोहर है।

तात्पर्य

रामकेलि ग्राम बंगाल की सीमा पर गंगा नदी के तट पर स्थित है। श्रील रूप गोस्वामी तथा सनातन गोस्वामी इसी गाँव के रहने वाले थे।

তাহাঁ নৃত্য করে প্রভু প্রেমে অচেতন ।
কোটি কোটি লোক আইসে দেখিতে চরণ ॥ ১৬৭॥

তাহাঁ নৃত্য করে প্রভু প্রেমে অচেতন ।
কোটি কোটি লোক আইসে দেখিতে চরণ ॥ ১৬৭॥

তাহাঁ—वहाँ; **नृत्य**—नृत्य; **करे**—किया; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु ने; **प्रेमे**—भगवत्-प्रेम में; **अचेतन**—अचेतन होकर; **कोटि कोटि**—असंख्य; **लोक**—लोग; **आइसे**—आये; **देखिते**—देखने के लिए; **चरण**—उनके चरणकमल।

अनुवाद

रामकेलि ग्राम में संकीर्तन करते समय महाप्रभु नृत्य करते और कभी-कभी भगवत्-प्रेमवश अपनी चेतना खो देते थे। रामकेलि ग्राम में असंख्य लोग उनके चरणकमलों का दर्शन करने के लिए आये।

गौड़ेश्वर यवन-राजा प्रभाव शुनिञा ।
कहिते लागिल किछु विस्मित हञा ॥ १६८॥

गौड़ेश्वर यवन-राजा प्रभाव शुनिञा ।
कहिते लागिल किछु विस्मित हञा ॥ १६८॥

गौड़-ईश्वर—बंगाल का राजा; **यवन-राजा**—मुस्लिम राजा; **प्रभाव**—प्रभाव; **शुनिञा**—सुनकर; **कहिते**—कहने; **लागिल**—लगा; **किछु**—कुछ; **विस्मित**—विस्मित; **हञा**—होकर।

अनुवाद

जब बंगाल के मुसलमान राजा ने सुना कि श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रभाव से असंख्य लोग आकृष्ट हो रहे हैं, तो वह अत्यन्त विस्मित हुआ और इस प्रकार कहने लगा।

तात्पर्य

उस समय बंगाल का मुसलमान राजा नवाब हुसैन शाह बादशाह था।

विना दाने एत लोक याँर पाछे हय ।
सेइ त' गोसाञि, इहा जानिह निश्चय ॥ १६९॥

विना दाने एत लोक ग्याँर पाछे हय ।
सेइ त' गोसाञि, इहा जानिह निश्चय ॥ १६९॥

विना—बिना; **दाने**—दान; **एत**—इतने अधिक; **लोक**—लोग; **ग्याँर**—जिनके; **पाछे**—पीछे; **हय**—हैं; **सेइ त'**—वह (निश्चित रूप से); **गोसाञि**—पैगम्बर, दूत; **इहा**—यह; **जानिह**—जानो; **निश्चय**—निश्चित रूप से।

अनुवाद

"बिना कुछ दान दिये ही जिस व्यक्ति का इतने लोग अनुसरण कर

रहे हों, वह निश्चय ही ईश्वर का दूत होगा। मैं निश्चित रूप से ऐसा समझता हूँ।"

काजी, यवन इहार ना करिह हिंसन ।
आपन-इच्छाय बुलुन, याहाँ उँहार मन ॥ १७० ॥

काजी, यवन इहार ना करिह हिंसन ।
आपन-इच्छाय बुलुन, याहाँ उँहार मन ॥ १७० ॥

काजी—काजी; **यवन**—मुस्लिम; **इहार**—उनके; **ना**—नहीं; **करिह**—करते; **हिंसन**—द्वेष; **आपन-इच्छाय**—उनकी अपनी इच्छा से; **बुलुन**—उन्हें जाने दो; **याहाँ**—जहाँ कहीं भी; **उँहार**—उनका; **मन**—मन।

अनुवाद

उस मुसलमान राजा ने अपने काजी (मैजिस्ट्रेट) को आदेश दिया, "इस हिन्दू ईश्वर के दूत को ईर्ष्यावश तंग मत करना। यह जहाँ भी जो कुछ चाहे उसे करने दिया जाये।"

तात्पर्य

एक मुसलमान राजा तक श्री चैतन्य महाप्रभु को ईश्वर के दूत के दिव्य पद पर स्थित जान गया था, अतएव उसने स्थानीय काजी को आदेश दिया कि वह उन्हें तंग न करे, अपितु उन्हें इच्छानुसार कार्य करने दिया जाये।

केशव-छत्रीरे राजा वार्ता पुछिल ।
प्रभुर महिमा छत्री उड़ाइया दिल ॥ १७१ ॥

केशव-छत्रीरे राजा वार्ता पुछिल ।
प्रभुर महिमा छत्री उड़ाइया दिल ॥ १७१ ॥

केशव-छत्रीरे—केशव छत्री नामक व्यक्ति से; **राजा**—राजा; **वार्ता**—समाचार; **पुछिल**—पूछा; **प्रभुर**—महाप्रभु का; **महिमा**—महिमा; **छत्री**—केशव छत्री; **उड़ाइया**—कोई महत्त्व नहीं; **दिल**—दिया।

अनुवाद

जब मुसलमान राजा ने अपने सहायक केशव छत्री से श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रभाव के बारे में जानना चाहा, तो उसने महाप्रभु के बारे में

सब कुछ जानते हुए भी बात टालने के लिए चैतन्य महाप्रभु के कार्यकलापों को कोई महत्त्व नहीं दिया।

तात्पर्य

जब केशव छत्री से श्री चैतन्य महाप्रभु के विषय में पूछा गया, तो वह कूटनीतिज्ञ की भाँति बात करने लगा। यद्यपि वह उनके विषय में सब कुछ जानता था, किन्तु उसे भय था कि कहीं मुसलमान राजा महाप्रभु का शत्रु न बन जाये। अत: उसने महाप्रभु के कार्यों को कोई प्रधानता नहीं दी, जिससे मुस्लिम राजा उन्हें एक सामान्य व्यक्ति समझकर किसी प्रकार का कष्ट न पहुँचाये।

ভিখারী সন্ন্যাসী করে তীর্থ পর্যটন ।
তাঁরে দেখিবারে আইসে দুই চারি জন ॥ ১৭২ ॥

भिखारी सन्न्यासी करे तीर्थ पर्य्यटन ।
ताँरे देखिबारे आइसे दुइ चारि जन ॥ १७२ ॥

भिखारि—भिखारी; **सन्न्यासी**—संन्यासी; **करे**—करते हैं; **तीर्थ**—तीर्थ स्थानों की; **पर्य्यटन**—यात्रा; **ताँरे**—उनको; **देखिबारे**—देखने के लिए; **आइसे**—आते हैं; **दुइ चारि जन**—मात्र कुछ लोग ही।

अनुवाद

केशव छत्री ने मुसलमान राजा को बतलाया कि चैतन्य महाप्रभु एक संन्यासी हैं, जो विभिन्न तीर्थस्थलों की यात्रा कर रहे हैं, अतएव कुछेक लोग ही उन्हें देखने आते हैं।

যবনে তোমার ঠাঞি করয়ে লাগানি ।
তাঁর হিংসায় লাভ নাহি, হয় আর হানি ॥ ১৭৩ ॥

য়বনে তোমার ঠাঞি করয়ে লাগানি ।
তাঁর হিংসায় লাভ নাহি, হয় আর হানি ॥ १७३ ॥

য়বনে—आपका मुस्लिम सेवक; **तोमार**—आपका; **ठाञि**—स्थान; **करये**—करता है; **लागानि**—षड्यंत्र; **ताँर**—उनका; **हिंसाय**—द्वेष करने के लिए; **लाभ नाहि**—कोई लाभ नहीं है; **हय**—है; **आर**—मात्र; **हानि**—हानि।

अनुवाद

केशव छत्री ने कहा, "आपका मुसलमान सेवक ईर्ष्यावश उनके विरुद्ध षड्यंत्र कर रहा है। मेरे विचार से उनमें अधिक रुचि लेना आपके लिए लाभप्रद नहीं होगा, प्रत्युत इससे नुकसान ही हो सकता है।"

রাজারে প্রবোধি' কেশব ব্রাহ্মণ পাঠাঞা ।
চলিবার তরে প্রভুরে পাঠাইল কহিঞা ॥ ১৭৪ ॥

राजारे प्रबोधि' केशव ब्राह्मण पाठाञा ।
चलिबार तरे प्रभुरे पाठाइल कहिञा ॥ १७४ ॥

राजारे—राजा को; **प्रबोधि'**—शान्त करने के बाद; **केशव**—केशव छत्री; **ब्राह्मण**—एक ब्राह्मण; **पाठाञा**—वहाँ भेजकर; **चलिबार तरे**—चले जाने के लिए; **प्रभुर**—महाप्रभु को; **पाठाइल**—भेजा; **कहिञा**—कहने के लिए।

अनुवाद

इस प्रकार राजा को समझा-बुझाकर केशव छत्री ने श्री चैतन्य महाप्रभु के पास इस प्रार्थना के साथ एक ब्राह्मण दूत भेजा कि वे शीघ्र ही वहाँ से चले जायें।

দবির খাসেরে রাজা পুছিল নিভৃতে ।
গোসাঞির মহিমা তেঁহো লাগিল কহিতে ॥ ১৭৫ ॥

दबिर खासेरे राजा पुछिल निभृते ।
गोसाञिर महिमा तेंहो लागिल कहिते ॥ १७५ ॥

दबिर खासेरे—दबीर खास (श्री रूप गोस्वामी का उस समय का नाम); **राजा**—राजा; **पुछिल**—पूछा; **निभृते**—एकान्त में; **गोसाञिर**—चैतन्य महाप्रभु की; **महिमा**—महिमाएँ; **तेंहो**—वे; **लागिल**—लगे; **कहिते**—कहने।

अनुवाद

राजा ने एकान्त में दबिर खास (श्रील रूप गोस्वामी) से पूछताछ की, तो वे महाप्रभु की महिमाओं का वर्णन करने लगे।

যে তোমারে রাজ্য দিল, যে তোমার গোসাঞা ।
তোমার দেশে তোমার ভাগ্যে জন্মিলা আসিঞা ॥ ১৭৬॥

যে তোমারে রাজ্য দিল, যে তোমার গোসাঞা ।
তোমার দেশে তোমার ভাগ্যে জন্মিলা আসিঞা ॥ ১৭৬ ॥

যে—वे जिन्होंने; **তোমারে**—आपको; **রাজ্য**—राज्य; **দিল**—दिया; **যে**—वे जो; **তোমার**—आपका; **গোসাঞা**—पैगम्बर (अवतार); **তোমার দেশে**—आपके देश में; **তোমার ভাগ্যে**—आपके सौभाग्य से; **জন্মিলা**—जन्म लिया; **আসিঞা**—आये हैं।

अनुवाद

श्रील रूप गोस्वामी ने कहा, "जिस पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् ने आपको यह राज्य दिया है और जिन्हें आप ईश्वर के दूत के रूप में स्वीकार करते हैं, उन्होंने आपके सौभाग्य से आपके देश में जन्म लिया है।

তোমার মঙ্গল বাঞ্ছে, কার্য-সিদ্ধি হয় ।
ইহার আশীর্বাদে তোমার সর্বত্র-ই জয় ॥ ১৭৭॥

তোমার মঙ্গল বাঞ্ছে, কার্য্য-সিদ্ধি হয় ।
ইহার আশীর্বাদে তোমার সর্বত্র-ই জয় ॥ ১৭৭ ॥

তোমার—आपका; **মঙ্গল**—सौभाग्य; **বাঞ্ছে**—वे चाहते हैं; **কার্য্য**—कार्य की; **সিদ্ধি**—सिद्धि; **হয়**—हो; **ইহার**—उनके; **আশীর্বাদে**—आशीर्वाद से; **তোমার**—आपकी; **সর্বত্র-ই**—प्रत्येक स्थान पर; **জয়**—विजय, सफलता।

अनुवाद

"यह ईश्वर के दूत सदैव आपके मंगल के आकांक्षी हैं। उन्हीं की कृपा से आपके सारे कार्य सफल होते हैं। उनके आशीर्वाद से आपकी सर्वत्र विजय होगी।

মোরে কেন পুছ, তুমি পুছ আপন-মন ।
তুমি নরাধিপ হও বিষ্ণু-অংশ সম ॥ ১৭৮॥

মোরে কেন পুছ, তুমি পুছ আপন-মন ।
তুমি নরাধিপ হও বিষ্ণু-অংশ সম ॥ ১৭৮ ॥

मोरे—मुझे; **केन**—क्यों; **पुछ**—आप पूछते हैं; **तुमि**—आप; **पुछ**—पूछो; **आपन-मन**—अपने मन से; **तुमि**—आप; **नर-अधिप**—लोगों का राजा; **हओ**—आप हैं; **विष्णु-अंश सम**—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु के प्रतिनिधि।

अनुवाद

"आप मुझसे क्यों पूछ रहे हैं? आप अपने मन से क्यों नहीं पूछते? आप जनता के राजा होने के कारण पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् के प्रतिनिधि हैं। अतएव आप इसे मुझसे अधिक अच्छी तरह समझ सकते हैं।"

তোমার চিত্তে চৈতন্যেরে কৈছে হয় জ্ঞান ।
তোমার চিত্তে যেই লয়, সেই ত' প্রমাণ ॥ ১৭৯॥

तोमार चित्ते चैतन्येरे कैछे हय ज्ञान ।
तोमार चित्ते येइ लय, सेइ त' प्रमाण ॥ १७९ ॥

तोमार चित्ते—आपके मन में; **चैतन्येरे**—चैतन्य महाप्रभु के; **कैछे**—कैसे; **हय**—है; **ज्ञान**—ज्ञान; **तोमार**—आपका; **चित्ते**—मन; **येइ**—जो कुछ; **लय**—लेता है; **सेइ त' प्रमाण**—वही प्रमाण है।

अनुवाद

इस प्रकार श्रील रूप गोस्वामी ने राजा को बतलाया कि उसका मन श्री चैतन्य महाप्रभु को जानने का एक साधन है। उन्होंने राजा को विश्वास दिलाया कि उसके मन में जो भी आये उसे ही प्रमाण मानें।

রাজা কহে, শুন, মোর মনে যেই লয় ।
সাক্ষাতীশ্বর ইহঁ নাহিক সংশয় ॥ ১৮০॥

राजा कहे, शुन, मोर मने येइ लय ।
साक्षातीश्वर इहँ नाहिक संशय ॥ १८० ॥

राजा कहे—राजा ने उत्तर दिया; **शुन**—सुनो; **मोर**—मेरा; **मने**—मन; **येइ**—जो; **लय**—होता है; **साक्षात्**—साक्षात्; **ईश्वर**—ईश्वर; **इहँ**—वे; **नाहिक**—नहीं है; **संशय**—शंका।

अनुवाद

राजा ने उत्तर दिया, "मैं श्री चैतन्य महाप्रभु को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् मानता हूँ। इसमें कोई सन्देह नहीं है।"

এত কহি' রাজা গেলা নিজ অভ্যন্তরে ।
তবে দবির খাস আইলা আপনার ঘরে ॥ ১৮১ ॥

एत कहि' राजा गेला निज अभ्यन्तरे ।
तबे दबिर खास आइला आपनार घरे ॥ १८१ ॥

एत कहि'—यह कहकर; **राजा**—राजा; **गेला**—गया; **निज**—अपने; **अभ्यन्तरे**—अपने निजी घर में; **तबे**—उस समय; **दबिर खास**—श्रील रूप गोस्वामी; **आइला**—लौट आये; **आपनार**—अपने निजी; **घरे**—निवासस्थान को।

अनुवाद

रूप गोस्वामी के साथ इस बातचीत के बाद राजा अपने अन्तःपुर में चला गया। तब रूप गोस्वामी (जो उस समय दबिर खास कहलाते थे) भी अपने घर लौट गये।

तात्पर्य

एक राजा निश्चित रूप से पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का प्रतिनिधि होता है। *भगवद्गीता* में कहा गया है—*सर्वलोकमहेश्वरम्*—पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् सभी ग्रहों के मालिक हैं। प्रत्येक ग्रह में कोई न कोई शासक या राजा होना चाहिए। ऐसे व्यक्ति को भगवान् विष्णु का प्रतिनिधि माना जाता है। उसे भगवान् की ओर से सभी लोगों के हितों को ध्यान में रखना चाहिए। इसलिए परमात्मा रूप में भगवान् विष्णु राजा को बुद्धि प्रदान करते हैं, जिससे वह सरकारी कामकाज सम्पन्न कर सके। अतएव श्रील रूप गोस्वामी ने राजा से पूछा कि उसके मन में श्री चैतन्य महाप्रभु के प्रति कैसा भाव है और यह संकेत किया कि राजा जो भी उनके विषय में सोच रहा था, वह ठीक था।

ঘরে আসি' দুই ভাই যুকতি করিঞা ।
প্রভু দেখিবারে চলে বেশ লুকাঞা ॥ ১৮২ ॥

घरे आसि' दुइ भाइ युकति करिञा ।
प्रभु देखिबारे चले वेश लुकाञा ॥ १८२ ॥

घरे आसि'—घर लौटकर; **दुइ भाइ**—दोनों भाई; **युकति**—विचार विमर्श; **करिञा**—करके; **प्रभु**—चैतन्य महाप्रभु; **देखिबारे**—मिलने के लिए; **चले**—चलते हैं; **वेश**—वेश; **लुकाञा**—छुपाकर।

अनुवाद

अपने घर लौट आने के बाद दबिर खास तथा उनके भाई ने पर्याप्त विचार विमर्श के बाद महाप्रभु से वेष बदलकर मिलने का निर्णय किया।

अर्ध-रात्रे दुई भाई आइला प्रभु-स्थाने ।
प्रथमे मिलिला नित्यानन्द-हरिदास सने ॥ १८३॥

अर्ध-रात्रे दुइ भाइ आइला प्रभु-स्थाने ।
प्रथमे मिलिला नित्यानन्द-हरिदास सने ॥ १८३॥

अर्ध-रात्रे—आधी रात को; **दुइ भाइ**—दोनों भाई; **आइला**—आये; **प्रभु-स्थाने**—चैतन्य महाप्रभु के स्थान पर; **प्रथमे**—पहले; **मिलिला**—मिले; **नित्यानन्द-हरिदास**—नित्यानन्द प्रभु और हरिदास ठाकुर; **सने**—के साथ।

अनुवाद

इस प्रकार दबिर खास तथा साकर मल्लिक दोनों भाई आधी रात को वेश बदलकर श्री चैतन्य महाप्रभु का दर्शन करने गये। सर्वप्रथम वे नित्यानन्द प्रभु तथा हरिदास ठाकुर से मिले।

ताँरा दुई-जन जानाइला प्रभुर गोचरे ।
रूप, साकर-मल्लिक आइला तोमा' देखिबारे ॥ १८४॥

ताँरा दुइ-जन जानाइला प्रभुर गोचरे ।
रूप, साकर-मल्लिक आइला तोमा' देखिबारे ॥ १८४॥

ताँरा—वे; **दुइ-जन**—दोनों व्यक्ति; **जानाइला**—सूचना दी; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **गोचरे**—उपस्थिति में; **रूप**—रूप गोस्वामी; **साकर-मल्लिक**—और सनातन गोस्वामी; **आइला**—आये हैं; **तोमा'**—आपके; **देखिबारे**—दर्शन के लिए।

अनुवाद

श्री नित्यानन्द प्रभु तथा हरिदास ठाकुर ने श्री चैतन्य महाप्रभु को बतलाया कि दो भक्त—श्री रूप तथा सनातन—उनका दर्शन करने के लिए आये हैं।

तात्पर्य

साकर मल्लिक नाम था सनातन गोस्वामी का और दबिर खास नाम था

रूप गोस्वामी का। वे मुसलमान राजा की नौकरी में इसी नाम से जाने जाते थे, अतएव ये मुस्लिम नाम थे। सरकारी अधिकारी होने के कारण इन दोनों भाइयों ने विभिन्न मुसलमानी रीति-रिवाज अपना लिये थे।

দুই গুচ্ছ তৃণ দুঁহে দশনে ধরিঞা ।
গলে বস্ত্র বান্ধি' পড়ে দণ্ডবৎ হঞা ॥ ১৮৫॥

दुइ गुच्छ तृण दुँहे दशने धरिआ ।
गले वस्त्र बान्धि' पड़े दण्डवत् हआ ॥ १८५॥

दुइ—दो; **गुच्छ**—गुच्छे; **तृण**—तिनके के; **दुँहे**—उन दोनों ने; **दशने**—दांतों में; **धरिआ**—पकड़कर; **गले**—गले पर; **वस्त्र**—वस्त्र; **बान्धि'**—बाँधकर; **पड़े**—गिर पड़े; **दण्डवत्**—दण्ड की भाँति; **हआ**—होकर।

अनुवाद

दोनों भाई अत्यन्त दीनतावश अपने दाँतों में तिनके दबाकर और अपने गले में कपड़ा बाँधकर महाप्रभु के सामने दण्ड के समान गिर पड़े।

দৈন্য রোদন করে, আনন্দে বিহ্বল ।
প্রভু কহে,—উঠ, উঠ, হইল মঙ্গল ॥ ১৮৬॥

दैन्य रोदन करे, आनन्दे विह्वल ।
प्रभु कहे,—उठ, उठ, हइल मङ्गल ॥ १८६॥

दैन्य—विनम्रता; **रोदन**—रोना; **करे**—किया; **आनन्दे**—आनन्द में; **विह्वल**—विह्वल; **प्रभु कहे**—महाप्रभु ने कहा; **उठ उठ**—उठो, उठो; **हइल मङ्गल**—आपका मंगल हो।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु को देखकर दोनों भाई आनन्द से अभिभूत हो गये और दीनतावश रोने लगे। महाप्रभु ने उनसे उठने के लिए कहा और उनके मंगल की कामना की।

উঠি' দুই ভাই তবে দন্তে তৃণ ধরি' ।
দৈন্য করি' স্তুতি করে করয়োড় করি ॥ ১৮৭॥

उठि' दुइ भाइ तबे दन्ते तृण धरि' ।
दैन्य करि' स्तुति करे करयोड़ करि ॥ १८७॥

उठि'—उठकर; **दुइ**—दोनों; **भाइ**—भाई; **तबे**—तब; **दन्ते**—दांतों में; **तृण**—तृण; **धरि'**—दबाकर; **दैन्य करि'**—विनम्रतापूर्वक; **स्तुति करे**—स्तुति की; **कर-योड़**—हाथ जोड़कर; **करि'**—करके।

अनुवाद

दोनों भाई उठ खड़े हुए और पुनः अपने दाँतों में तिनका दबाकर उन्होंने हाथ जोड़कर विनीत भाव से प्रार्थना की।

जय जय श्री-कृष्ण-चैतन्य दयामय ।
पतित-पावन जय, जय महाशय ॥ १८८॥

जय जय श्री-कृष्ण-चैतन्य दयामय ।
पतित-पावन जय, जय महाशय ॥ १८८॥

जय जय—जय जय; **श्री-कृष्ण-चैतन्य**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **दयामय**—सर्वाधिक दयालु; **पतित-पावन**—पतितपावन; **जय**—जय; **जय**—जय; **महाशय**—महाशय।

अनुवाद

"पतितात्माओं का उद्धार करने वाले परम दयालु श्रीकृष्ण चैतन्य महाप्रभु की जय हो! परम भगवान् की जय हो!

नीच-जाति, नीच-सङ्गी, करि नीच काज ।
तोमार अग्रेते प्रभु कहिते वासि लाज ॥ १८९॥

नीच-जाति, नीच-सङ्गी, करि नीच काज ।
तोमार अग्रेते प्रभु कहिते वासि लाज ॥ १८९॥

नीच-जाति—नीच जाति; **नीच-सङ्गी**—पतितात्माओं की संगति में; **करि**—हम करते हैं; **नीच**—नीच; **काज**—कर्म; **तोमार**—आपके; **अग्रेते**—सामने; **प्रभु**—हे प्रभु; **कहिते**—कहते हुए; **वासि**—हम अनुभव करते हैं; **लाज**—लज्जा।

अनुवाद

"हे प्रभु, हम नीच जाति के हैं और हमारे संगी तथा हमारी नौकरी भी

निम्न कोटि की है। अतएव हम आपके समक्ष अपना परिचय नहीं दे सकते। हमें यहाँ आपके समक्ष खड़े होने में अत्यधिक लज्जा का अनुभव हो रहा है।

तात्पर्य

यद्यपि रूप तथा सनातन (उस समय दबिर खास तथा साकर मल्लिक) दोनों भाइयों ने अपने आपको निम्न कुल से संबधित बतलाया, किन्तु वे मूल कर्णाट के अति-सम्माननीय ब्राह्मण परिवार के थे। इस तरह वे वास्तव में ब्राह्मण जाति के थे। दुर्भाग्यवश मुसलमान सरकार की नौकरी में होने के कारण उनके रीति-रिवाज तथा व्यवहार मुसलमानों जैसे थे। इसीलिए उन्होंने अपने आपको *नीच जाति* का कहा। *जाति* का अर्थ है जन्म। शास्त्रों के अनुसार जन्म तीन प्रकार के होते हैं—पहला माता के गर्भ से, दूसरा शुद्धीकरण संस्कार द्वारा तथा तीसरा गुरु-दीक्षा से। घृणित काम करने या नीच लोगों की संगति करने से मनुष्य नीच बनता है। रूप तथा सनातन, दबिर खास तथा साकर मल्लिक के रूप में, मुसलमानों का संग करते थे, जो स्वाभाविक रूप से ब्राह्मण संस्कृति तथा गो-रक्षा के विरोधी थे। *श्रीमद्भागवत* के सातवें स्कंध में कहा गया है कि प्रत्येक मनुष्य का कोई न कोई वर्ग होता है। वह शास्त्रों में उल्लिखित विशेष लक्षणों द्वारा पहचाना जाता है। वह अपने लक्षणों से ही किसी जाति विशेष का माना जाता है। दबिर खास तथा साकर मल्लिक दोनों ही ब्राह्मण जाति के थे, किन्तु चूँकि वे मुसलमानों के यहाँ नौकर थे, अतएव उनकी मूल प्रवृत्तियाँ बिगड़कर मुसलमानों जैसी बन गईं थीं। चूँकि उनमें ब्राह्मण-संस्कृति के कोई लक्षण लगभग नहीं थे, इसीलिए वे अपने आपको नीच जाति का कहते थे। *भक्तिरत्नाकर* में स्पष्ट कहा गया है कि चूँकि साकर मल्लिक तथा दबिर खास नीच जाति के लोगों के साथ रहते थे, इसीलिए उन्होंने अपना परिचय नीच जाति से सम्बन्धित कहकर दिया। किन्तु वास्तव में उनका जन्म सम्माननीय ब्राह्मण परिवार में हुआ था।

মত্তুল্যো নাস্তি পাপাত্মা নাপরাধী চ কশ্চন ।
পরিহারেঽপি লজ্জা মে কিং ব্রুবে পুরুষোত্তম ॥ ১৯০॥

मत्तुल्यो नास्ति पापात्मा नापराधी च कश्चन ।
परिहारेऽपि लज्जा मे किं ब्रुवे पुरुषोत्तम ॥ १९० ॥

मत्—मेरे; **तुल्यः**—समान; **न अस्ति**—नहीं है; **पाप-आत्मा**—पापी; **न अपराधी**—न ही अपराधी; **च**—भी; **कश्चन**—कोई भी; **परिहारे**—माफी माँगने में; **अपि**—भी; **लज्जा**—लज्जित; **मे**—मुझे; **किम्**—क्या; **ब्रुवे**—मैं कहूँ; **पुरुष-उत्तम**—हे पूर्ण पुरुषोत्तम भगवन्।

अनुवाद

"'हे प्रभु, हम आपको बतला देना चाहते हैं कि न तो हम से बड़ा कोई पापी है, न ही हमारे समान कोई अपराधी है। यदि हम अपने पापकर्म बताना भी चाहें, तो हमें तुरन्त लज्जा आ जाती है। उन्हें छोड़ने की बात तो दूर रही।'"

तात्पर्य

यह श्लोक श्रील रूप गोस्वामी कृत *भक्तिरसामृतसिन्धु* (१.२.१५४) का है।

পতিত-পাবন-হেতু তোমার অবতার ।
আমা-বই জগতে, পতিত নাহি আর ॥ ১৯১ ॥

পতিত-পাবন-হেতু তোমার অবতার ।
আমা-বই জগতে, পতিত নাহি আর ॥ ১৯১ ॥

पतित-पावन—पतित के उद्धार; **हेतु**—हेतु; **तोमार**—आपका; **अवतार**—अवतार; **आमा-बइ**—हमारी अपेक्षा; **जगते**—इस जगत् में; **पतित**—पतित; **नाहि**—नहीं है; **आर**—और अधिक।

अनुवाद

दोनों भाइयों ने निवेदन किया, "हे प्रभु, आप पतितात्माओं का उद्धार करने के लिए अवतरित हुए हैं। आप ऐसा समझिये कि इस संसार में हम जैसा पतित कोई नहीं है।

জগাই-মাধাই দুই করিলে উদ্ধার ।
তাহাঁ উদ্ধারিতে শ্রম নহিল তোমার ॥ ১৯২ ॥

जगाइ-माधाइ दुइ करिले उद्धार ।
ताहाँ उद्धारिते श्रम नहिल तोमार ॥ १९२ ॥

जगाइ-माधाइ—जगाई तथा माधाई दोनों भाई; **दुइ**—दो; **करिले**—आपने किया; **उद्धार**—उद्धार; **ताहाँ**—वहाँ; **उद्धारिते**—उद्धार करने हेतु; **श्रम**—परिश्रम; **नहिल**—नहीं था; **तोमार**—आपका।

अनुवाद

"आपने जगाइ तथा माधाइ दोनों भाइयों का उद्धार किया, किन्तु उनका उद्धार करने में आपको अधिक परिश्रम नहीं करना पड़ा।

ब्राह्मण-जाति तारा, नवद्वीपे घर ।
नीच-सेवा नाहि करे, नहे नीचेर कूर्पर ॥ १९३ ॥

ब्राह्मण-जाति तारा, नवद्वीपे घर ।
नीच-सेवा नाहि करे, नहे नीचेर कूर्पर ॥ १९३ ॥

ब्राह्मण-जाति—ब्राह्मण कुल में जन्मे; **तारा**—वे; **नवद्वीपे**—पवित्र नवद्वीप धाम में; **घर**—उनके घर; **नीच-सेवा**—नीचों की सेवा; **नाहि**—नहीं; **करे**—करते; **नहे**—नहीं; **नीचेर**—नीचों का; **कूर्पर**—साधन।

अनुवाद

"जगाइ तथा माधाइ दोनों भाई ब्राह्मण जाति के थे और उनका निवास-स्थान नवद्वीप की पुण्यभूमि में था। उन्होंने न तो कभी नीच पुरुषों की सेवा की थी, न ही वे नीच कार्यों के साधन बने।

सबे एक दोष तार, हय पापाचार ।
पाप-राशि दहे नामाभासेइ तोमार ॥ १९४ ॥

सबे एक दोष तार, हय पापाचार ।
पाप-राशि दहे नामाभासेइ तोमार ॥ १९४ ॥

सबे—कुल मिलाकर; **एक**—मात्र एक; **दोष**—दोष; **तार**—उनका; **हय**—वे हैं; **पाप-आचार**—पापाचारी; **पाप-राशि**—पाप राशि; **दहे**—जल जाती है; **नाम-आभासेइ**—पवित्र नाम जप के हल्के आभास से; **तोमार**—आपके।

अनुवाद

"जगाइ तथा माधाइ में केवल एक दोष था—वे पापकर्मों में लिप्त रहते थे। किन्तु पापकर्मों का भण्डार आपके पवित्र नाम के कीर्तन के आभास मात्र से ही जलकर भस्म हो सकता है।

तात्पर्य

श्रील रूप गोस्वामी तथा सनातन गोस्वामी ने अपने आपको जगाइ तथा माधाइ नामक उन दो भाइयों से भी अधम बताया, जिनका उद्धार श्री चैतन्य महाप्रभु ने किया था। जब रूप तथा सनातन गोस्वामी ने अपनी तुलना जगाइ तथा माधाइ से की, तो उन्होंने अपने आपको उनसे नीच पाया, क्योंकि इन दोनों शराबी भाइयों का उद्धार करने में महाप्रभु को तनिक भी श्रम नहीं करना पड़ा। ऐसा इसलिए हुआ, क्योंकि पापकर्मों में लिप्त रहने पर भी अन्य कई प्रकार से उनका जीवन उज्ज्वल था। वे नवद्वीप के ब्राह्मण थे तथा ऐसे ब्राह्मण स्वभाव से पुण्यवान होते थे। यद्यपि वे बुरी संगति के कारण कुछ पापकर्मों में लिप्त रहते थे, किन्तु ये अवांछित बातें भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन करने मात्र से ही नष्ट हो सकती थीं। जगाइ तथा माधाइ के लिए दूसरी बात यह थी कि ब्राह्मण परिवार के सदस्य होने के नाते उन्होंने किसी की नौकरी स्वीकार नहीं की थी। शास्त्र द्वारा वर्जित है कि कोई ब्राह्मण किसी दूसरे की नौकरी करे। भाव यह है कि किसी को स्वामी बनाने पर मनुष्य को कुत्ते का कार्य स्वीकार करना पड़ता है। दूसरे शब्दों में, कुत्ता बिना स्वामी के उन्नति नहीं कर सकता और स्वामी को प्रसन्न करने के लिए कुत्ता अनेक लोगों के प्रति अपराध करता है। कुत्ता अपने स्वामी को प्रसन्न करने के लिए निर्दोष लोगों पर भूँकता है। इसी प्रकार जब कोई नौकर बनता है, तो उसे अपने मालिक के आदेशानुसार नीच कार्य करने के लिए बाध्य होना पड़ता है। अतएव जब दबिर खास तथा साकर मल्लिक ने अपनी स्थिति की तुलना जगाई तथा माधाइ से की, तो उन्हें लगा कि जगाइ तथा माधाई दोनों की स्थिति उनसे बहुत अच्छी है। जगाइ तथा माधाइ ने कभी किसी नीच व्यक्ति की नौकरी स्वीकार नहीं की थी, न ही उसके आदेश पर कोई नीच कार्य करने पर विवश हुए थे। वे निन्दा के रूप में श्री चैतन्य महाप्रभु के नाम का उच्चारण करते थे। किन्तु उनका नामोच्चारण करने

के कारण वे तुरन्त ही पापकर्मों के फलों से मुक्त हो गये। इस तरह बाद में उनका उद्धार हुआ।

तोमार नाम लञा तोमार करिल निन्दन ।
सेई नाम हइल तार मुक्तिर कारण ॥१९५॥

तोमार नाम लञा तोमार करिल निन्दन ।
सेइ नाम हइल तार मुक्तिर कारण ॥ १९५ ॥

तोमार—आपका; **नाम**—पावन नाम; **लञा**—लेना; **तोमार**—आपकी; **करिल**—की; **निन्दन**—निन्दा; **सेइ**—वह; **नाम**—पावन नाम; **हइल**—हो गया; **तार**—उनकी; **मुक्तिर**—मुक्ति का; **कारण**—कारण।

अनुवाद

"जगाइ तथा माधाइ ने आपकी निन्दा के रूप में आपके पवित्र नाम का उच्चारण किया। सौभाग्यवश वही पवित्र नाम उनकी मुक्ति का कारण बना।

जगाई-माधाई हैते कोटी कोटी गुण ।
अधम पतित पापी आमि दुई जन ॥१९६॥

जगाइ-माधाइ हैते कोटी कोटी गुण ।
अधम पतित पापी आमि दुइ जन ॥ १९६ ॥

जगाइ-माधाइ—जगाइ और माधाइ; **हैते**—की अपेक्षा; **कोटी कोटी**—लाखों करोड़ों; **गुण**—गुना; **अधम**—अधम, नीच; **पतित**—पतित; **पापी**—पापी; **आमि**—हम; **दुइ**—दोनों; **जन**—व्यक्ति।

अनुवाद

"हम दोनों जगाइ तथा माधाइ से करोड़ों गुना अधम हैं। हम उनसे अधिक नीच, पतित तथा पापी हैं।

म्लेच्छ-जाति, म्लेच्छ-सेवी, करि म्लेच्छ-कर्म ।
गो-ब्राह्मण-द्रोहि-सङ्गे आमार सङ्गम ॥१९७॥

म्लेच्छ-जाति, म्लेच्छ-सेवी, करि म्लेच्छ-कर्म ।
गो-ब्राह्मण-द्रोहि-सङ्गे आमार सङ्गम ॥ १९७॥

म्लेच्छ-जाति—म्लेच्छ (मांसाहारी) जाति; **म्लेच्छ-सेवी**—म्लेच्छों के सेवक; **करि**—हम करते हैं; **म्लेच्छ-कर्म**—म्लेच्छ कर्म; **गो**—गौओं; **ब्राह्मण**—ब्राह्मण; **द्रोहि**—द्रोही, वैरी; **सङ्गे**—के साथ; **आमार**—हमारी; **सङ्गम**—संगति।

अनुवाद

"वास्तव में हम म्लेच्छ (मांसाहारी) जाति के हैं, क्योंकि हम म्लेच्छों के नौकर हैं। निस्सन्देह, हमारे कार्य बिल्कुल म्लेच्छों की ही तरह हैं। चूँकि हम सदैव ऐसे लोगों की संगति करते हैं, अतएव हम गौवों तथा ब्राह्मणों के प्रति शत्रुभाव रखने वाले हैं।"

तात्पर्य

मांसाहारी दो प्रकार के होते हैं—वे जो मांसाहारी परिवार में जन्म लेते हैं तथा वे जो मांसाहारियों की संगति में रहने लगते हैं। हमें श्रील रूप तथा सनातन गोस्वामियों (पहले दबिर खास तथा साकर मल्लिक) से यह शिक्षा मिलती है कि किस प्रकार मांसाहारियों की संगति करने मात्र से कोई मांसाहारी बन जाता है। इस समय भारत में महत्त्वपूर्ण पदों पर अनेक तथाकथित ब्राह्मण आसीन हैं, किन्तु फिर भी राज्य की ओर से गो-वध के लिए कसाई-घर चलते हैं और वैदिक सभ्यता के विरुद्ध प्रचार किया जाता है। वैदिक सभ्यता का पहला सिद्धान्त यह है कि मांसाहार तथा नशे से दूर रहना। किन्तु इस समय भारत में नशा तथा मांसाहार को प्रोत्साहित किया जा रहा है और इस प्रकार राष्ट्र की अध्यक्षता करनेवाले तथाकथित विद्वान ब्राह्मण श्रील रूप गोस्वामी तथा सनातन गोस्वामी द्वारा यहाँ दिये गये मापदण्ड के अनुसार पतित हो गये हैं। ये तथाकथित ब्राह्मण अच्छा वेतन पाने के लिए इन कसाई-घरों को स्वीकृति दे देते हैं और ऐसे जघन्य कार्यों का प्रतिरोध नहीं करते। इस तरह वैदिक सभ्यता के सिद्धान्तों की अवमानना एवं गो-वध का समर्थन करने के कारण वे तुरन्त *म्लेच्छों* तथा *यवनों* के पद को प्राप्त हो जाते हैं। *म्लेच्छ* मांसाहार करने वाला है और वैदिक संस्कृति से भ्रष्ट व्यक्ति को *यवन* कहते हैं। दुर्भाग्यवश ऐसे म्लेच्छ तथा यवन प्रशासन चलाते हैं। तब भला राज्य में

सुख-शान्ति कैसे रह सकती है? राजा या राष्ट्रपति को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का प्रतिनिधि होना चाहिए। जब महाराज युधिष्ठिर ने भारतवर्ष (जो पहले सारे जल-थल समेत सम्पूर्ण पृथ्वी ग्रह था) का शासन सँभाला, तब उन्होंने भीष्मदेव तथा भगवान् कृष्ण जैसे महापुरुषों का आशीर्वाद प्राप्त किया था। इस तरह वे धार्मिक नियमों के अनुसार समूचे संसार पर शासन करते रहे। किन्तु इस समय राज्य के अध्यक्ष धार्मिक नियमों की परवाह नहीं करते। यदि अधार्मिक लोग किसी बात पर, चाहे वह शास्त्रों के नियमों के विरुद्ध क्यों न हो, मतदान करते हैं, तो बिल पारित हो जाते हैं। ऐसे जघन्य कार्यों से सहमत होकर राष्ट्रपति तथा राज्य के अध्यक्ष पाप के भागी बनते हैं। सनातन तथा रूप गोस्वामी ने अपने आपको ऐसे ही कार्यों के लिए दोषी माना, इसलिए ब्राह्मण-कुल में जन्म होने पर भी उन्होंने अपनी गिनती म्लेच्छों में की।

মোর কর্ম, মোর হাতে-গলায় বান্ধিয়া ।
কু-বিষয়-বিষ্ঠা-গর্তে দিয়াছে ফেলাইয়া ॥ ১৯৮॥

मोर कर्म, मोर हाते-गलाय बान्धिया ।
कु-विषय-विष्ठा-गर्ते दियाछे फेलाइया ॥ १९८॥

मोर—हमारे; **कर्म**—कर्म; **मोर**—हमारे; **हाते**—हाथ पर; **गलाय**—गर्दन पर; **बान्धिया**—बँधे; **कु-विषय**—इन्द्रियतृप्ति की घृणित वस्तुएँ; **विष्ठा**—विष्ठा; **गर्ते**—खाई में; **दियाछे फेलाइया**—फेंक दिए गये हैं।

अनुवाद

साकर मल्लिक तथा दबिर खास, दोनों भाइयों ने विनीत भाव से निवेदन किया कि अपने जघन्य कार्यों के फलस्वरूप उन्हें हाथ तथा गले से बाँधकर भौतिक इन्द्रिय-भोग रूपी घृणित मल जैसे पदार्थों के गड्ढे में गिरा दिये गये हैं।

तात्पर्य

श्रील भक्तिसिद्धान्त सरस्वती ठाकुर ने *कु-विषय-गर्त* की व्याख्या इस प्रकार की है : "इन्द्रियों के कार्यों के फलस्वरूप हम अनेक इन्द्रियतृप्ति के कार्य करते हैं और इस तरह भौतिक प्रकृति के नियमों से बँध जाते हैं। यह

बन्धन *विषय* कहलाता है। जब इन्द्रियतृप्ति के कार्य धर्मानुसार सम्पन्न होते हैं, तो वे *सुविषय* कहलाते हैं। *सु* शब्द का अर्थ है 'अच्छा' तथा *विषय* का अर्थ है 'इन्द्रिय-विषय।' जब इन्द्रियतृप्ति के कार्य पापमय अवस्थाओं में सम्पन्न किये जाते हैं, तो वे *कुविषय* कहलाते हैं। चाहे *कुविषय* हो या *सुविषय,* दोनों ही भौतिक कार्य हैं। इसीलिए उनकी तुलना विष्ठा या मल से की गई है। दूसरे शब्दों में, ऐसे कार्यों से बचना चाहिए। *सुविषय* तथा *कुविषय* से मुक्त होने के लिए मनुष्य को पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् कृष्ण की दिव्य प्रेममयी सेवा में लग जाना चाहिए। भक्ति के कार्य भौतिक गुणों के कल्मष से मुक्त होते हैं। अतएव सुविषय तथा कुविषय के फलों से मुक्त होने के लिए मनुष्य को कृष्णभावनामृत ग्रहण करना चाहिए। इस तरह मनुष्य अपने आपको कल्मष से बचा सकता है।" इसी सन्दर्भ में श्रील नरोत्तमदास ठाकुर का भजन है :

कर्मकाण्ड, ज्ञानकाण्ड, केवल विषेर भाण्ड
अमृत बलिया येब खाय।
नाना योनि सदा फिरे, कदर्य भक्षण करे
तार जन्म अध:पाते याय॥

सुविषय तथा कुविषय दोनों ही *कर्म-काण्ड* के अन्तर्गत आते हैं। एक अन्य काण्ड (कार्य करने की भूमिका) भी है—ज्ञान-काण्ड अर्थात् भव-बन्धन से उद्धार पाने के विचार से सुविषय तथा कुविषय के प्रभावों के बारे में दार्शनिक चिन्तन। ज्ञान-काण्ड के स्तर पर मनुष्य कुविषय तथा सुविषय की वस्तुओं का परित्याग कर सकता है। किन्तु यह जीवन की पूर्णता नहीं है। पूर्णता तो ज्ञान-काण्ड तथा कर्म-काण्ड दोनों से परे है। यह भक्ति के स्तर पर होती है। यदि हम कृष्णभावनामृत में भक्ति को ग्रहण नहीं करते, तो हमें इसी भौतिक संसार के भीतर रहना पड़ेगा और ज्ञान-काण्ड तथा कर्म-काण्ड के प्रभावों के कारण जन्म-मृत्यु के चक्र को सहना पड़ेगा। इसीलिए नरोत्तम दास ठाकुर कहते हैं :

नाना योनि सदा फिरे, कदर्य भक्षण करे
तार जन्म अध:पाते याय।

"मनुष्य नाना योनियों में भ्रमण करता है और सभी तरह की वर्जित वस्तुओं

का भक्षण करता है। इस प्रकार वह अपने आस्तित्व को बिगाड़ देता है।" भौतिक जीवन में कुविषय और सुविषय में लिप्त मनुष्य की वही स्थिति होती है, जैसी मल के कीड़े की। मल मल ही है, चाहे वह गीला हो या सूखा। इसी प्रकार भौतिक कर्म, पवित्र या अपवित्र हो सकते हैं, किन्तु भौतिक होने के कारण वे मल के तुल्य हैं। कीड़े अपने आप मल से बाहर नहीं निकल सकते। इसी प्रकार इस भौतिक संसार में बुरी तरह आसक्त लोग भौतिकतावाद से निकलकर सहसा कृष्णभावनाभावित नहीं हो सकते। उनमें आसक्ति तो रहती ही है। जैसा प्रह्लाद महाराज *श्रीमद्भागवत* (७.५.३०) में बतलाते हैं :

मतिर्न कृष्णे परतः स्वतो वा
मिथोऽभिपद्येत गृहव्रतानाम्।
अदान्तगोभिर्विशतां तमिस्रं
पुनः पुनश्चर्वितचर्वणानाम्॥

"जिन लोगों ने इस भौतिक जगत् में रहकर इन्द्रियतृप्ति भोगने का निश्चय कर लिया है, वे कृष्णभावनाभावित नहीं हो सकते। भौतिक कर्म में लिप्त रहने के कारण वे न तो अपने गुरुजनों के उपदेशों से, न ही अपने निजी प्रयासों से या बड़े-बड़े सम्मेलनों में प्रस्ताव पारित करने से मुक्ति प्राप्त कर पाते हैं। अपनी असंयमित इन्द्रियों के कारण इच्छित या अनिच्छित योनि में जन्म-मृत्यु के चक्र की पुनरावृत्ति के लिए वे संसार के अंधतम प्रदेश में क्रमशः गिरते रहते हैं।"

आमा उद्धारिते बली नाहि त्रि-भुवने ।
पतित-पावन तुमि——सबे तोमा विने ॥१९९॥

आमा उद्धारिते बली नाहि त्रि-भुवने ।
पतित-पावन तुमि——सबे तोमा विने ॥ १९९ ॥

आमा—हमारा; **उद्धारिते**—उद्धार करने के लिए; **बली**—शक्तिशाली; **नाहि**—नहीं; **त्रि-भुवने**—तीनों भुवनों में; **पतित-पावन**—पतित पावन; **तुमि**—आप; **सबे**—केवल; **तोमा**—आप; **विने**—अतिरिक्त।

अनुवाद

"तीनों लोकों में हमारा उद्धार करने में कोई भी समर्थ नहीं है। आप पतितात्माओं के एकमात्र उद्धारक हैं, अतएव आपके अतिरिक्त हमारा कोई दूसरा नहीं है।

आमा उद्धारिया यदि देखाओ निज-बल ।
'पतित-पावन' नाम तबे से सफल ॥२००॥

आमा उद्धारिया यदि देखाओ निज-बल ।
'पतित-पावन' नाम तबे से सफल ॥२००॥

आमा—हमारा; **उद्धारिया**—उद्धार कर; **यदि**—यदि; **देखाओ**—आप दिखाएँ; **निज-बल**—अपना बल; **पतित-पावन**—पतितपावन; **नाम**—यह नाम; **तबे**—तब; **से**—वह; **सफल**—सफल।

अनुवाद

"यदि आप अपने दिव्य बल से हमारा उद्धार कर दें, तो निश्चय ही आप 'पतितपावन' के रूप में जाने जायेंगे।

सत्य एक बात कहोँ, शुन, दयामय ।
मो-विनु दयार पात्र जगते ना हय ॥२०१॥

सत्य एक बात कहों, शुन, दयामय ।
मो-विनु दयार पात्र जगते ना हय ॥२०१॥

सत्य—सत्य; **एक**—एक; **बात**—बात; **कहों**—हम कहते हैं; **शुन**—कृपया सुनो; **दया-मय**—हे दयालु भगवान्; **मो-विनु**—हमारे सिवा; **दयार**—दया का; **पात्र**—पात्र; **जगते**—जगत् में; **ना**—नहीं; **हय**—है।

अनुवाद

"हम बिल्कुल सत्य कह रहे हैं। हे दयामय! कृपया इसे सुन लीजिये। तीनों लोकों में हमारे अतिरिक्त कोई दूसरा दया का पात्र नहीं है।

मोरे दया करि' कर स्व-दया सफल ।
अखिल ब्रह्माण्ड देखुक तोमार दया-बल ॥२०२॥

मोरे दया करि' कर स्व-दया सफल ।
अखिल ब्रह्माण्ड देखुक तोमार दया-बल ॥ २०२॥

मोरे—हम पर; **दया**—दया; **करि'**—करके; **कर**—करिये; **स्व-दया**—अपनी दया को; **सफल**—सफल; **अखिल**—सारे; **ब्रह्माण्ड**—ब्रह्माण्ड; **देखुक**—देखने दीजिये; **तोमार**—आपकी; **दया-बल**—दया की शक्ति।

अनुवाद

"हम सर्वाधिक पतित हैं, अतएव हम पर दया करने पर आपकी दया सर्वाधिक सफल होगी। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड को आपकी दया की शक्ति देखने दीजिये!

न मृषा परमार्थमेव मे
शृणु विज्ञापनमेकमग्रतः ।
यदि मे न दयिष्यसे तदा
दयनीयस्तव नाथ दुर्लभः ॥२०३॥

न मृषा परमार्थमेव मे
शृणु विज्ञापनमेकमग्रतः ।
यदि मे न दयिष्यसे तदा
दयनीयस्तव नाथ दुर्लभः ॥ २०३॥

न—नहीं; **मृषा**—झूठ; **परम-अर्थम्**—अर्थपूर्ण; **एव**—निश्चित रूप से; **मे**—मेरी; **शृणु**—कृपया सुनिये; **विज्ञापनम्**—अनुरोध; **एकम्**—एक; **अग्रतः**—पहले; **यदि**—यदि; **मे**—मुझ पर; **न दयिष्यसे**—दया नहीं दिखाई; **तदा**—तो; **दयनीयः**—दया का पात्र; **तव**—आपका; **नाथ**—हे भगवन्; **दुर्लभः**—खोजना दुर्लभ।

अनुवाद

"'हे प्रभु, हमें आपके समक्ष एक बात कहने दें। यह रंचमात्र भी मिथ्या नहीं है अपितु सार्थक है। यह इस प्रकार है—यदि आप हम पर दयालु नहीं होंगे, तो आपकी कृपा के लिए हमसे अधिक योग्य पात्र ढूँढ पाना अत्यधिक कठिन होगा।'

तात्पर्य

यह श्लोक श्री यामुनाचार्य कृत *स्तोत्र-रत्न* (४७) से है।

আপনে অয়োগ্য দেখি' মনে পাঁ ক্ষোভ ।
তথাপি তোমার গুণে উপজয় লোভ ॥২০৪॥

আপনে অযোগ্য দেখি' মনে পাঁ ক্ষোভ ।
তথাপি তোমার গুণে উপজয় লোভ ॥ ২০৪॥

আপনে—হম স্বয়ং; **অযোগ্য**—সর্বাধিক অযোগ্য; **দেখি'**—দেখকर; **মনে**—মন में; **পাঁ**—पाते हैं; **ক্ষোভ**—क्षोभ; **তথাপি**—तथापि; **তোমার**—आपके; **গুণে**—दिव्य गुणों में; **উপজয়**—है; **লোভ**—आकर्षण।

अनुवाद

"आपकी कृपा के लिए उपयुक्त पात्र न होने से हम अत्यधिक क्षुब्ध हैं। फिर भी हमने आपके दिव्य गुणों के विषय में सुन रखा है, अतएव हम आपके प्रति अत्यधिक आकृष्ट हैं।

বামন যৈছে চাঁদ ধরিতে চাহে করে ।
তৈছে এই বাঞ্ছা মোর উঠয়ে অন্তরে ॥২০৫॥

বামন য়ৈছে চাঁদ ধরিতে চাহে করে ।
তৈছে এই বাঞ্ছা মোর উঠয়ে অন্তরে ॥ ২০৫॥

বামন—वामन; **য়ৈছে**—जैसे; **চাঁদ**—चाँद; **ধরিতে**—पकड़ना; **চাহে**—इच्छा; **করে**—करता है; **তৈছে**—उसी प्रकार; **এই**—यह; **বাঞ্ছা**—इच्छा; **মোর**—मेरी; **উঠয়ে**—जगती है; **অন্তরে**—मन में।

अनुवाद

"निस्सन्देह, हम उस वामन के तुल्य हैं, जो चाँद को पकड़ना चाहता है। यद्यपि हम सर्वथा अयोग्य हैं, किन्तु हमारे मनों में आपकी कृपा प्राप्त करने की इच्छा उठ रही है।

ভবন্তমেবানুচরন্নিরন্তরঃ
প্রশান্ত-নিঃশেষ-মনো-রথান্তরঃ ।
কদাহমৈকান্তিক-নিত্য-কিঙ্করঃ
প্রহর্ষয়িষ্যামি সনাথ-জীবিতম্ ॥২০৬॥

भवन्तमेवानुचरन्निरन्तरः
प्रशान्त-निःशेष-मनो-रथान्तरः ।
कदाहमैकान्तिक-नित्य-किङ्करः
प्रहर्षयिष्यामि सनाथ-जीवितम् ॥ २०६ ॥

भवन्तम्—आप; **एव**—निश्चित रूप से; **अनुचरन्**—सेवा करने से; **निरन्तरः**—निरन्तर; **प्रशान्त**—शान्त, सन्तुष्ट; **निःशेष**—सब; **मनः-रथ**—मनोरथ, इच्छाएँ; **अन्तरः**—अन्य; **कदा**—कब; **अहम्**—मैं; **ऐकान्तिक**—अकेले; **नित्य**—नित्य; **किङ्करः**—सेवक; **प्रहर्षयिष्यामि**—मैं प्रसन्न होऊँगा; **स-नाथ**—सनाथ; **जीवितम्**—जीवन पाकर।

अनुवाद

"'आपकी निरन्तर सेवा करने से मनुष्य सारी भौतिक इच्छाओं से मुक्त हो जाता है और पूर्ण शान्ति प्राप्त करता है। वह समय कब आयेगा जब मैं आपका नित्य दास बनूँगा और ऐसा योग्य स्वामी पाकर सदैव प्रसन्नता का अनुभव करूँगा?'"

तात्पर्य

सनातन गोस्वामी को शिक्षा देते समय श्री चैतन्य महाप्रभु ने यह घोषणा की है कि प्रत्येक जीव पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् का सनातन दास है। यही समस्त जीवों की स्वाभाविक स्थिति है। जिस प्रकार एक कुत्ता या नौकर दक्ष मालिक पाकर या एक बालक सक्षम पिता पाकर पूर्ण सन्तुष्ट रहता है, उसी तरह जीव भगवान् की सेवा में पूर्णतया निरत रहकर सन्तुष्ट रहता है। इससे वह जान लेता है कि उसका सक्षम स्वामी उसे सभी प्रकार के संकटों से उबार लेगा। जब तक जीव को भगवान् का निश्चित संरक्षण प्राप्त नहीं हो जाता, तब तक वह चिन्तित रहता है। यह चिन्ता का जीवन ही भौतिक जीवन कहलाता है। पूर्ण तुष्ट एवं चिन्तामुक्त होने के लिए मनुष्य को भगवान् की निरन्तर सेवा करने की स्थिति पर आना होगा। यह श्लोक भी श्री यामुनाचार्य कृत *स्तोत्र-रत्न* (४३) से है।

शुनि' महाप्रभु कहे,—शुन, दबिर-खास ।
तुमि दुई भाई—मोर पुरातन दास ॥२०७॥

शुनि' महाप्रभु कहे,—शुन, दबिर-खास ।
तुमि दुइ भाइ—मोर पुरातन दास ॥ २०७॥

शुनि'—यह सुनकर; **महाप्रभु**—चैतन्य महाप्रभु; **कहे**—कहते हैं; **शुन**—कृपया सुनो; **दबिर खास**—दबिर खास; **तुमि**—तुम; **दुइ भाइ**—दोनों भाई; **मोर**—मेरे; **पुरातन**—पुराने; **दास**—सेवक।

अनुवाद

दबिर खास तथा साकर मल्लिक की प्रार्थना सुनने के बाद श्री चैतन्य महाप्रभु ने कहा, "हे दबिर खास, तुम दोनों भाई मेरे पुराने सेवक हो।

आजि हैते दुँहार नाम 'रूप' 'सनातन' ।
दैन्य छाड़, तोमार दैन्ये फाटे मोर मन ॥२०८॥

आजि हैते दुँहार नाम 'रूप' 'सनातन' ।
दैन्य छाड़, तोमार दैन्ये फाटे मोर मन ॥ २०८॥

आजि हैते—आज से; **दुँहार**—तुम दोनों के; **नाम**—नाम; **रूप**—श्री रूप; **सनातन**—श्री सनातन; **दैन्य छाड़**—अपनी दीनता छोड़ दो; **तोमार**—तुम्हारी; **दैन्ये**—दीनता; **फाटे**—फाड़ रही है; **मोर**—मेरा; **मन**—हृदय।

अनुवाद

"हे साकर मल्लिक, आज से तुम्हारे नाम श्रील रूप तथा श्रील सनातन होंगे। अब अपनी दीनता को त्यागो, क्योंकि तुम्हारी दीनता देखकर मेरा हृदय फटा जा रहा है।

तात्पर्य

वास्तव में यह श्री चैतन्य महाप्रभु द्वारा दबिर खास तथा साकर मल्लिक की दीक्षा है। वे भगवान् के पास अत्यन्त दीन बनकर आये और महाप्रभु ने उन्हें नित्य दासों की तरह स्वीकार कर लिया। उन्होंने उनके नाम भी बदल दिये। इससे यह समझना चाहिए कि दीक्षा के बाद शिष्य को अपना नाम बदलना आवश्यक होता है।

शङ्खचक्राद्यूर्ध्वपुण्ड्रधारणाद्यात्मलक्षणम् ।
तन्नामकरणं चैव वैष्णवत्वमिहोच्यते॥

"दीक्षा के बाद शिष्य का नाम बदल दिया जाना चाहिए, जिससे यह सूचित हो कि वह भगवान् विष्णु का दास है। शिष्य को तुरन्त ही अपने शरीर पर, विशेषतया मस्तक पर तिलक (*ऊर्ध्वपुण्ड्र*) भी लगाना चाहिए। ये दिव्य चिह्न शुद्ध वैष्णव के लक्षण हैं।" यह श्लोक *पद्मपुराण* के उत्तर खण्ड से है। सहजिया सम्प्रदाय का सदस्य अपना नाम नहीं बदलता, अतएव उसे गौड़ीय वैष्णव के रूप में स्वीकार नहीं किया जा सकता। यदि कोई व्यक्ति दीक्षा के बाद अपना नाम नहीं बदलता, तो समझना चाहिए कि वह अपनी देहात्मबुद्धि में ही बना रहेगा।

दैन्य-पत्री लिखि' मोरे पाठाले बार बार ।
सेई पत्री-द्वारा जानि तोमार व्यवहार ॥२०९॥

दैन्य-पत्री लिखि' मोरे पाठाले बार बार ।
सेइ पत्री-द्वारा जानि तोमार व्यवहार ॥ २०९ ॥

दैन्य-पत्री—दैन्य पूर्ण पत्र; **लिखि'**—लिखकर; **मोरे**—मुझे; **पाठाले**—तुमने भेजा; **बार बार**—बारम्बार; **सेइ**—उन; **पत्री-द्वारा**—पत्रों के द्वारा; **जानि**—मैं समझ सकता हूँ; **तोमार**—तुम्हारा; **व्यवहार**—व्यवहार।

अनुवाद

"तुमने मेरे पास अपनी दीनता जताने वाले अनेक पत्र लिखे, जिनसे तुम्हारी दीनता परिलक्षित होती है। मैं उन पत्रों से तुम्हारे व्यवहार को समझ सकता हूँ।

तोमार हृदय आमि जानि पत्री-द्वारे ।
तोमा शिखाइते श्लोक पाठाइल तोमारे ॥२१०॥

तोमार हृदय आमि जानि पत्री-द्वारे ।
तोमा शिखाइते श्लोक पाठाइल तोमारे ॥ २१० ॥

तोमार—तुम्हारे; **हृदय**—हृदय; **आमि**—मैं; **जानि**—समझता हूँ; **पत्री-द्वारे**—उन पत्रों के द्वारा; **तोमा**—तुम्हें; **शिखाइते**—सिखाने के लिए; **श्लोक**—एक श्लोक; **पाठाइल**—मैंने भेजा; **तोमारे**—तुमको।

अनुवाद

"मैं तुम्हारे पत्रों से ही तुम्हारे हृदय को जान गया था। इसलिए तुम्हें शिक्षा देने के लिए मैंने तुम्हारे पास एक श्लोक लिख भेजा था, जो इस प्रकार है।

पर-व्यसनिनी नारी व्यग्रापि गृह-कर्मसु ।
तदेवास्वादयत्यन्तर्नव-सङ्ग-रसायनम् ॥२११॥

पर-व्यसनिनी नारी व्यग्रापि गृह-कर्मसु ।
तदेवास्वादयत्यन्तर्नव-सङ्ग-रसायनम् ॥ २११ ॥

पर-व्यसनिनी—पर पुरुष से आसक्त; **नारी**—एक स्त्री; **व्यग्रा अपि**—व्यग्र होने पर भी; **गृह-कर्मसु**—घर के कामों में; **तत् एव**—मात्र वह; **आस्वादयति**—चखती है; **अन्तः**—अपने अन्दर; **नव-सङ्ग**—नई संगति का; **रस-अयनम्**—रस।

अनुवाद

"'यदि कोई स्त्री अपने पति को छोड़कर किसी अन्य पुरुष में आसक्त रहती है, तो वह अपने घरेलू कामों में अत्यधिक व्यस्त दिखेगी, किन्तु अपने अन्तर में वह अपने प्रेमी के सान्निध्य की अनुभूति का सदैव आस्वादन करती रहती है।'

गौड़-निकट आसिते नाहि मोर प्रयोजन ।
तोमा-दुँहा देखिते मोर इहाँ आगमन ॥२१२॥

गौड़-निकट आसिते नाहि मोर प्रयोजन ।
तोमा-दुँहा देखिते मोर इहाँ आगमन ॥ २१२ ॥

गौड़-निकट—बंगाल को; **आसिते**—आने के लिए; **नाहि**—नहीं था; **मोर**—मेरा; **प्रयोजन**—प्रयोजन; **तोमा**—तुम; **दुँहा**—दोनों को; **देखिते**—देखने के लिए; **मोर**—मेरा; **इहाँ**—यहाँ; **आगमन**—आगमन।

अनुवाद

"वास्तव में बंगाल आने में मेरा कोई प्रयोजन नहीं था, किन्तु मैं तुम दोनों भाइयों को मिलने के लिए ही आया हूँ।

এই মোর মনের কথা কেহ নাহি জানে ।
সবে বলে, কেনে আইলা রামকেলি-গ্রামে ॥২১৩॥

এइ মোর মনের কথা কেহ নাহি জানে ।
সবে বলে, কেনে আইলা রামকেলি-গ্রামে ॥ ২১৩॥

এइ—यह; **मोर**—मेरे; **मनेर**—मन की; **कथा**—इच्छा; **केह**—कोई भी; **नाहि**—नहीं; **जाने**—जानता है; **सबे**—प्रत्येक व्यक्ति; **बले**—कहता है; **केने**—क्यों; **आइला**—आप आये; **रामकेलि-ग्रामे**—इस रामकेलि गाँव में।

अनुवाद

"हर कोई पूछ रहा है कि मैं इस रामकेलि गाँव में क्यों आया हूँ। कोई भी मेरे प्रयोजन को नहीं जानता।

ভাল হৈল, দুই ভাই আইলা মোর স্থানে ।
ঘরে যাহ, ভয় কিছু না করিহ মনে ॥২১৪॥

ভাল হৈল, দুइ ভাই আইলা মোর স্থানে ।
ঘরে যাহ, ভয় কিছু না করিহ মনে ॥ ২১৪॥

भाल हैल—बहुत अच्छा हुआ; **दुइ भाइ**—तुम दोनों भाई; **आइला**—आये; **मोर**—मेरे; **स्थाने**—स्थान पर; **घरे**—घर; **याह**—जाओ; **भय**—भय; **किछु**—कुछ भी; **ना**—नहीं; **करिह**—करो; **मने**—मन में।

अनुवाद

"यह अच्छा हुआ कि तुम दोनों भाई मुझे मिलने आये। अब तुम घर जा सकते हो। अब किसी बात का डर न रखो।

জন্মে জন্মে তুমি দুই—কিঙ্কর আমার ।
অচিরাতে কৃষ্ণ তোমায় করিবে উদ্ধার ॥২১৫॥

জন্মে জন্মে তুমি দুइ—কিঙ্কর আমার ।
অচিরাতে কৃষ্ণ তোমায় করিবে উদ্ধার ॥ ২১৫॥

जन्मे जन्मे—जन्म-जन्मान्तर; **तुमि**—तुम; **दुइ**—दोनों; **किङ्कर**—सेवक; **आमार**—मेरे; **अचिराते**—अति शीघ्र; **कृष्ण**—भगवान् कृष्ण; **तोमाय**—तुम दोनों का; **करिबे**—करेंगे; **उद्धार**—उद्धार।

अनुवाद

"तुम दोनों जन्म-जन्मांतर मेरे सनातन दास रहे हो। मुझे विश्वास है कि कृष्ण शीघ्र ही तुम्हारा उद्धार करेंगे।"

এত বলি দুঁহার শিরে ধরিল দুই হাতে ।
দুই ভাই প্রভু-পদ নিল নিজ মাথে ॥২১৬॥

এত বলি দুঁহার শিরে ধরিল দুই হাতে ।
দুই ভাই প্রভু-পদ নিল নিজ মাথে ॥ ২১৬ ॥

एत बलि—यह कहकर; **दुँहार शिरे**—उन दोनों के सिर पर; **धरिल**—रखे; **दुइ**—दोनों; **हाते**—हाथ; **दुइ भाइ**—दोनों भाई; **प्रभु-पद**—महाप्रभु के चरणकमल; **निल**—ले लिए; **निज माथे**—अपने मस्तक पर।

अनुवाद

तब महाप्रभु ने उन दोनों के सिरों पर अपने दोनों हाथ रख दिये और उन दोनों ने तुरन्त ही अपने-अपने मस्तक पर महाप्रभु के चरणकमलों को रख लिया।

দোঁহা আলিঙ্গিয়া প্রভু বলিল ভক্ত-গণে ।
সবে কৃপা করি' উদ্ধারহ দুই জনে ॥২১৭॥

দোঁহা আলিঙ্গিয়া প্রভু বলিল ভক্ত-গণে ।
সবে কৃপা করি' উদ্ধারহ দুই জনে ॥ ২১৭ ॥

दोंहा—उन दोनों को; **आलिङ्गिया**—आलिंगन करके; **प्रभु**—महाप्रभु; **बलिल**—बोले; **भक्त-गणे**—भक्तों को; **सबे**—आप सब; **कृपा**—कृपा; **करि'**—करके; **उद्धारह**—उद्धार करो; **दुइ**—दोनों; **जने**—व्यक्तियों का।

अनुवाद

इसके बाद महाप्रभु ने उन दोनों को अपने आलिंगन में ले लिया और वहाँ पर उपस्थित सारे भक्तों से अनुरोध किया कि वे उन पर दयालु हों और उनका उद्धार करें।

दुइ जने प्रभुर कृपा देखि' भक्त-गणे ।
'हरि' 'हरि' बले सबे आनन्दित-मने ॥२१८॥

दुइ जने प्रभुर कृपा देखि' भक्त-गणे ।
'हरि' 'हरि' बले सबे आनन्दित-मने ॥ २१८ ॥

दुइ जने—दोनों व्यक्तियों पर; **प्रभुर**—महाप्रभु की; **कृपा**—कृपा; **देखि'**—देखकर; **भक्त-गणे**—सभी भक्त; **हरि हरि**—भगवान् का पावन नाम "हरि हरि"; **बले**—बोलने लगे; **सबे**—सभी; **आनन्दित**—आनन्दित होकर; **मने**—मन में।

अनुवाद

जब समस्त भक्तों ने दोनों भाइयों पर महाप्रभु की कृपा देखी, तो वे अत्यन्त पुलकित हुए और "हरि! हरि!" कहकर भगवन्नाम का कीर्तन करने लगे।

तात्पर्य

श्रील नरोत्तमदास ठाकुर कहते हैं—*छाड़िया वैष्णव सेवा निस्तार पेयेछे केबा*—वैष्णव की सेवा किये बिना किसी का उद्धार सम्भव नहीं है। गुरु शिष्य का उद्धार करने के लिए उसे दीक्षा देता है और यदि शिष्य गुरु की आज्ञा का पालन करता है तथा अन्य वैष्णवों के प्रति अपराध नहीं करता, तो उसका मार्ग निष्कंटक हो जाता है। फलस्वरूप श्री चैतन्य महाप्रभु ने वहाँ पर उपस्थित सारे वैष्णवों से आग्रह किया कि वे रूप तथा सनातन दोनों भाइयों पर कृपा करें, जिन्हें महाप्रभु ने उसी समय दीक्षा दी थी। जब कोई वैष्णव देखता है कि दूसरे वैष्णव को भगवान् की कृपा प्राप्त हो रही है, तो वह अत्यधिक प्रसन्न होता है। वैष्णव ईर्ष्या नहीं करते। यदि भगवान् किसी वैष्णव को संसार-भर में भगवन्नाम वितरित करने की शक्ति प्रदान करते हैं, तो अन्य वैष्णव, यदि वे सच्चे वैष्णव हैं, अत्यधिक हर्षित होते हैं। जो व्यक्ति किसी वैष्णव की सफलता पर ईर्ष्या करता है, वह निश्चित रूप से वैष्णव नहीं है, अपितु सामान्य संसारी व्यक्ति है। ईर्ष्या और द्वेष संसारी लोगों में पाये जाते हैं, वैष्णवों में नहीं। भला कोई वैष्णव दूसरे वैष्णव से, जो भगवन्नाम को प्रसारित करने में सफल हुआ हो, ईर्ष्या क्यों करेगा? एक सच्चा वैष्णव उस दूसरे वैष्णव को स्वीकार करके

अत्यन्त प्रसन्न रहता है, जो भगवान् की कृपा प्रदान करता है। वैष्णव-वेश में संसारी व्यक्ति का सम्मान नहीं करना चाहिए, अपितु उसकी उपेक्षा करनी चाहिए। ऐसा शास्त्रों का आदेश है। *उपेक्षा* का अर्थ है "परवाह न करना।" ईर्ष्यालु व्यक्ति की उपेक्षा करनी चाहिए। प्रचारक का कर्तव्य है कि वह पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् से प्रेम करे, वैष्णवों से मैत्री स्थापित करे, अबोध पर कृपा करे और जो ईर्ष्यालु या द्वेषी हैं, उनकी उपेक्षा या बहिष्कार करे। इस कृष्णभावनामृत आन्दोलन में वैष्णवों के वेश में कई ईर्ष्यालु व्यक्ति हैं और इनकी पूरी तरह उपेक्षा की जानी चाहिए। ऐसे ईर्ष्यालु व्यक्ति की सेवा करने की आवश्यकता नहीं है, जो वैष्णव का वेश बनाये हो। जब नरोत्तमदास ठाकुर कहते हैं—*छाड़िया वैष्णव सेवा निस्तार पेयेछे केबा*—तो वे सच्चे वैष्णव की ओर इंगित करते हैं, वैष्णव वेशधारी ईर्ष्यालु व्यक्ति की ओर नहीं।

नित्यानन्द, हरिदास, श्रीवास, गदाधर ।
मुकुन्द, जगदानन्द, मुरारि, वक्रेश्वर ॥२१९॥

नित्यानन्द, हरिदास, श्रीवास, गदाधर ।
मुकुन्द, जगदानन्द, मुरारि, वक्रेश्वर ॥ २१९ ॥

नित्यानन्द—नित्यानन्द प्रभु; **हरिदास**—हरिदास ठाकुर; **श्रीवास**—श्रीवास ठाकुर; **गदाधर**—गदाधर पण्डित; **मुकुन्द**—मुकुन्द; **जगदानन्द**—जगदानन्द; **मुरारि**—मुरारि; **वक्रेश्वर**—वक्रेश्वर।

अनुवाद

महाप्रभु के सभी वैष्णव पार्षद वहाँ उपस्थित थे, जिनमें नित्यानन्द प्रभु, हरिदास ठाकुर, श्रीवास ठाकुर, गदाधर पण्डित, मुकुन्द, जगदानन्द पण्डित, मुरारि तथा वक्रेश्वर सम्मिलित थे।

सबार चरणे धरि, पड़े दुई भाई ।
सबे बले,—धन्य तुमि, पाइले गोसाञि ॥२२०॥

सबार चरणे धरि, पड़े दुइ भाइ ।
सबे बले,—धन्य तुमि, पाइले गोसाञि ॥ २२० ॥

सबार—उन सबके; **चरणे**—चरणकमल; **धरि**—छूकर; **पड़े**—गिर पड़े; **दुइ भाइ**—दोनों भाई; **सबे बले**—सभी वैष्णव कहने लगे; **धन्य तुमि**—आप धन्य हो; **पाइले गोसाञि**—आपने चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों का आश्रय पाया है।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु के आदेशानुसार रूप तथा सनातन दोनों भाइयों ने तुरन्त ही इन वैष्णवों के चरणकमलों का स्पर्श किया। वे सभी अत्यन्त प्रसन्न हुए और उन्होंने दोनों भाइयों को महाप्रभु की कृपा प्राप्त होने पर बधाई दी।

तात्पर्य

यह व्यवहार सच्चे वैष्णवों का सूचक है। जब उन्होंने देखा कि रूप तथा सनातन को भगवान् की कृपा प्राप्त करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है, तो वे सब इतने प्रसन्न हुए कि उन्होंने दोनों भाइयों को बधाई दी। वैष्णव के वेश में ईर्ष्यालु व्यक्ति अन्य वैष्णव को प्रभु की कृपा प्राप्त करने में सफल होने पर तनिक भी प्रसन्न नहीं होता। दुर्भाग्यवश इस कलियुग में वैष्णव-वेश में ऐसे संसारी व्यक्तियों की कमी नहीं है और श्रील भक्तिविनोद ठाकुर ने ऐसे व्यक्तियों को कलि का शिष्य कहा है। वे इन्हें *कलि-चेला* कहते हैं। वे सूचित करते हैं कि एक झूठा वैष्णव होता है, जो अपनी नाक पर तिलक लगाता है और गले में कण्ठी पहनता है। ऐसा झूठा वैष्णव धन तथा स्त्रियों की संगति करता है और सफल वैष्णवों से ईर्ष्या करता है। उसका एकमात्र धंधा होता है वैष्णव-वेश में धन कमाना। इसलिए भक्तिविनोद ठाकुर कहते हैं कि ऐसा छद्म वैष्णव बिल्कुल वैष्णव नहीं होता, अपितु *कलि-चेला* होता है। कलि का शिष्य (कलि-चेला) किसी उच्च न्यायालय के निर्णय से आचार्य नहीं बन सकता। किसी वैष्णव आचार्य को चुनने के लिए भौतिक व्यक्तियों के मत का कोई महत्त्व नहीं होता। वैष्णव आचार्य स्वयं तेजस्वी होता है, उसे किसी उच्च न्यायालय के निर्णय की आवश्यकता नहीं पड़ती। बनावटी आचार्य भले ही उच्च न्यायालय के निर्णय द्वारा किसी वैष्णव को परास्त करने का प्रयत्न करे, किन्तु भक्तिविनोद ठाकुर का कहना है कि वह मात्र कलि-चेला है।

সবা-পাশ আজ্ঞা মাগি' চলন-সময় ।
প্রভু-পদে কহে কিছু করিয়া বিনয় ॥২২১॥

सबा-पाश आज्ञा मागि' चलन-समय ।
प्रभु-पदे कहे किछु करिया विनय ॥ २२१ ॥

सबा—वे सब; **पाश**—से; **आज्ञा**—आज्ञा; **मागि'**—लेकर; **चलन-समय**—चलते समय; **प्रभु-पदे**—महाप्रभु के चरणकमलों में; **कहे**—कहा; **किछु**—कुछ; **करिया**—करके; **विनय**—विनय।

अनुवाद

वहाँ पर उपस्थित सारे वैष्णवों से आज्ञा लेकर दोनों भाइयों ने विदा लेते समय महाप्रभु के चरणकमलों पर कुछ निवेदन किया।

ইহাঁ হৈতে চল, প্রভু, ইহাঁ নাহি কাজ ।
যদ্যপি তোমারে ভক্তি করে গৌড়-রাজ ॥২২২॥

इहाँ हैते चल, प्रभु, इहाँ नाहि काज ।
यद्यपि तोमारे भक्ति करे गौड़-राज ॥ २२२ ॥

इहाँ हैते—इस स्थान से; **चल**—कृपया चलो; **प्रभु**—प्रिय प्रभु; **इहाँ**—इस स्थान में; **नाहि काज**—और कोई काम नहीं है; **यद्यपि**—यद्यपि; **तोमारे**—आपका; **भक्ति**—आदर; **करे**—करता है; **गौड़-राज**—बंगाल का राजा।

अनुवाद

उन्होंने कहा, "हे प्रभु, यद्यपि बंगाल का राजा नवाब हुसैन शाह आपका अत्यन्त सम्मान करता है, किन्तु अब आपका यहाँ कोई अन्य काम नहीं है। अतएव कृपया आप इस स्थान से प्रस्थान करें।

তথাপি যবন জাতি, না করি প্রতীতি ।
তীর্থ-যাত্রায় এত সঙ্ঘট্ট ভাল নহে রীতি ॥২২৩॥

तथापि यवन जाति, ना करि प्रतीति ।
तीर्थ-यात्राय एत संघट्ट भाल नहे रीति ॥ २२३ ॥

तथापि—तथापि; **यवन जाति**—मुस्लिम जात; **ना**—नहीं; **करि**—करता; **प्रतीति**—

विश्वास; **तीर्थ-यात्राय**—तीर्थयात्रा पर जाने पर; **एत**—इतनी; **संघट्ट**—भीड़, लोगों का समूह; **भाल**—अच्छा; **नहे**—नहीं; **रीति**—रीति।

अनुवाद

"यद्यपि राजा आपके प्रति आदर-भाव रखता है, तो भी वह यवन जाति का है और उस पर विश्वास नहीं किया जा सकता। हमारे विचार से वृन्दावन की तीर्थयात्रा के लिए अपने साथ इतनी बड़ी भीड़ ले जाने की कोई आवश्यकता नहीं है।

यार सङ्गे चले एई लोक लक्ष-कोटि ।
वृन्दावन-यात्रार ए नहे परिपाटी ॥ २२४॥

य्यार सङ्गे चले एइ लोक लक्ष-कोटि ।
वृन्दावन-य्यात्रार ए नहे परिपाटी ॥ २२४॥

य्यार—जिसके; **सङ्गे**—संग में; **चले**—पीछे चलते हैं; **एइ**—ये; **लोक**—लोग; **लक्ष-कोटि**—लाखों-करोड़ों; **वृन्दावन-य्यात्रार**—वृन्दावन यात्रा की; **ए**—यह; **नहे**—नहीं; **परिपाटी**—रीति।

अनुवाद

"हे प्रभु, आप अपने साथ लाखों लोगों को लेकर वृन्दावन जा रहे हैं, किन्तु तीर्थयात्रा करने की यह उपयुक्त विधि नहीं है।"

तात्पर्य

कभी-कभी व्यापारिक दृष्टि से बहुत से लोगों की टोली विभिन्न तीर्थस्थलों को ले जाई जाती है और उनसे धन एकत्र किया जाता है। यह बहुत ही लाभप्रद व्यापार हैं, किन्तु रूप तथा सनातन गोस्वामियों ने श्री चैतन्य महाप्रभु की उपस्थिति में यह मत व्यक्त किया कि भीड़ के साथ तीर्थयात्रा ठीक नहीं होती। वास्तव में जब श्री चैतन्य महाप्रभु वृन्दावन गये, तो वे अकेले ही थे और अपने भक्तों के अनुरोध पर ही उन्होंने एक सेवक स्वीकार किया था। वे कभी-भी व्यापारिक उद्देश्य से भीड़ लेकर वृन्दावन नहीं गये।

यद्यपि वस्तुतः प्रभुर किछु नाहि भय ।
तथापि लौकिक-लीला, लोक-चेष्टा-मय ॥ २२५॥

यद्यपि वस्तुतः प्रभुर किछु नाहि भय ।
तथापि लौकिक-लीला, लोक-चेष्टा-मय ॥ २२५ ॥

यद्यपि—यद्यपि; **वस्तुतः**—वास्तव में; **प्रभुर**—महाप्रभु को; **किछु**—कोई; **नाहि**—नहीं है; **भय**—भय; **तथापि**—तथापि; **लौकिक-लीला**—लौकिक लीलाएँ; **लोक-चेष्टा-मय**—लोकप्रिय व्यवहार से युक्त।

अनुवाद

यद्यपि श्री चैतन्य महाप्रभु स्वयं श्रीकृष्ण भगवान् थे और तनिक भी भयभीत नहीं थे, तथापि उन्होंने अपने नये भक्तों को शिक्षा देने के लिए एक मनुष्य की भाँति आचरण किया।

এত বলি' চরণ বন্দি' গেলা দুই-জন ।
প্রভুর সেই গ্রাম হৈতে চলিতে হৈল মন ॥২২৬॥

एत बलि' चरण वन्दि' गेला दुइ-जन ।
प्रभुर सेइ ग्राम हैते चलिते हैल मन ॥ २२६ ॥

एत बलि'—यह कहकर; **चरण वन्दि'**—चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में शीश झुकाकर; **गेला**—लौट गये; **दुइ-जन**—दोनों भाई; **प्रभुर**—श्री चैतन्य महाप्रभु के; **सेइ**—उस; **ग्राम**—ग्राम; **हैते**—से; **चलिते**—जाने को; **हैल**—हो गया; **मन**—मन।

अनुवाद

यह कहकर दोनों भाइयों ने महाप्रभु के चरणकमलों की वन्दना की और अपने घर लौट आये। तत्पश्चात् महाप्रभु ने उस गाँव को छोड़ने का विचार किया।

প্রাতে চলি' আইলা প্রভু 'কানাইর নাটশালা' ।
দেখিল সকল তাহাঁ কৃষ্ণ-চরিত্র-লীলা ॥২২৭॥

प्राते चलि' आइला प्रभु 'कानाइर नाटशाला' ।
देखिल सकल ताहाँ कृष्ण-चरित्र-लीला ॥ २२७ ॥

प्राते—प्रातः काल; **चलि'**—चलकर; **आइला**—आये; **प्रभु**—महाप्रभु; **कानाइर नाटशाला**—कानाई नाटशाला स्थान पर; **देखिल**—देखा; **सकल**—सब; **ताहाँ**—वहाँ; **कृष्ण-चरित्र-लीला**—कृष्ण लीलाएँ।

अनुवाद

प्रातःकाल महाप्रभु वहाँ से चल पड़े और कानाइ नाटशाला नामक स्थान गये। वहाँ उन्होंने भगवान् कृष्ण की अनेक लीलाएँ देखीं।

तात्पर्य

उन दिनों बंगाल में कई स्थान कानाइ नाटशाला नाम से विख्यात थे, जहाँ कृष्ण-लीलाओं के चित्र रखे रहते थे। लोग वहाँ जाकर उन्हें देखते थे। इसे *कृष्ण-चरित्र-लीला* कहा जाता है। बंगाल में आज भी अनेक स्थान हैं, जिन्हें *हरिसभा* कहते हैं और जिससे सूचित होता है कि इस स्थान पर वहाँ के लोग एकत्र होकर हरे कृष्ण महामंत्र का कीर्तन करते हैं और भगवान् कृष्ण की लीलाओं पर विचार-विमर्श करते हैं। *कानाइ* शब्द का अर्थ है "भगवान् कृष्ण का" और *नाटशाला* का अर्थ है लीलाओं का प्रदर्शन स्थल। सम्भवतः वे स्थान जो आजकल *हरिसभा* नाम से जाने जाने हैं, पहले *कानाइ नाटशाला* के नाम से जाने जाते हों।

सेइ रात्रे प्रभु ताँहा चिन्ते मने मन ।
सङ्गे सङ्घट्ट भाल नहे, कैल सनातन ॥ २२८ ॥

सेइ रात्रे प्रभु ताहाँ चिन्ते मने मन ।
सङ्गे संघट्ट भाल नहे, कैल सनातन ॥ २२८ ॥

सेइ रात्रे—उसी रात; **प्रभु**—महाप्रभु; **ताहाँ**—वहाँ; **चिन्ते**—सोचते हैं; **मने**—अपने मन में; **मन**—मन; **सङ्गे**—उनके साथ; **संघट्ट**—लोगों की भीड़; **भाल नहे**—अच्छा नहीं; **कैल सनातन**—सनातन ने ऐसा कहा है।

अनुवाद

उस रात महाप्रभु ने सनातन गोस्वामी के इस प्रस्ताव पर विचार किया कि उन्हें इतने लोगों को साथ लेकर वृन्दावन नहीं जाना चाहिए।

मथुरा याइब आमि एत लोक सङ्गे ।
किछु सुख ना पाइब, हबे रस-भङ्गे ॥ २२९ ॥

मथुरा ग्याइब आमि एत लोक सङ्गे ।
किछु सुख ना पाइब, हबे रस-भङ्गे ॥ २२९ ॥

मथुरा—मथुरा नामक पवित्र स्थान; **याइब**—जाऊँगा; **आमि**—मैं; **एत**—इतने; **लोक**—लोगों; **सङ्गे**—के साथ; **किछु**—कोई; **सुख**—सुख; **ना**—नहीं; **पाइब**—पाऊँगा; **हबे**—वहाँ होगा; **रस-भङ्गे**—वातावरण में अशान्ति।

अनुवाद

महाप्रभु ने सोचा, "यदि मैं इतनी बड़ी भीड़ के साथ मथुरा जाऊँगा, तो बहुत अच्छा नहीं होगा; क्योंकि इससे वातावरण अशान्त हो जायेगा।"

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु इसकी पुष्टि करते हैं कि बहुत सारे लोगों के साथ वृन्दावन जैसे पवित्र स्थान की यात्रा करने से केवल अशान्ति होगी। इस तरह ऐसे पवित्र स्थानों में जाने से उन्हें इच्छित सुख प्राप्त नहीं हो सकेगा।

एकाकी याइब, किम्वा सङ्गे एक जन ।
तबे से शोभये वृन्दावनेरे गमन ॥२३०॥

एकाकी याइब, किम्वा सङ्गे एक जन ।
तबे से शोभये वृन्दावनेरे गमन ॥ २३० ॥

एकाकी—अकेले; **याइब**—मैं जाऊँगा; **किम्वा**—अथवा; **सङ्गे**—के साथ; **एक**—एक; **जन**—व्यक्ति; **तबे**—तभी; **से**—वह; **शोभये**—अच्छा लगेगा; **वृन्दावनेरे**—वृन्दावन को; **गमन**—जाना।

अनुवाद

महाप्रभु इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि वे अकेले ही या अधिक से अधिक एक व्यक्ति के साथ वृन्दावन जायेंगे। इस तरह से वृन्दावन जाना अत्यन्त सुखद होगा।

एत चिन्ति प्रातः-काले गङ्गा-स्नान करि' ।
'नीलाचले याब' बलि' चलिला गौरहरि ॥२३१॥

एत चिन्ति प्रातः-काले गङ्गा-स्नान करि' ।
'नीलाचले याब' बलि' चलिला गौरहरि ॥ २३१ ॥

एत चिन्ति—यह विचारकर; **प्रातः-काले**—प्रातःकाल; **गङ्गा-स्नान**—गंगा स्नान; **करि'**—करके; **नीलाचले याब**—मैं नीलाचल (जगन्नाथ पुरी) जाऊंगा; **बलि'**—कहकर; **चलिला**—चल पड़े; **गौरहरि**—श्री चैतन्य महाप्रभु।

अनुवाद

इस प्रकार सोचकर महाप्रभु ने प्रातःकाल गंगा नदी में स्नान किया और यह कहकर चल पड़े कि, "मैं नीलाचल जाऊँगा।"

এই মত চলি' চলি' আইলা শান্তিপুরে ।
দিন পাঁচ-সাত রহিলা আচার্যের ঘরে ॥২৩২॥

এइ মত চলি' চলি' আইলা শান্তিপুরে ।
দিন পাঁচ-সাত রহিলা আচার্য্যের ঘরে ॥ ২৩২॥

এइ মত—इस प्रकार; **চলি' চলি'**—चलते चलते; **আইলা**—आ गये; **শান্তিপুরে**—शान्तिपुर; **দিন পাঁচ-সাত**—पाँच सात दिन; **রহিলা**—रहे; **আচার্য্যের ঘরে**—अद्वैत आचार्य के घर में।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु चलते-चलते शान्तिपुर पहुँचे और अद्वैत आचार्य के घर में पाँच-सात दिन रहे।

শচী-দেবী আনি' তাঁরে কৈল নমস্কার ।
সাত দিন তাঁর ঠাঞি ভিক্ষা-ব্যবহার ॥২৩৩॥

শচী-দেবী আনি' তাঁরে কৈল নমস্কার ।
সাত দিন তাঁর ঠাঞি ভিক্ষা-ব্যবহার ॥ ২৩৩॥

শচী-দেবী—माता शचीदेवी; **আনি'**—उन्हें बुलाकर; **তাঁরে**—चैतन्य महाप्रभु को; **কৈল**—किया; **নমস্কার**—नमस्कार; **সাত দিন**—सात दिन; **তাঁর ঠাঞি**—शचीदेवी से; **ভিক্ষা-ব্যবহার**—भोजन स्वीकार किया।

अनुवाद

इस अवसर का लाभ उठाकर श्री अद्वैत आचार्य प्रभु ने माता शचीदेवी को बुला लिया और वे उनके घर में महाप्रभु का भोजन बनाने के लिए सात दिन तक रहीं।

তাঁর আজ্ঞা লঞা পুনঃ করিলা গমনে ।
বিনয় করিয়া বিদায় দিল ভক্ত-গণে ॥২৩৪॥

ताँर आज्ञा लञा पुनः करिला गमने ।
विनय करिया विदाय दिल भक्त-गणे ॥ २३४॥

ताँर आज्ञा लञा—माता शचीदेवी की आज्ञा पाकर; **पुनः**—पुनः; **करिला**—किया; **गमने**—गमन; **विनय करिया**—विनयपूर्वक निवेदन करके; **विदाय**—विदाई; **दिल**—दी; **भक्त-गणे**—सभी भक्तों को।

अनुवाद

अपनी माता से आज्ञा लेकर श्री चैतन्य महाप्रभु जगन्नाथ पुरी के लिए चल पड़े। जब भक्तगण उनके साथ चलने लगे, तो महाप्रभु ने उनसे विनती की कि वे वहीं रहें और तब उन्होंने सबसे विदा ली।

জনা দুই সঙ্গে আমি যাব নীলাচলে ।
আমারে মিলিবা আসি' রথ-যাত্রা-কালে ॥২৩৫॥

जना दुइ सङ्गे आमि ग्राब नीलाचले ।
आमारे मिलिबा आसि' रथ-ग्रात्रा-काले ॥ २३५॥

जना—लोगों के; **दुइ**—दो; **सङ्गे**—साथ; **आमि**—मैं; **ग्राब**—जाऊँगा; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी को; **आमारे**—मुझे; **मिलिबा**—मिलोगे; **आसि'**—वहाँ आकर; **रथ-ग्रात्रा-काले**—रथयात्रा के समय।

अनुवाद

यद्यपि श्री चैतन्य महाप्रभु ने सारे भक्तों से लौट जाने के लिए कहा, किन्तु उनमें से दो लोगों को उन्होंने अपने साथ आने दिया। उन्होंने सारे भक्तों से प्रार्थना की कि वे रथयात्रा के अवसर पर जगन्नाथ पुरी आकर उनसे भेंट करें।

বলভদ্র ভট্টাচার্য, আর পণ্ডিত দামোদর ।
দুই-জন-সঙ্গে প্রভু আইলা নীলাচল ॥২৩৬॥

बलभद्र भट्टाचार्य, आर पण्डित दामोदर ।
दुइ-जन-सङ्गे प्रभु आइला नीलाचल ॥ २३६॥

बलभद्र भट्टाचार्य—बलभद्र भट्टाचार्य; **आर**—और; **पण्डित दामोदर**—दामोदर पण्डित;

दुइ-जन—दो व्यक्ति; **सङ्गे**—के साथ; **प्रभु**—महाप्रभु; **आइला**—लौट गये; **नीलाचल**—जगन्नाथ पुरी को।

अनुवाद

दो भक्त जो श्री चैतन्य महाप्रभु के साथ जगन्नाथ पुरी (नीलाचल) जा रहे थे, वे थे बलभद्र भट्टाचार्य तथा दामोदर पण्डित।

দিন কত তাহাঁ রহি' চলিলা বৃন্দাবন ।
লুকাঞা চলিলা রাত্রে, না জানে কোন জন ॥২৩৭॥

दिन कत ताहाँ रहि' चलिला वृन्दावन ।
लुकाञा चलिला रात्रे, ना जाने कोन जन ॥ २३७॥

दिन कत—कुछ दिन; **ताहाँ**—जगन्नाथ पुरी में; **रहि'**—रहकर; **चलिला**—चल पड़े; **वृन्दावन**—वृन्दावन को; **लुकाञा**—चुपके से; **चलिला**—रवाना हो गये; **रात्रे**—रात को; **ना जाने**—नहीं जानते थे; **कोन**—कुछ; **जन**—लोग।

अनुवाद

जगन्नाथ पुरी में कुछ दिन रहकर महाप्रभु रात में चुपके से वृन्दावन के लिए चल पड़े। उन्होंने यह कार्य किसी की जानकारी में आये बिना किया।

বলভদ্র ভট্টাচার্য রহে মাত্র সঙ্গে ।
ঝারিখণ্ড-পথে কাশী আইলা মহা-রঙ্গে ॥২৩৮॥

बलभद्र भट्टाचार्य्र रहे मात्र सङ्गे ।
झारिखण्ड-पथे काशी आइला महा-रङ्गे ॥ २३८॥

बलभद्र भट्टाचार्य्र—बलभद्र भट्टाचार्य; **रहे**—रहे; **मात्र**—केवल; **सङ्गे**—उनके साथ; **झारि-खण्ड-पथे**—झारिखण्ड (मध्य प्रदेश) के रास्ते; **काशी**—काशी (बनारस) में; **आइला**—पहुँचे; **महा-रङ्गे**—अत्यन्त हर्ष सहित।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु जगन्नाथ पुरी से वृन्दावन के लिए चले, तब उनके साथ केवल बलभद्र भट्टाचार्य थे। इस तरह वे मार्ग में झारखण्ड होते हुए बड़ी प्रसन्नतापूर्वक बनारस (वाराणसी) पहुँचे।

दिन चार काशीते रहि' गेला वृन्दावन ।
मथुरा देखिया देखे द्वादश कानन ॥ २३९॥

दिन चार काशीते रहि' गेला वृन्दावन ।
मथुरा देखिया देखे द्वादश कानन ॥ २३९॥

दिन चार—केवल चार दिन; **काशीते**—बनारस में ; **रहि'**—रहकर; **गेला**—चल पड़े; **वृन्दावन**—वृन्दावन तीर्थस्थान के लिए; **मथुरा**—मथुरा तीर्थस्थान; **देखिया**—देखने के बाद; **देखे**—देखे; **द्वादश**—बारह; **कानन**—वन।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु बनारस में केवल चार दिन रहे और फिर वृन्दावन के लिए चल पड़े। मथुरा नगरी देखने के बाद उन्होंने बारह वन देखे।

तात्पर्य

आज भी जो लोग वृन्दावन जाते हैं, वे सामान्यतया उन बारह स्थानों को देखते हैं, जो द्वादश वन कहलाते हैं। वे मथुरा से चलते हैं जहाँ काम्यवन है। वहाँ से वे तालवन, तमालवन, मधुवन, कुसुमवन, भाण्डीरवन, बिल्ववन, भद्रवन, खदिरवन, लोहवन, कुमुदवन तथा गोकुल महावन जाते हैं।

लीला-स्थल देखि' प्रेमे हइला अस्थिर ।
बलभद्र कैल ताँरे मथुरार बाहिर ॥ २४०॥

लीला-स्थल देखि' प्रेमे हइला अस्थिर ।
बलभद्र कैल ताँरे मथुरार बाहिर ॥ २४०॥

लीला-स्थल—भगवान् कृष्ण की लीलाओं के सभी पावन स्थल; **देखि'**—देखकर; **प्रेमे**—अत्यन्त प्रेमावेश में; **हइला**—हो गये; **अस्थिर**—अस्थिर, विह्वल; **बलभद्र**—बलभद्र ने; **कैल**—सहायता की; **ताँरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु की; **मथुरार**—मथुरा नगर के; **बाहिर**—बाहर।

अनुवाद

श्रीकृष्ण की बारहों लीलास्थलियाँ देखकर श्री चैतन्य महाप्रभु भावावेश के कारण अत्यधिक विह्वल हो उठे। उन्हें बलभद्र भट्टाचार्य किसी तरह मथुरा से बाहर ले गये।

গঙ্গা-তীর-পথে লঞা প্রয়াগে আইলা ।
শ্রী-রূপ আসি' প্রভুকে তথাই মিলিলা ॥২৪১॥

গঙ্গা-তীর-পথে লঞা প্রয়াগে আইলা ।
শ্রী-রূপ আসি' প্রভুকে তথাই মিলিলা ॥ ২৪১ ॥

গঙ্গা-তীর-পথে—গংগা-तट का पथ; **লঞা**—लेकर; **প্রয়াগে**—इलाहाबाद में; **আইলা**—आये; **শ্রী-রূপ**—श्री रूप गोस्वामी; **আসি'**—वहाँ आकर; **প্রভুকে**—श्री चैतन्य महाप्रभु को; **তথাই**—वहाँ; **মিলিলা**—मिले।

अनुवाद

मथुरा छोड़ने के बाद महाप्रभु गंगा नदी के किनारे-किनारे चलने लगे और अन्त में प्रयाग (इलाहबाद) नामक पवित्र स्थान पर आ पहुँचे। यहीं पर श्रील रूप गोस्वामी आकर महाप्रभु से मिले।

দণ্ডবৎকরি' রূপ ভূমিতে পড়িলা ।
পরম আনন্দে প্রভু আলিঙ্গন দিলা ॥২৪২॥

দণ্ডবৎকরি' রূপ ভূমিতে পড়িলা ।
পরম আনন্দে প্রভু আলিঙ্গন দিলা ॥ ২৪২ ॥

দণ্ডবৎ করি'—दण्डवत् प्रणाम करके; **রূপ**—श्रील रूप गोस्वामी; **ভূমিতে**—भूमि पर; **পড়িলা**—गिर गये; **পরম**—परम; **আনন্দে**—आनन्द में; **প্রভু**—महाप्रभु ने; **আলিঙ্গন**—आलिंगन; **দিলা**—किया।

अनुवाद

प्रयाग में रूप गोस्वामी ने आकर महाप्रभु को दण्डवत् प्रणाम किया और महाप्रभु ने बड़ी प्रसन्नतापूर्वक उनका आलिंगन किया।

শ্রী-রূপে শিক্ষা করাই' পাঠাইলা বৃন্দাবন ।
আপনে করিলা বারাণসী আগমন ॥২৪৩॥

শ্রী-রূপে শিক্ষা করাঞ' পাঠাইলা বৃন্দাবন ।
আপনে করিলা বারাণসী আগমন ॥ ২৪৩ ॥

শ্রী-রূপে শিক্ষা করাঞ'—श्रील रूप गोस्वामी को शिक्षा देकर; **পাঠাইলা**—भेजे;

वृन्दावन—वृन्दावन की ओर; **आपने**—स्वयं; **करिला**—किया; **वाराणसी**—बनारस को; **आगमन**—आगमन।

अनुवाद

प्रयाग में दशाश्वमेध घाट पर श्रील रूप गोस्वामी को शिक्षा देने के बाद चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें वृन्दावन जाने का आदेश दिया। तत्पश्चात् महाप्रभु वाराणसी लौट आये।

काशीते प्रभुके आसि' मिलिला सनातन ।
दुइ मास रहि' ताँरे कराइला शिक्षण ॥२४४॥

काशीते प्रभुके आसि' मिलिला सनातन ।
दुइ मास रहि' ताँरे कराइला शिक्षण ॥ २४४॥

काशीते—वाराणसी में; **प्रभुके**—महाप्रभु; **आसि'**—पहुँचकर; **मिलिला**—मिले; **सनातन**—सनातन गोस्वामी; **दुइ**—दो; **मास**—मास; **रहि'**—रहकर; **ताँरे**—उनको; **कराइला**—किया; **शिक्षण**—उपदेश।

अनुवाद

जब चैतन्य महाप्रभु वाराणसी आये, तो वहाँ उनसे सनातन गोस्वामी मिले। महाप्रभु वहाँ दो मास तक रहे और सनातन गोस्वामी को पूरी तरह से शिक्षा दी।

मथुरा पाठाइला ताँरे दिया भक्ति-बल ।
सन्न्यासीरे कृपा करि' गेला नीलाचल ॥२४५॥

मथुरा पाठाइला ताँरे दिया भक्ति-बल ।
सन्न्यासीरे कृपा करि' गेला नीलाचल ॥ २४५॥

मथुरा—मथुरा को; **पाठाइला**—भेजे; **ताँरे**—उनको; **दिया**—देकर; **भक्ति-बल**—भक्ति की शक्ति; **सन्न्यासीरे**—मायावादी संन्यासियों पर; **कृपा**—कृपा; **करि'**—करके; **गेला**—लौट गये; **नीलाचल**—जगन्नाथ पुरी को।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी को पूरी तरह शिक्षित करके श्री चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें भक्ति की शक्ति देकर मथुरा भेज दिये। बनारस में उन्होंने मायावादी

संन्यासियों पर भी कृपा की। तत्पश्चात् वे नीलाचल (जगन्नाथ पुरी) लौट गये।

ছয় বত্সর ঐছে প্রভু করিলা বিলাস ।
কভু ইতি-উতি, কভু ক্ষেত্র-বাস ॥২৪৬॥

छय वत्सर ऐछे प्रभु करिला विलास ।
कभु इति-उति, कभु क्षेत्र-वास ॥ २४६ ॥

छय वत्सर—छः वर्ष; **ऐछे**—इस प्रकार; **प्रभु**—महाप्रभु; **करिला**—की; **विलास**—लीलाएँ; **कभु**—कभी-कभी; **इति-उति**—इधर-उधर; **कभु**—कभी; **क्षेत्र-वास**—जगन्नाथ पुरी में रहकर।

अनुवाद

महाप्रभु छः वर्षों तक सारे भारत में भ्रमण करते रहे। वे अपनी दिव्य लीलाएँ सम्पन्न करते हुए कभी इधर तो कभी उधर रहते और कभी वे जगन्नाथ पुरी में रहते।

আনন্দে ভক্ত-সঙ্গে সদা কীর্তন-বিলাস ।
জগন্নাথ-দরশন, প্রেমের বিলাস ॥২৪৭॥

आनन्दे भक्त-सङ्गे सदा कीर्तन-विलास ।
जगन्नाथ-दरशन, प्रेमेर विलास ॥ २४७ ॥

आनन्दे—अत्यन्त प्रसन्न होकर; **भक्त-सङ्गे**—भक्तों के साथ; **सदा**—सदा; **कीर्तन**—कीर्तन; **विलास**—आनन्द; **जगन्नाथ**—भगवान् जगन्नाथ; **दरशन**—दर्शन करके; **प्रेमेर**—प्रेमरूपी; **विलास**—लीलाएँ।

अनुवाद

जगन्नाथ पुरी में रहते हुए महाप्रभु संकीर्तन करने और भाव-विभोर होकर जगन्नाथ मन्दिर का दर्शन करने में अपना समय प्रसन्नतापूर्वक बिताते रहे।

মধ্য-লীলার কৈলুঁ এই সূত্র-বিবরণ ।
অন্ত্য-লীলার সূত্র এবে শুন, ভক্ত-গণ ॥২৪৮॥

मध्य-लीलार कैलुँ एइ सूत्र-विवरण ।
अन्त्य-लीलार सूत्र एबे शुन, भक्त-गण ॥ २४८ ॥

मध्य-लीलार—मध्यलीला के, उनकी लीलाओं का मध्य भाग; **कैलुँ**—मैंने किया है; **एइ**—यह; **सूत्र**—सारांश; **विवरण**—विवरण; **अन्त्य-लीलार**—अन्तिम लीलाओं का, अन्त्यलीला नामक; **सूत्र**—सारांश; **एबे**—अब; **शुन**—सुनो; **भक्त-गण**—हे भक्तों।

अनुवाद

इस प्रकार मैंने महाप्रभु की मध्यलीला का सारांश दिया है। हे भक्तों, कृपया अब महाप्रभु की अन्तिम लीला का सारांश सुनो, जो अन्त्यलीला कहलाती है।

বৃন্দাবন হৈতে যদি নীলাচলে আইলা ।
আঠার বর্ষ তাহাঁ বাস, কাহাঁ নাহি গেলা ॥২৪৯॥

वृन्दावन हैते यदि नीलाचले आइला ।
आठार वर्ष ताहाँ वास, काहाँ नाहि गेला ॥ २४९ ॥

वृन्दावन हैते—वृन्दावन से; **यदि**—यद्यपि; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी को; **आइला**—लौट आये; **आठार**—अठराह; **वर्ष**—वर्ष; **ताहाँ**—वहाँ, जगन्नाथ पुरी में; **वास**—निवास; **काहाँ**—कहीं भी; **नाहि**—नहीं; **गेला**—गये।

अनुवाद

जब महाप्रभु वृन्दावन से लौटकर जगन्नाथ पुरी आ गये, तो वे वहीं पर रहे और अठारह वर्षों तक कहीं नहीं गये।

প্রতিবর্ষ আইসেন তাহাঁ গৌড়ের ভক্ত-গণ ।
চারি মাস রহে প্রভুর সঙ্গে সম্মিলন ॥২৫০॥

प्रतिवर्ष आइसेन ताहाँ गौड़ेर भक्त-गण ।
चारि मास रहे प्रभुर सङ्गे सम्मिलन ॥ २५० ॥

प्रतिवर्ष—प्रतिवर्ष; **आइसेन**—मिलने आते; **ताहाँ**—वहाँ; **गौड़ेर**—बंगाल के; **भक्त-गण**—सारे भक्त; **चारि**—चार; **मास**—मास; **रहे**—रहे; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु; **सङ्गे**—के संग; **सम्मिलन**—मिलकर।

अनुवाद

इन अठारह वर्षों में बंगाल के सारे भक्त प्रतिवर्ष उनसे जगन्नाथ पुरी में आकर मिलते रहे। वे वहाँ लगातार चार महीने रहते और महाप्रभु के संग का आनन्द लूटते।

निरन्तर नृत्य-गीत कीर्तन-विलास ।
आचण्डाले प्रेम-भक्ति करिला प्रकाश ॥ २५१ ॥

निरन्तर नृत्य-गीत कीर्तन-विलास ।
आचण्डाले प्रेम-भक्ति करिला प्रकाश ॥ २५१ ॥

निरन्तर—निरन्तर; **नृत्य-गीत**—नाचते गाते; **कीर्तन**—संकीर्तन का; **विलास**—आनन्द; **आ-चण्डाले**—प्रत्येक को, नीचतम को भी; **प्रेम-भक्ति**—प्रेमभक्ति; **करिला**—की; **प्रकाश**—प्रकट।

अनुवाद

जगन्नाथ पुरी में श्री चैतन्य महाप्रभु निरन्तर कीर्तन और नृत्य करते। इस तरह उन्होंने संकीर्तन-लीला के आनन्द का आस्वादन किया। वे सब पर, यहाँ तक कि नीच से नीच व्यक्ति (चाण्डाल) पर भी, अपनी अहैतुकी कृपा अर्थात् शुद्ध भगवत्प्रेम प्रकट करते।

पण्डित-गोसाञि कैल नीलाचले वास ।
वक्रेश्वर, दामोदर, शङ्कर, हरिदास ॥ २५२ ॥

पण्डित-गोसाञि कैल नीलाचले वास ।
वक्रेश्वर, दामोदर, शङ्कर, हरिदास ॥ २५२ ॥

पण्डित-गोसाञि—गदाधर पण्डित; **कैल**—किया; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी में; **वास**—निवास; **वक्रेश्वर**—वक्रेश्वर; **दामोदर**—दामोदर पण्डित; **शङ्कर**—शंकर; **हरिदास**—हरिदास ठाकुर।

अनुवाद

जगन्नाथ पुरी में चैतन्य महाप्रभु के साथ रहने वालों में पण्डित गोसांइ तथा अन्य भक्त यथा वक्रेश्वर, दामोदर, शंकर तथा हरिदास ठाकुर थे।

জগদানন্দ, ভগবান্, গোবিন্দ, কাশীশ্বর ।
পরমানন্দ-পুরী, আর স্বরূপ-দামোদর ॥২৫৩॥

জগদানন্দ, ভগবান্, গোবিন্দ, কাশীশ্বর ।
পরমানন্দ-পুরী, আর স্বরূপ-দামোদর ॥ ২৫৩ ॥

জগদানন্দ—জগদানন্দ; **ভগবান্**—ভগবান; **গোবিন্দ**—গোবিন্দ; **কাশীশ্বর**—কাশীশ্বর; **পরমানন্দ-পুরী**—পরমানন্দ পুরী; **আর স্বরূপ-দামোদর**—और स्वरूप दामोदर, उनके सचिव।

अनुवाद

महाप्रभु के साथ जो अन्य भक्त रह रहे थे, उनके नाम थे—जगदानन्द, भगवान, गोविन्द, काशीश्वर, परमानन्द पुरी तथा स्वरूप दामोदर।

ক্ষেত্র-বাসী রামানন্দ রায় প্রভৃতি ।
প্রভু-সঙ্গে এই সব কৈল নিত্য-স্থিতি ॥২৫৪॥

ক্ষেত্র-বাসী রামানন্দ রায় প্রভৃতি ।
প্রভু-সঙ্গে এই সব কৈল নিত্য-স্থিতি ॥ ২৫৪ ॥

क्षेत्र-वासी—जगन्नाथ पुरी के निवासी; **रामानन्द राय**—रामानन्द राय; **प्रभृति**—तथा अन्य; **प्रभु-सङ्गे**—महाप्रभु के संग; **एइ सब**—वे सब; **कैल**—किया; **नित्य-स्थिति**—स्थायी निवास।

अनुवाद

श्री रामानन्द राय तथा जगन्नाथ पुरी के निवासी अन्य भक्तगण भी महाप्रभु के साथ स्थायी रूप से रहते थे।

অদ্বৈত, নিত্যানন্দ, মুকুন্দ, শ্রীবাস ।
বিদ্যানিধি, বাসুদেব, মুরারি,—যত দাস ॥২৫৫॥
প্রতিবর্ষে আইসে সঙ্গে রহে চারি-মাস ।
তাঁ-সবা লঞা প্রভুর বিবিধ বিলাস ॥২৫৬॥

অদ্বৈত, নিত্যানন্দ, মুকুন্দ, শ্রীবাস ।
বিদ্যানিধি, বাসুদেব, মুরারি,—যত দাস ॥ ২৫৫ ॥

प्रतिवर्षे आइसे सङ्गे रहे चारि-मास ।
ताँ-सबा लञा प्रभुर विविध विलास ॥ २५६ ॥

अद्वैत—अद्वैत; **नित्य· ·द**—नित्यानन्द; **मुकुन्द**—मुकुन्द; **श्रीवास**—श्रीवास; **विद्यानिधि**—विद्यानिधि; **वासुदेव**—वासुदेव; **मुरारि**—मुरारि; **ग्रत दास**—महाप्रभु के सभी सेवक; **प्रतिवर्षे**—प्रतिवर्ष; **आइसे**—वहाँ जाते; **सङ्गे**—संग में; **रहे**—रहते; **चारि-मास**—चार मास; **ताँ-सबा**—उन सबको; **लञा**—लेकर; **प्रभुर**—महाप्रभु की; **विविध**—विविध; **विलास**—लीलाएँ।

अनुवाद

अन्य भक्त जिनमें अद्वैत आचार्य, नित्यानन्द प्रभु, मुकुन्द, श्रीवास, विद्यानिधि, वासुदेव तथा मुरारि प्रमुख हैं, जगन्नाथ पुरी आया करते थे और लगातार चार मास तक महाप्रभु के साथ रहा करते थे। महाप्रभु इन सबके साथ विविध लीलाओं का आनन्द लेते थे।

हरिदासेर सिद्धि-प्राप्ति,—अद्भुत से सब ।
आपनि महाप्रभु ग्राँर कैल महोत्सव ॥ २५७ ॥

हरिदासेर—ठाकुर हरिदास का; **सिद्धि-प्राप्ति**—तिरोभाव पर; **अद्भुत**—अद्भुत; **से**—वे; **सब**—सभी घटनाएँ; **आपनि**—स्वयं; **महाप्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **ग्राँर**—जिनका; **कैल**—किया; **महा-उत्सव**—महोत्सव।

अनुवाद

जगन्नाथ पुरी में हरिदास ठाकुर ने देह त्याग किया। यह घटना अत्यन्त अद्भुत थी, क्योंकि स्वयं महाप्रभु ने हरिदास ठाकुर के तिरोभाव के उपलक्ष्य में उत्सव मनाया।

तबे रूप-गोसाञिर पुनरागमन ।
ताँहार हृदये कैल प्रभु शक्ति-सञ्चारण ॥ २५८ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **रूप-गोसाञि**—श्रील रूप गोस्वामी का; **पुनः-आगमन**—वहाँ पुनरागमन; **ताँहार**—उनके; **हृदये**—हृदय में; **कैल**—किया; **प्रभु**—महाप्रभु ने; **शक्ति-सञ्चारण**—दिव्य शक्ति का संचारण।

अनुवाद

श्रील रूप गोस्वामी जगन्नाथ पुरी में महाप्रभु से पुनः मिले। महाप्रभु ने उनके हृदय में समस्त दिव्य शक्ति संचारित कर दी।

तबे छोट हरिदासे प्रभु कैल दण्ड ।
दामोदर-पण्डित कैल प्रभुके वाक्य-दण्ड ॥२५९॥

तबे छोट हरिदासे प्रभु कैल दण्ड ।
दामोदर-पण्डित कैल प्रभुके वाक्य-दण्ड ॥ २५९ ॥

तबे—तत्पश्चात्; **छोट हरिदासे**—छोटा हरिदास को; **प्रभु**—महाप्रभु ने; **कैल**—दी; **दण्ड**—सजा; **दामोदर-पण्डित**—दामोदर पण्डित; **कैल**—किया; **प्रभुके**—महाप्रभु को; **वाक्य-दण्ड**—चेतावनी के रूप में सजा।

अनुवाद

इसके बाद महाप्रभु ने छोटे हरिदास को दण्ड दिया और दामोदर पण्डित ने महाप्रभु को कुछ चेतावनी दी।

तात्पर्य

वास्तव में दामोदर पण्डित महाप्रभु के नित्य दास थे। वे महाप्रभु को कभी भी दण्ड नहीं दे सकते थे, न ही उनकी ऐसी इच्छा थी, किन्तु उन्होंने महाप्रभु को कुछ चेतावनी अवश्य दी जिससे अन्य लोग उनकी निन्दा न कर सकें। हाँ, उन्हें यह जान लेना चाहिए था कि महाप्रभु पूर्ण पुरुषोत्तम भगवान् हैं और कुछ भी करने के लिए स्वतंत्र हैं। उन्हें आगाह करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। अतएव दामोदर पण्डित की इस कार्यवाही को उन्नत भक्तगण अधिक उचित नहीं मानते।

तबे सनातन-गोसाञिर पुनरागमन ।
जैष्ठ-मासे प्रभु ताँरे कैल परीक्षण ॥२६०॥

तबे सनातन-गोसाञि पुनरागमन ।
ज्यैष्ठ-मासे प्रभु ताँरे कैल परीक्षण ॥ २६०॥

तबे—तब; **सनातन-गोसाञि**—सनातन गोस्वामी का; **पुनः-आगमन**—पुनरागमन; **ज्यैष्ठ-मासे**—ज्येष्ठ (मई-जून) मास में; **प्रभु**—प्रभु; **ताँरे**—उनका; **कैल**—किया; **परीक्षण**—परीक्षा।

अनुवाद

इसके बाद सनातन गोस्वामी पुनः चैतन्य महाप्रभु से मिले और महाप्रभु ने ज्येष्ठ मास की झुलसाने वाली गर्मी में उनकी परीक्षा ली।

तुष्ट हञा प्रभु ताँरे पाठाइला वृन्दावन ।
अद्वैतेर हस्ते प्रभुर अद्भुत भोजन ॥ २६१॥

तुष्ट हञा प्रभु ताँरे पाठाइला वृन्दावन ।
अद्वैतेर हस्ते प्रभुर अद्भुत भोजन ॥ २६१॥

तुष्ट हञा—अत्यन्त प्रसन्न होकर; **प्रभु**—चैतन्य महाप्रभु; **ताँरे**—उनको; **पाठाइला**—वापस भेजे; **वृन्दावन**—वृन्दावन को; **अद्वैतेर**—अद्वैत आचार्य के; **हस्ते**—हाथों से; **प्रभुर**—महाप्रभु का; **अद्भुत**—अद्भुत; **भोजन**—भोजन।

अनुवाद

प्रसन्न होकर महाप्रभु ने सनातन गोस्वामी को पुनः वृन्दावन भेज दिये। इसके बाद महाप्रभु ने श्री अद्वैत आचार्य के हाथों से अद्भुत भोजन किया।

नित्यानन्द-सङ्गे युक्ति करिया निभृते ।
ताँरे पाठाइला गौड़े प्रेम प्रचारिते ॥२६२॥

नित्यानन्द-सङ्गे युक्ति करिया निभृते ।
ताँरे पाठाइला गौड़े प्रेम प्रचारिते ॥ २६२॥

नित्यानन्द-सङ्गे—नित्यानन्द प्रभु के साथ; **युक्ति**—चर्चा; **करिया**—करके; **निभृते**—गुप्त रूप से; **ताँरे**—उनको; **पाठाइला**—भेजा; **गौड़े**—बंगाल; **प्रेम**—भगवत्-प्रेम का; **प्रचारिते**—प्रचार करने के लिए।

अनुवाद

सनातन गोस्वामी को वृन्दावन पुनः भेजने के बाद महाप्रभु ने श्री नित्यानन्द प्रभु से एकान्त में परामर्श किया। तत्पश्चात् उन्होंने भगवत्-प्रेम का प्रचार करने के लिए उन्हें बंगाल भेज दिये।

তবে ত' বল্লভ ভট্ট প্রভুরে মিলিলা ।
কৃষ্ণ-নামের অর্থ প্রভু তাঁহারে কহিলা ॥২৬৩॥

तबे त' वल्लभ भट्ट प्रभुरे मिलिला ।
कृष्ण-नामेर अर्थ प्रभु ताँहारे कहिला ॥ २६३ ॥

तबे त'—तत्पश्चात्; **वल्लभ भट्ट**—वल्लभ भट्ट; **प्रभुरे**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **मिलिला**—मिले; **कृष्ण-नामेर**—कृष्ण के पावन नाम का; **अर्थ**—अर्थ; **प्रभु**—महाप्रभु; **ताँहारे**—उनको; **कहिला**—समझाया।

अनुवाद

इसके तुरन्त बाद वल्लभ भट्ट महाप्रभु से जगन्नाथ पुरी में मिले और महाप्रभु ने उन्हें पवित्र कृष्ण-नाम का अर्थ बतलाया।

तात्पर्य

वल्लभ भट्ट पश्चिम भारत में वल्लभाचार्य-सम्प्रदाय के नाम से प्रसिद्ध वैष्णव संप्रदाय के प्रमुख हैं। *चैतन्य-चरितामृत* की अन्त्यलीला के सातवें अध्याय में और मध्यलीला के उन्नीसवें अध्याय में वल्लभ आचार्य के विषय में लम्बी कथा दी हुई है। श्री चैतन्य महाप्रभु प्रयाग के उस पार आड़ाइल ग्राम नामक स्थान में वल्लभ आचार्य के घर गये थे। बाद में वल्लभ भट्ट *श्रीमद्भागवत* पर लिखी गई अपनी टीका की व्याख्या करने चैतन्य महाप्रभु के पास जगन्नाथ पुरी गये। उन्हें अपनी कृतियों पर बड़ा गर्व था, किन्तु श्री चैतन्य महाप्रभु ने उन्हें समझाया कि वैष्णव को विनीत होना चाहिए और अपने पूर्ववर्ती आचार्यों के पदचिह्नों का अनुसरण करना चाहिए। महाप्रभु ने उनसे कहा कि उनका स्वयं को श्रीधर स्वामी से श्रेष्ठ समझना एक वैष्णव के लिए कदापि शोभनीय नहीं है।

प्रद्युम्न मिश्रेरे प्रभु रामानन्द-स्थाने ।
कृष्ण-कथा शुनाइल कहि' ताँर गुणे ॥२६४॥

प्रद्युम्न मिश्रेरे प्रभु रामानन्द-स्थाने ।
कृष्ण-कथा शुनाइल कहि' ताँर गुणे ॥ २६४॥

प्रद्युम्न मिश्रेरे—प्रद्युम्न मिश्र; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **रामानन्द-स्थाने**—रामानन्द राय के घर पर; **कृष्ण-कथा**—भगवान् कृष्ण की कथाएँ; **शुनाइल**—सुनवाई; **कहि'**—कहकर; **ताँर**—रामानन्द राय का; **गुणे**—दिव्य गुण।

अनुवाद

रामानन्द राय के दिव्य गुणों की व्याख्या कर महाप्रभु ने प्रद्युम्न मिश्र को रामानन्द राय के घर भेजा और प्रद्युम्न मिश्र ने उनसे कृष्ण-कथा सुनी।

गोपीनाथ पट्टनायक——रामानन्द-भ्राता ।
राजा मारितेछिल, प्रभु हैल त्राता ॥२६५॥

गोपीनाथ पट्टनायक——रामानन्द-भ्राता ।
राजा मारितेछिल, प्रभु हैल त्राता ॥ २६५॥

गोपीनाथ पट्टनायक—गोपीनाथ पट्टनायक; **रामानन्द-भ्राता**—श्री रामानन्द राम के भाई; **राजा**—राजा; **मारितेछिल**—मृत्यु-दण्ड के आदेश से; **प्रभु**—श्री चैतन्य महाप्रभु; **हैल**—बने; **त्राता**—उद्धारक।

अनुवाद

इसके बाद चैतन्य महाप्रभु ने रामानन्द राय के छोटे भाई गोपीनाथ पट्टनायक को राजा द्वारा दिये जाने वाले मृत्यु-दण्ड से बचाया।

रामचन्द्र-पुरी-भये भिक्षा घाटाइला ।
वैष्णवेर दुःख देखि' अर्धेक राखिला ॥२६६॥

रामचन्द्र-पुरी-भये भिक्षा घाटाइला ।
वैष्णवेर दुःख देखि' अर्धेक राखिला ॥ २६६॥

रामचन्द्र-पुरी-भये—रामचन्द्र पुरी के भय से; **भिक्षा**—भोजन का भाग; **घाटाइला**—

घटाया; **वैष्णवेर**—सभी वैष्णवों का; **दुःख**—दुःख; **देखि'**—समझकर; **अर्धेक**—आधा भाग; **राखिला**—रखा।

अनुवाद

रामचन्द्र पुरी ने महाप्रभु के भोजन की आलोचना की, अतएव उन्होंने अपना भोजन न्यूनतम कर दिया। किन्तु जब सारे वैष्णव इससे अत्यन्त दुःखी हुए, तो महाप्रभु ने उसे बढ़ाकर पहले का आधा कर दिया।

ब्रह्माण्ड-भितरे हय चौद्द भुवन ।
चौद्द-भुवने वैसे यत जीव-गण ॥२६७॥

ब्रह्माण्ड-भितरे हय चौद्द भुवन ।
चौद्द-भुवने वैसे यत जीव-गण ॥ २६७॥

ब्रह्माण्ड-भितरे—ब्रह्माण्ड के भीतर; **हय**—हैं; **चौद्द भुवन**—चौदह ग्रह मण्डल; **चौद्द-भुवने**—उन चौदह ग्रह मण्डलों में; **वैसे**—रहते हैं; **यत**—बहुत से; **जीव-गण**—जीव।

अनुवाद

इस ब्रह्माण्ड के भीतर चौदह भुवन (ग्रह मण्डल) हैं और सारे जीव इन ग्रह मण्डलों में रहते हैं।

मनुष्येर वेश धरि' यात्रिकेर छले ।
प्रभुर दर्शन करे आसि' नीलाचले ॥२६८॥

मनुष्येर वेश धरि' यात्रिकेर छले ।
प्रभुर दर्शन करे आसि' नीलाचले ॥ २६८॥

मनुष्येर—मनुष्य; **वेश धरि'**—वेशधारी; **यात्रिकेर छले**—जैसे यात्री हों; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु के; **दर्शन करे**—दर्शन करते; **आसि'**—आकर; **नीलाचले**—जगन्नाथ पुरी में।

अनुवाद

वे सभी तीर्थयात्रियों का वेश धारण करके श्री चैतन्य महाप्रभु का दर्शन करने जगन्नाथ पुरी आया करते थे।

एक-दिन श्रीवासादि यत भक्त-गण ।
महाप्रभुर गुण गाञा करेन कीर्तन ॥२६९॥

एक-दिन श्रीवासादि ग्रत भक्त-गण ।
महाप्रभुर गुण गाञा करेन कीर्तन ॥ २६९ ॥

एक-दिन—एक दिन; **श्रीवास-आदि**—श्रीवास ठाकुर आदि; **ग्रत**—सब; **भक्त-गण**—भक्तगण; **महाप्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु के; **गुण**—गुण; **गाञा**—वर्णन करते हुए; **करेन**—कर रहे थे; **कीर्तन**—कीर्तन।

अनुवाद

एक दिन श्रीवास ठाकुर इत्यादि सारे भक्त श्री चैतन्य महाप्रभु के दिव्य गुणों का कीर्तन कर रहे थे।

शुनि' भक्त-गणे कहे स-क्रोध वचने ।
कृष्ण-नाम-गुण छाड़ि, कि कर कीर्तने ॥ २७० ॥

शुनि' भक्त-गणे कहे स-क्रोध वचने ।
कृष्ण-नाम-गुण छाड़ि, कि कर कीर्तने ॥ २७० ॥

शुनि'—यह सुनकर; **भक्त-गणे**—सभी भक्तों को; **कहे**—महाप्रभु ने कहा; **स-क्रोध वचने**—क्रुद्ध होकर बोले; **कृष्ण-नाम-गुण छाड़ि**—भगवान् कृष्ण के दिव्य नाम गुणों को त्यागकर; **कि कर कीर्तने**—आप किस प्रकार का कीर्तन कर रहे हैं।

अनुवाद

अपने दिव्य गुणों का कीर्तन श्री चैतन्य महाप्रभु को अच्छा नहीं लगा। अतएव उन्होंने उन सबको डाँटा मानो वे नाराज हों। उन्होंने पूछा, "यह कैसा कीर्तन है? क्या तुम लोग भगवान् के पवित्र नाम का कीर्तन छोड़ रहे हो?"

औद्धत्य करिते हैल सबाकार मन ।
स्वतन्त्र हइया सबे नाशा'बे भुवन ॥ २७१ ॥

औद्धत्य करिते हैल सबाकार मन ।
स्वतन्त्र हइया सबे नाशा'बे भुवन ॥ २७१ ॥

औद्धत्य—धृष्टता; **करिते**—करना; **हैल**—हो गया; **सबाकार**—तुम सबका; **मन**—मन; **स्वतन्त्र**—स्वतंत्र; **हइया**—होकर; **सबे**—तुम सब; **नाशा'बे**—खराब कर दोगे; **भुवन**—सारे जगत् को।

अनुवाद

श्री चैतन्य महाप्रभु ने यह कहते हुए सबको प्रताड़ित किया कि तुम लोग स्वतन्त्र बनकर अपनी धृष्टता मत दिखलाओ और इस तरह सारे संसार का विनाश मत करो।

तात्पर्य

श्री चैतन्य महाप्रभु ने अपने सारे अनुयायियों को स्वतन्त्र या धृष्ट न बनने की चेतावनी दी। दुर्भाग्यवश, श्री चैतन्य महाप्रभु के अंतर्धान होने के बाद अनेक *अपसम्प्रदायों* (तथाकथित अनुयायियों) ने ऐसी अनेक विधियाँ खोज निकालीं, जो आचार्यों द्वारा अनुमोदित नहीं थीं। भक्तिविनोद ठाकुर ने उनके नाम इस प्रकार बतलाये हैं—आउल, बाउल, कर्ताभजा, नेड़ा, दरवेश, सानि सहजिया, सखीभेकी, स्मार्त, जात-गोसांइ, अतिवाड़ी, चूड़ाधारी तथा गौरांग नागरी।

आउल, बाउल तथा अन्य सम्प्रदायों ने आचार्यों के पदचिह्नों पर न चलकर चैतन्य महाप्रभु के दर्शन को समझने की अपनी खुद की मनगढ़ंत विधियाँ खोज निकालीं। यहाँ पर श्री चैतन्य महाप्रभु स्वयं इंगित करते हैं कि ऐसे प्रयासों से उनके सम्प्रदाय का भाव नष्ट हो जायेगा।

दश-दिके कोटी कोटी लोक हेन काले ।
जय कृष्ण-चैतन्य' बलि' करे कोलाहले ॥२७२॥

दश-दिके कोटी कोटी लोक हेन काले ।
जय कृष्ण-चैतन्य' बलि' करे कोलाहले ॥ २७२॥

दश-दिके—दस दिशाओं में; **कोटी कोटी**—लाखों पुरुष; **लोक**—लोग; **हेन काले**—इस समय; **जय कृष्ण-चैतन्य**—चैतन्य महाप्रभु की जय; **बलि'**—उच्च स्वर में बोल; **करे**—रहे हैं; **कोलाहले**—कोलाहल।

अनुवाद

जब श्री चैतन्य महाप्रभु बाह्य रूप से नाराज दिख रहे थे और अपने भक्तों को प्रताड़ित कर रहे थे, तब बाहर से हजारों भक्तों ने उच्च स्वर में पुकारा, "श्री चैतन्य महाप्रभु की जय हो!"

জয় জয় মহাপ্রভু—ব্রজেন্দ্র-কুমার ।
জগত্তারিতে প্রভু, তোমার অবতার ॥২৭৩॥

জয় জয় মহাপ্রভু—ব্রজেন্দ্র-কুমার ।
জগত্তারিতে প্রভু, তোমার অবতার ॥ ২৭৩॥

জয় জয় মহাপ্রভু—चैतन्य महाप्रभु की जय; **ব্রজেন্দ্র-কুমার**—मूलतः महाराज नन्द के पुत्र भगवान् कृष्ण; **জগত্**—सारा जगत्; **তারিতে**—उद्धार करने हेतु; **প্রভু**—महाप्रभु; **তোমার**—आपके; **অবতার**—अवतार।

अनुवाद

सारे भक्त उच्च स्वरों में कीर्तन करने लगे, "महाराज नन्द के पुत्र श्री चैतन्य महाप्रभु की जय हो! आप सारे जगत् का उद्धार करने के लिए प्रकट हुए हैं!

বহু-দূর হৈতে আইনু হঞা বড় আর্ত ।
দরশন দিয়া প্রভু করহ কৃতার্থ ॥২৭৪॥

বহু-দূর হৈতে আইনু হঞা বড় আর্ত ।
দরশন দিয়া প্রভু করহ কৃতার্থ ॥ ২৭৪॥

বহু-দূর—बहुत दूर; **হৈতে**—से; **আইনু**—हम आये हैं; **হঞা**—होकर; **বড়**—अत्यन्त; **আর্ত**—दुःखी; **দরশন**—दर्शन; **দিয়া**—देकर; **প্রভু**—हे प्रभु; **করহ**—कृपया दिखाओ (करो); **কৃত-অর্থ**—कृतार्थ।

अनुवाद

"हे प्रभु, हम बहुत दुःखी हैं। हम बहुत दूर से चलकर आपका दर्शन करने आये हैं। कृपया दयालु होकर आपकी कृपा का प्रदर्शन करें।"

শুনিয়া লোকের দৈন্য দ্রবিলা হৃদয় ।
বাহিরে আসি' দরশন দিলা দয়াময় ॥২৭৫॥

শুনিয়া লোকের দৈন্য দ্রবিলা হৃদয় ।
বাহিরে আসি' দরশন দিলা দয়াময় ॥ ২৭৫॥

শুনিয়া—सुनकर; **লোকের**—लोगों की; **দৈন্য**—दीन प्रार्थना; **দ্রবিলা**—द्रवित हो गया;

हृदय—हृदय; **बाहिरे**—बाहिर; **आसि'**—आकर; **दरशन**—दर्शन; **दिला**—दिया; **दयामय**—दयालु।

अनुवाद

जब महाप्रभु ने लोगों की विनीत याचना सुनी, तो उनका हृदय द्रवित हो उठा। अत्यन्त दयालु होने के कारण वे तुरन्त बाहर निकल आये और उन सबको दर्शन दिया।

বাহু তুলি' বলে প্রভু বল' 'হরি' 'হরি' ।
উঠিল——শ্রী-হরি-ধ্বনি চতুর্দিক্ভরি' ॥২৭৬॥

बाहु तुलि' बले प्रभु बल' 'हरि' 'हरि' ।
उठिल——श्री-हरि-ध्वनि चतुर्दिक्भरि' ॥ २७६ ॥

बाहु तुलि'—बाँहें उठाकर; **बले**—कहा; **प्रभु**—महाप्रभु; **बल'**—बोलो; **हरि हरि**—भगवान् का पावन नाम हरि; **उठिल**—गूँज उठी; **श्री-हरि-ध्वनि**—हरि शब्द की प्रतिध्वनि; **चतुः-दिक्**—चारों दिशाओं को; **भरि'**—भरकर।

अनुवाद

अपनी दोनों बाँहें उठाकर महाप्रभु ने सबसे भगवान् हरि के पवित्र नाम का उच्च स्वर में कीर्तन करने को कहा। तुरन्त ही वहाँ हलचल मच गई और "हरि!" ध्वनि से समस्त दिशाएँ गुंजायमान हो उठीं।

প্রভু দেখি' প্রেমে লোক আনন্দিত মন ।
প্রভুকে ঈশ্বর বলি' করয়ে স্তবন ॥২৭৭॥

प्रभु देखि' प्रेमे लोक आनन्दित मन ।
प्रभुके ईश्वर बलि' करये स्तवन ॥ २७७ ॥

प्रभु देखि'—महाप्रभु को देखकर; **प्रेमे**—प्रेमावेश में; **लोक**—सभी लोग; **आनन्दित**—आनन्दित; **मन**—मन; **प्रभुके**—महाप्रभु; **ईश्वर**—ईश्वर के रूप में; **बलि'**—स्वीकार करके; **करये**—की; **स्तवन**—स्तुति।

अनुवाद

महाप्रभु का दर्शन करके सभी लोग प्रेमवश आनन्दित हो उठे। सबने महाप्रभु को भगवान् के रूप में स्वीकार किये और उनकी स्तुति की।

স্তব শুনি' প্রভুকে কহেন শ্রীনিবাস ।
ঘরে গুপ্ত হও, কেনে বাহিরে প্রকাশ ॥২৭৮॥

स्तव शुनि' प्रभुके कहेन श्रीनिवास ।
घरे गुप्त हओ, केने बाहिरे प्रकाश ॥ २७८ ॥

स्तव—स्तुति; **शुनि'**—सुनकर; **प्रभुके**—प्रभु को; **कहेन**—कहने लगे; **श्रीनिवास**—श्रीवास ठाकुर; **घरे**—घर पर; **गुप्त**—गुप्त; **हओ**—आप हैं; **केने**—क्यों; **बाहिरे**—बाहिर; **प्रकाश**—प्रकट।

अनुवाद

जब लोग इस प्रकार से महाप्रभु की स्तुति कर रहे थे, तब श्रीनिवास आचार्य ने महाप्रभु से व्यंग्यपूर्वक कहा, "आप तो घर में गुप्त रहना चाहते थे। किन्तु आपने अपने आपको बाहर क्यों प्रकट कर दिया?"

কে শিখাল এই লোকে, কহে কোন্বাত ।
ইহা-সবার মুখ ঢাক দিয়া নিজ হাত ॥২৭৯॥

के शिखाल एइ लोके, कहे कोन्बात ।
इहा-सबार मुख ढाक दिया निज हात ॥ २७९ ॥

के—कौन; **शिखाल**—सिखाया; **एइ**—ये; **लोके**—इन लोगों को; **कहे**—वे कहते हैं; **कोन्**—क्या; **बात**—बातें; **इहा**—उनके; **सबार**—सबके; **मुख**—मुख; **ढाक**—ढक दो; **दिया**—से; **निज**—अपने; **हात**—हाथ।

अनुवाद

श्रीवास ठाकुर ने आगे कहा, "इन लोगों को किसने सिखाया है? ये सब क्या कह रहे हैं? अब आप इनके मुँह अपने हाथ से बन्द कर सकते हैं।

সূর্য যৈছে উদয় করি' চাহে লুকাইতে ।
বুঝিতে না পারি তৈছে তোমার চরিতে ॥২৮০॥

सूर्य्य यैछे उदय करि' चाहे लुकाइते ।
बुझिते ना पारि तैछे तोमार चरिते ॥ २८० ॥

सूर्य्य—सूर्य; **प्रैछे**—की भाँति; **उदय**—उदय; **करि'**—होकर; **चाहे**—चाहते हैं; **लुकाइते**—छुपना; **बुझिते**—समझ; **ना**—नहीं; **पारि**—सक्षम; **तैछे**—इस प्रकार; **तोमार**—आपके; **चरिते**—चरित्र में।

अनुवाद

"यह तो उसी प्रकार है जैसे मानो सूर्य उदय होने के बाद अपने आपको छिपाना चाहे। हम आपके चरित्र (व्यवहार) के ऐसे गुणों को समझ नहीं पाते।"

प्रभु कहेन,—श्रीनिवास, छाड़ विड़म्बना ।
सबे मेलि' कर मोर कतेक लाञ्छना ॥२८१॥

प्रभु कहेन,—श्रीनिवास, छाड़ विड़म्बना ।
सबे मेलि' कर मोर कतेक लाञ्छना ॥ २८१ ॥

प्रभु—प्रभु; **कहेन**—कहते हैं; **श्रीनिवास**—प्रिय श्रीनिवास (श्रीवास ठाकुर); **छाड़**—छोड़ दो; **विड़म्बना**—ये सब मजाक; **सबे**—तुम सब; **मेलि'**—मिलकर; **कर**—करते थे; **मोर**—मुझे; **कतेक**—इतना अधिक; **लाञ्छना**—शर्मिन्दा।

अनुवाद

महाप्रभु ने उत्तर दिया, "हे श्रीनिवास, यह परिहास बन्द करो। तुम सब लोग इस प्रकार से मुझे शर्मिन्दा करने के लिए आपस में मिल गये हो।"

एत बलि' लोके करि' शुभ-दृष्टि दान ।
अभ्यन्तरे गेला, लोकेर पूर्ण हैल काम ॥२८२॥

एत बलि' लोके करि' शुभ-दृष्टि दान ।
अभ्यन्तरे गेला, लोकेर पूर्ण हैल काम ॥ २८२ ॥

एत बलि'—इस प्रकार कहकर; **लोके**—लोगों पर; **करि'**—करके; **शुभ-दृष्टि**—शुभ दृष्टि; **दान**—दान; **अभ्यन्तरे**—कमरे के भीतर; **गेला**—गये; **लोकेर**—सभी लोगों की; **पूर्ण**—पूर्ण हो गई; **हैल**—थी; **काम**—इच्छा।

अनुवाद

इस प्रकार कहकर लोगों पर कृपापूर्वक अपनी शुभ दृष्टि डालकर

महाप्रभु अपने कमरे में चले गये। इस तरह सभी लोगों की मनोकामनाएँ पूर्ण हुईं।

रघुनाथ-दास नित्यानन्द-पाशे गेला ।
चिड़ा-दधि-महोत्सव ताहाञि करिला ॥२८३॥

रघुनाथ-दास नित्यानन्द-पाशे गेला ।
चिड़ा-दधि-महोत्सव ताहाञि करिला ॥ २८३ ॥

रघुनाथ-दास—रघुनाथ दास; **नित्यानन्द**—नित्यानन्द प्रभु; **पाशे**—निकट; **गेला**—गये; **चिड़ा**—चिउड़ा; **दधि**—दही; **महोत्सव**—महोत्सव; **ताहाञि**—वहाँ; **करिला**—मनाया।

अनुवाद

इसके बाद रघुनाथ दास श्री नित्यानन्द प्रभु के पास पहुँचे और उनके आदेशानुसार उत्सव का आयोजन किया और चिउड़ा तथा दही से युक्त प्रसाद का वितरण किया।

तात्पर्य

बंगाल में एक विशेष व्यंजन होता है, जिसमें चिउड़ा को दही तथा कभी-कभी सन्देश और आम के साथ मिला देते हैं। इस अत्यन्त स्वादिष्ट भोजन को अर्चाविग्रह को भोग लगाया जाता है और फिर जन-समूह में वितरित किया जाता है। रघुनाथ दास गोस्वामी उस समय गृहस्थ थे। वे जाकर नित्यानन्द प्रभु से मिले और उनके आदेशानुसार उन्होंने दही-चिउड़ा प्रसाद का महोत्सव सम्पन्न किया।

তাঁর আজ্ঞা লঞা গেলা প্রভুর চরণে ।
প্রভু তাঁরে সমর্পিলা স্বরূপের স্থানে ॥২৮৪॥

তাঁর আজ্ঞা লঞা গেলা প্রভুর চরণে ।
প্রভু তাঁরে সমর্পিলা স্বরূপের স্থানে ॥ ২৮৪ ॥

তাঁর—उनकी; **आज्ञा**—आज्ञा; **लञा**—लेकर; **गेला**—गये; **प्रभुर**—चैतन्य महाप्रभु के; **चरणे**—चरणकमल; **प्रभु**—महाप्रभु; **तारे**—उन्हें; **समर्पिला**—सौंप दिया; **स्वरूपेर**—स्वरूप दामोदर के; **स्थाने**—पास।

अनुवाद

बाद में श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी ने अपना घर छोड़ दिया और जगन्नाथ पुरी में श्री चैतन्य महाप्रभु की शरण ली। उस समय महाप्रभु ने उन्हें स्वीकार किया और आध्यात्मिक उन्नति के लिए स्वरूप-दामोदर के संरक्षण में सौंप दिया।

तात्पर्य

इस सन्दर्भ में श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी *विलाप कुसुमांजलि* (५) में लिखते हैं :

यो मां दुस्तरगेहनिर्जलमहाकूपाद् अपारक्लमात्
सद्यः सान्द्र-दयाम्बुधिः प्रकृतितः स्वैरीकृपारज्जुभिः।
उद्धृत्यात्मसरोजनिन्दिचरणप्रान्तं प्रपद्य स्वयं
श्रीदामोदरसाच्चकार तमहं चैतन्यचन्द्रं भजे॥

"मैं उन श्री चैतन्य महाप्रभु के चरणकमलों में सादर नमस्कार करता हूँ, जिन्होंने अपनी अपार करुणा से मुझे उस गृहस्थ जीवन से बचा लिया, जो जलरहित अंधे कुएँ के तुल्य है और मुझे स्वरूप दामोदर गोस्वामी के संरक्षण रूपी दिव्य आनन्द के सागर में स्थान दिया।"

ब्रह्मानन्द-भारतीर घुचाइल चर्माम्बर ।
एइ मत लीला कैल छय वत्सर ॥ २८५॥

ब्रह्मानन्द-भारतीर घुचाइल चर्माम्बर ।
एइ मत लीला कैल छय वत्सर ॥ २८५॥

ब्रह्मानन्द-भारतीर—ब्रह्मानन्द भारती के; **घुचाइल**—बन्द करवाया; **चर्म-अम्बर**—चर्म के वस्त्र; **एइ मत**—इस प्रकार; **लीला**—लीलाएँ; **कैल**—कीं; **छय वत्सर**—छः वर्ष।

अनुवाद

बाद में श्री चैतन्य महाप्रभु ने ब्रह्मानन्द भारती का मृगचर्म पहनने की आदत को बन्द करवाया। इस प्रकार महाप्रभु छः वर्षों तक निरन्तर अपनी लीलाएँ करते हुए अनेक प्रकार के दिव्य आनन्द का अनुभव करते रहे।

এই ত' কহিল মধ্য-লীলার সূত্র-গণ ।
শেষ দ্বাদশ বত্সরের শুন বিবরণ ॥২৮৬॥

এइ त' कहिल मध्य-लीलार सूत्र-गण ।
शेष द्वादश वत्सरेर शुन विवरण ॥ २८६ ॥

एइ त'—इस प्रकार; **कहिल**—वर्णन किया; **मध्य-लीलार**—मध्य लीलाओं का; **सूत्र-गण**—रूपरेखा; **शेष**—शेष; **द्वादश**—बारह; **वत्सरेर**—वर्षों का; **शुन**—सुनो; **विवरण**—विवरण।

अनुवाद

इस तरह मैंने मध्यलीला का सारांश कह दिया है। अब कृपा करके महाप्रभु द्वारा अन्तिम बारह वर्षों में सम्पन्न की गई लीलाओं को सुनें।

तात्पर्य

इस प्रकार श्रील कविराज गोस्वामी ठीक ठीक श्री व्यासदेव के चरणचिह्नों पर चलते हुए *श्री चैतन्य-चरितामृत* की लीलाओं का सारांश प्रस्तुत करते हैं। उन्होंने प्रत्येक स्कंध के अन्त में ऐसा ही विवरण दिया है। *आदिलीला* में उन्होंने महाप्रभु के बाल्यकाल की पाँच अवस्थाओं की लीलाओं की रूपरेखा दी है और उसका विस्तार श्रील वृन्दावन दास ठाकुर के लिए छोड़ दिया है। अब इस अध्याय में उन लीलाओं का सारांश दिया गया है, जो महाप्रभु के जीवन के अन्तिम काल में सम्पन्न हुईं। ये *मध्यलीला* तथा *अन्त्यलीला* में वर्णित हैं। शेष लीलाएँ *मध्यलीला* के द्वितीय अध्याय में सूत्र-रूप में वर्णित हैं। इस तरह लेखक ने क्रमशः *मध्यलीला* तथा *अन्त्यलीला* दोनों का वर्णन कर दिया है।

শ্রী-রূপ-রঘুনাথ-পদে যার আশ ।
চৈতন্য-চরিতামৃত কহে কৃষ্ণদাস ॥২৮৭॥

श्री-रूप-रघुनाथ-पदे यार आश ।
चैतन्य-चरितामृत कहे कृष्णदास ॥ २८७ ॥

श्री-रूप—श्रील रूप गोस्वामी; **रघुनाथ**—श्रील रघुनाथ दास गोस्वामी; **पदे**—चरणकमलों पर; **यार**—जिनकी; **आश**—आशा; **चैतन्य-चरितामृत**—*चैतन्य चरितामृत* ग्रंथ; **कहे**—वर्णन करता है; **कृष्णदास**—श्रील कृष्णदास कविराज गोस्वामी।

अनुवाद

श्री रूप तथा श्री रघुनाथ के चरणकमलों की वन्दना करते हुए एवं सदैव उनकी कृपा की कामना करते हुए मैं कृष्णदास उनके चरणचिह्नों पर चलते हुए *श्री चैतन्य-चरितामृत* का वर्णन कर रहा हूँ।

इस प्रकार श्रीचैतन्य-चरितामृत की मध्यलीला के प्रथम अध्याय का, जिसमें श्री चैतन्य महाप्रभु की परवर्ती लीलाओं का संक्षेप में वर्णन है, भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुआ ।